सन्त-मत दर्शन

भाग ३

महाराज चरनसिंह जी

राधास्वामी सत्संग ब्यास

प्रकाशक की ओर से

'सन्त-मत दर्शन' के पहले दोनों भाग अध्यात्म के जिज्ञासुओं में बहुत लोकप्रिय हुए हैं। पाठकों की सेवा में यह तीसरा भाग प्रस्तुत है। यह हुजूर महाराज चरनसिंह जी को प्रसिद्ध पुस्तक 'क्वेस्ट फ़ार लाइट' का हिन्दी रूपान्तर है। इस भाग में सन् १९६५ से १९७१ तक के पत्र हैं। इनमें सन्तमत के सिद्धान्तों की व्याख्या तथा शब्द, नाम आदि के विवेचन के साथ ही सत्संगी के जीवन में आनेवाली विभिन्न समस्याओं का समाधान भी है।

यह अनुवाद सत्संगी बन्धु श्री रतिराम ने किया है। अनुवाद का संशोधन श्री वर्मा, श्री राजेन्द्र कुमार सेठी तथा श्री कमलकुमार ने किया है। पुस्तक के प्रथम संस्करण का प्रकाशन व प्रूफ रीडिंग भी श्री राजेन्द्रकुमार सेठी के निर्देशन में हुआ। संशोधित संस्करण का प्रकाशन श्री राजेन्द्रपाल प्रेमी की देख-रेख में हुआ है। हम इन सभी सज्जनों के आभारी हैं।

आशा है अध्यात्म-प्रेमी पाठक इस पुस्तक के अध्ययन से परमार्थ के लिये प्रेरणा प्राप्त करेंगे।

नवम्बर, १९८५.
डेरा बाबा जैमलसिंह
(पंजाब)

एस. एल. सोंधी,
सेक्रेटरी,
राधास्वामी सत्संग व्यास

पत्रों में से उद्धरण

(१)

मुझे यह जानकर खुशी हुई कि आप सत्य और हकीकत के सच्चे खोजी हैं। जिनके अन्तर में परमात्मा ने अपने प्रेम की ज्योति जगा दी है, वे व्यक्ति धन्य हैं। एक सच्चे जिज्ञासु के मार्ग में भोजन कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिये। कई लोग शाकाहारी भोजन अपना चुके हैं, और उनका स्वास्थ्य पहले से बहुत अच्छा हो गया है। जब आप को ऐसा लगे कि अपना शेष जीवन आप मांसाहार तथा मदिरा-पान के बिना बिता सकते हैं, तब आप नामदान के लिये अपने प्रतिनिधि की मार्फ़त निवेदन कर सकते हैं।

(२)

नामदान लेने वाले के लिये सबसे पहली और सबसे जरूरी बात यह है कि वह मनुष्य-जीवन के महत्व को तथा उस वास्तविक महान उद्देश्य को जिसके लिए परमात्मा ने हमें मनुष्य शरीर का यह दुर्लभ उपहार प्रदान किया है, महसूस करे। कभी-कभी लाखों युगों तक निचली योनियों में, जहाँ परमात्मा का ज्ञान प्राप्त होना सम्भव नहीं है, जीवन व्यतीत करने के बाद आत्मा को मनुष्य-जन्म मिलता है। अनन्त धाम में वापस पहुँचने की योग्यता और दात मनुष्य को ही दी गयी है।

अब आपको अभ्यास की विधि बता दी गई है। इसलिये आप प्रतिदिन पूरा समय भजन में लगायें। इस के अलावा मन जब भी

खाली हो उसे पांच पवित्र नामों के सुमिरन में लगाये रखने की कोशिश करें। हमारा मन परमात्मा के प्रेम में पूरी तरह भीग जाना चाहिये।

आपने जो दृश्य देखा, वह प्रभु की दया-मेहर का एक शुभ लक्षण है। जिनको नामदान मिलना निश्चित है, ऐसी भाग्यवान आत्माओं को नामदान मिलने के पहले भी कभी-कभी सतगुरु के दर्शन प्राप्त हो जाते हैं।

(३)

यद्यपि नामदान के समय आप कोई परिवर्तन महसूस नहीं कर सके, पर कुछ रूहानी सफ़र करने के बाद आपको फ़रक मालूम पड़ जायेगा। नामदान का अर्थ आत्मा के कर्मों का लेखा-जोखा काल के पास से लेकर दयाल के हाथों में सौंप देना है।

(४)

आप मि. वीकली को उनके नये कर्तव्यों के पालन में शौक से सहायता प्रदान कर सकते हैं। ये सब काम हुजूर महाराज जी (बाबा सावनसिंह जी) के हैं और हम सब उनके सेवक हैं। उनकी सेवा में हम जो कुछ भी करें, वह गहरी नम्रता, प्रेम और श्रद्धा से भरपूर होना चाहिये।

(५)

ध्यान करने के लिये अथवा शब्द सुनने के लिये कृपया किसी भी प्रकार की नशीली चीज का उपयोग न करें। अपनी आन्तरिक प्रगति के लिये किसी को ऐसी वस्तुओं का आसरा नहीं लेना चाहिये, इनके द्वारा परमात्मा का प्यार नहीं प्राप्त होता। शराब जैसी मादक वस्तुओं के समान ही नशीली दवाईयों का सेवन इस रूहानी मार्ग में बड़ी रुकावट पैदा करता है।

(६)

दिल्ली के 'रूहानी सत्संग' के बारे में जानकारी हासिल करने के सम्बन्ध में आपका पत्र मुझे प्राप्त हुआ। मैं यह पूरी तरह महसूस करता हूँ कि आप जो जानकारी चाह रहे हैं, वह सन्त-मत के रूहानी

मार्ग पर चलने के लिये बहुत ज़रूरी है। किन्तु आप इस बात में मुझ से सहमत होंगे कि इस सम्बन्ध में कोई टीका करना या कोई राय प्रकट करना मेरे लिये उचित नहीं होगा। इसलिये आप से निवेदन है कि आप स्वतन्त्र रूप से खुद ही जानकारी हासिल करें।

इस मामले में आपकी सहायता मैं डॉ. पैरी स्मिथ का पता (१७ रूटोफर, जिनेवा, स्विट्ज़रलैण्ड) देकर कर सकता हूँ। हुज़ूर महाराज बाबा सावनसिंह जी के अन्तिम दिनों में वे उनके साथ थे और उनकी आख़िरी बीमारी में उनकी चिकित्सा कर रहे थे। हुज़ूर महाराज जी ने अपने जिस वसीयतनामे के द्वारा सरदार बहादुर जगतसिंह जी को अपना उत्तराधिकारी नियुक्त किया था, उसमें एक गवाह के रूप में उन्होंने भी हस्ताक्षर किये थे। यदि आप चाहें तो अपने स्थानीय प्रतिनिधि से भी पूछताछ कर सकते हैं, जिनके पास इसकी पूरी जानकारी है, और इस विषय से सम्बन्ध रखने वाले तमाम कागज़ात भी मौजूद हैं।

मुझे आशा है कि इस बारे में अधिक कुछ लिख सकने की मेरी असमर्थता को आप समझेंगे।

(७)

आपको 'अपनी नसों में कोई खिंचाव' अथवा कोई 'रगड़ या आन्तरिक संघर्ष' क्यों महसूस होना चाहिये? भजन के वक्त आप अपनी नसों पर कभी किसी तरह का कोई तनाव या दबाव न डालें। अपना अभ्यास सहज भाव से, बिना किसी शारीरिक या मानसिक तनाव के करें। इस समय शरीर, स्नायु और मन तीनों बिलकुल शांत और सहज अवस्था में होने चाहियें। किसी प्रकार का दबाव या तनाव पैदा नहीं होने देना चाहिये। कृपया 'परमार्थी पत्र—भाग २' का अध्ययन करें, उसमें आपको अपने सब सवालों के जवाब मिल जायेंगे।

(८)

नित्य पढ़ी जाने वाली पुस्तकों में सन्त-मत की कुछ पुस्तकें रखना

एक अच्छी आदत है। इस अभ्यास से भजन के प्रति लगन तथा जोश कायम रहता है, और भक्ति और प्रेम बढ़ता है।

(९)

पाँच पवित्र नामों का सुमिरन करते समय यदि शरीर अपने आप हिल जाये तो उसकी फिक्र न करें। सुमिरन पक्का हो जाने पर शरीर का इस तरह हिलना अपने आप ही बन्द हो जायेगा। पूरी एकाग्रता होने के पहले आत्मा के ऊपर चढ़ने की प्रवृत्ति के कारण ऐसी हलचल हुआ करती है। मन को जब कोई काम न हो तो हमेशा उसे सुमिरन में लगाये रखने की कोशिश करें। ऐसा करने से नियमित भजन में बैठते समय आसानी होती है, और शीघ्र एकाग्र-चित्त होने में बड़ी मदद मिलती है।

(१०)

मन की जिस अवस्था में आपका पत्र लिखा गया है, उसे मैं अच्छी तरह समझता हूँ। जीवन में जिस परेशानी और मानसिक तनाव से आप गुज़र रही हैं, उसमें पैदा होने वाली हलचलों और परेशानियों का भी मैं कुछ हद तक अनुमान कर सकता हूँ। आप जिस गहरे अकेलेपन की शिकायत करती हैं, वह केवल आपका ही अनुभव नहीं है। ऐसा हर इन्सान के साथ होता है, खास कर आपकी उम्र के लोगों को ऐसे अकेलेपन का अनुभव या अहसास आम तौर पर होता है। मेरा अपना अनुभव है कि वे लोग भी जिनके पास इस दुनिया में सुख के सब सामान मौजूद हैं, कभी-कभी इस भावना के शिकार हो जाते हैं। इस अकेलेपन से बचने के लिये हम कई तरह के लोगों और पदार्थों के साथ सम्बन्ध जोड़ने की कोशिश करते हैं, किन्तु देर-अबेर हमें यह अहसास हो जाता है कि वास्तव में 'जग में कोई नहीं अपना।' धन-दौलत, मित्र और परिवार, सभी कुछ होते हुए भी हमें किसी न किसी चीज़ की कमी महसूस होती रहती है, और लगता है कि हम अकेले हैं, हमारा कोई साथी नहीं है।

यह अकेलापन और किसी चीज़ की कमी की भावना, वास्तव में

हमारी आत्मा की अपने मालिक से मिलने की आन्तरिक तड़प और अनबुझी छिपी प्यास है। यह उस वक्त तक बनी रहेगी, जब तक आत्मा अपने स्रोत, अपने असल धाम में पहुँचकर अपने स्वामी से मिलाप नहीं कर लेती। ऐसा होने पर ही उसे सच्ची तृप्ति और अनन्त शांति प्राप्त हो सकेगी। मनुष्य के हृदय में यह भावना विशेष उद्देश्य से रखी गई है। परमात्मा के प्रति आत्मा का यह स्वाभाविक झुकाव यदि न होता तो सुख और शान्ति प्राप्त करने के लिये शायद ही कोई मालिक की ओर मुख करता। यही भावना है जो हमें जन्म और मरण की उस तूफ़ानी धारा से; जिसमें हम सब उलझे हुए हैं, बचा सकती है।

शायद अभी इस आध्यात्मिक और रूहानी दृष्टिकोण को अपनाना आपके लिये जल्दी है। इसलिये आपको मेरी सलाह है कि 'जीवन को बहुत ज्यादा गम्भीरता से' न लें। यह संसार एक बड़ा रंगमंच है और हम सब इसमें अभिनेता या एक्टर हैं। जीवन के दौर में यह कभी न भूलें कि यह सारी जिन्दगी एक नाटक है, इसमें कोई असलियत नही। यदि हमारे मन में यह भावना हमेशा बनी रहेगी, तो हमारा समय अधिक सुख से बीत सकेगा।

मेरे विचार से, अब आप ऐसी उम्र में पहुंच चुके हैं जब अकेले ज़िन्दगी गुज़ारना कुछ कठिन होता है। इसलिये यदि आपको कोई ऐसा योग्य साथी मिल सके, जो जीवन के उतार-चढ़ाव में आपका भागीदार बन सके, तो आपको हलकापन महसूस होगा और अकेलेपन की यह भावना काफ़ी कम हो जायेगी।

मैं जानता हूँ कि लोग सलाह-मशविरा पसन्द नहीं करते और अधिकतर ये कुछ काम नहीं आते। जीवन के सबक मनुष्य हमेशा अपने खुद के अनुभवों से ही सीखता है।

जीवन के तूफ़ानों और झकोलों में परमात्मा की भक्ति दृढ़ चट्टान साबित होती है, जहाँ तूफ़ान में फँसी जीवन की नैया को ओट और शरण मिलती है। जीवन रूपी समुद्र में उठने वाले बवंडरों और तूफ़ानों

में बचाव और आश्रय का स्थान केवल प्रभु-भक्ति ही है। इसी उद्देश्य को ध्यान में रखकर मैंने आपको आध्यात्मिक विषयों पर कुछ पुस्तकें भेजी थीं।

आपका पत्र पढ़कर मुझे केवल कुछ अचरज भी हुआ। मुझे विश्वास था कि आप गहरे आत्म-विश्वास वाली एक ऐसी लड़की हैं जो जीवन की टकराहटों से आसानी से नहीं घबराती। ख़ैर, कृपया कोई चिन्ता न करें। परमात्मा सहायता, मार्ग-दर्शन और रक्षा प्रदान करने के लिये सदा आपके साथ है। अपना जीवन हँसते-हँसते बितायें और जीवन के प्रति हमेशा खुशी और सन्तोष का रुख रखें।

(११)

अपने आपकी आलोचना और अपने आपको दयनीय मानने में कृपया ज्यादा न लगे रहें। भरपूर साहस जुटाइये और नशीले द्रव्यों का उपयोग करने की बुरी आदतों पर विजय प्राप्त कीजिये। ऐसा और लोगों ने किया है, आप भी सतगुरु की दया-मेहर से अवश्य यह कर सकते हैं। एक सत्संगी को नाम-दान के समय परमात्मा के सन्मुख लिये गये वादों को कभी नहीं तोड़ना चाहिये। यदि आप ईमानदारी से ऐसा महसूस करते हैं कि जो कुछ आप कर रहे हैं, वह एक सत्संगी को नहीं करना चाहिये, तो आप खुद को अब भी सुधार सकते हैं। परमात्मा की दया-मेहर हमारी सहायता के लिये हमेशा रहती है। अपनी कमज़ोरियों को महसूस करना, उन्हें दूर करने की दिशा में उठने वाला पहला कदम है।

सत्संगों में जाने से न हिचकिचायें। ये बहुत सहायक और लाभ-प्रद सिद्ध होते हैं। चाहे मन साथ दे या न दे, अपना भजन और सुमिरन अत्यन्त नियमित ढंग से करते रहें। कर्तव्य समझ कर रोज और, चाहे आपका शरीर थके या न थके, पूरे समय तक बैठे रहें। ऐसा मानें कि आप अपने शरीर और मन को उनकी पिछली भूलों के लिये सज़ा दे रहे हैं।

परमात्मा की प्राप्ति के लिये हमें कुछ त्याग और प्रयास तो

करना ही पड़ेगा । यदि आप मानते हैं कि ये रूहानी साधन और इनका उद्देश्य कुछ माने रखते हैं तो आपको चाहिये कि दिल में पछतावे की भावना रखते हुए पूरी लगन के साथ भजन-सुमिरन में लग जायें । दृढ़ संकल्प के साथ परमात्मा के सामने आप इन बुराइयों का त्याग करने का व्रत ले लें । जो लोग खुद की सहायता करने का पक्का इरादा कर लेते हैं, परमात्मा भी उनकी मदद करता है । जब भी आप का मन खाली हो, उसे हमेशा सुमिरन में लगाये रखें, इससे आपको अनोखी सहायता प्राप्त होगी । भजन-सुमिरन करने का बीड़ा उठा लें और मंज़िल प्राप्त होने तक न रुकें । आपको परमात्मा का आशीर्वाद प्राप्त हो ।

(१२)

श्रद्धा ही वह नींव है जिस पर धर्म और आध्यात्मिक प्रगति की पूरी इमारत खड़ी होती है । परमार्थ के पेड़ की तो यह जड़ ही है । श्रद्धा के अभाव में न तो सांसारिक कलाओं में और न ही रूहानी मार्ग में कुछ प्राप्ति हो सकती है । प्रभु द्वारा भक्त को प्रदान किये जाने वाले प्रसादों में श्रद्धा या दृढ़ विश्वास ही सबसे मूल्यवान प्रसाद है । अगर सत्संगी का भजन-सुमिरन कम भी हो पर उसमें पूरी श्रद्धा और प्रेम है तो उसका रूहानी भविष्य बहुत उज्ज्वल है ।

(१३)

दान के सम्बन्ध में आपके विचार से मैं सहमत हूँ । सच्ची दान-शीलता में प्रेम और दूसरों की सहायता करने की भावना रहती है । इसका फल तुरन्त मिलता है । इससे आपको उसी वक्त ऐसा लगेगा कि आपने सच्चा दानपूर्ण कार्य किया है ।

जब आपके किसी रिश्तेदार को आपकी मदद की जरूरत हो, या जब आपको कोई ऐसा व्यक्ति मिले जो अपना गुजारा कर सकने में असमर्थ हो, अथवा कोई लँगड़ा, बहरा या गूंगा मिले जो अपनी जीविका कमाने योग्य न हो, या कोई बुद्धिमान मेहनती विद्यार्थी मिले जो आगे पढ़ने का इच्छुक हो पर धन की कमी के कारण

कर सकता हो, तो ऐसे लोगों की सहायता सबसे पहले करनी चाहिये। यह बिलकुल सत्य है कि उपकार पहले घर से प्रारम्भ होना चाहिये। किसी मित्र अथवा रिश्तेदार को मदद पहुँचाना नेक काम है।

दया और करुणा करने वालों को परमात्मा का आशीर्वाद मिलता है। दान से मन की शुद्धि होती है। इससे कभी नुकसान नहीं होता, मगर निःस्वार्थ भाव से दान करना चाहिये अर्थात इसके बदले इस लोक में या परलोक में पुरस्कार मिलने की भावना नहीं होनी चाहिये, और 'तुम्हारा दाहिना हाथ क्या देता है, इसकी ख़बर तुम्हारे बाँये हाथ तक न हो।' आप जिस ढंग से चाहें, खुशी के साथ अपने मित्र की सहायता कर सकते हैं, पर नम्रता की भावना रखते हुए।

(१४)

मुझे यह जानकर दुःख हुआ कि आपके तेरह वर्षीय पुत्र का आचरण ठीक नहीं है। किशोरावस्था में लड़कों को बहुत सावधानी और सूझबूझ के साथ संभालना चाहिये। कृपया प्यार और स्नेह के साथ उसमें अच्छी आदतें डालने की कोशिश कीजिये। जिस बुरी संगत में वह पड़ा हुआ है, उससे बाहर निकलने के लिये उसे अपने साथ अधिक रखें। चिन्ता न करें। यह याद रखें कि हमारे भाग्य का निर्माण ऊँची ताकतों द्वारा किया जाता है। अपने बच्चों के भाग्य और चरित्र को बनाने में हमारा कोई विशेष हाथ नहीं होता। जो भी उसके हित में हो उसे एक नेक माता के रूप में करने की पूरी कोशिश करें और बाकी मालिक पर छोड़ दें।

कृपया अपना भजन-सुमिरन बहुत ही नियमपूर्वक करती रहें। इस जगत में और मृत्यु के बाद भी पूर्ण शांति और आनन्द प्राप्त करने के लिये केवल यही एक-मात्र सच्चा साधन है।

(१५)

जब मैं आपके देश में था, तब मुझसे न मिलने के लिये आपका पश्चात्ताप व्यर्थ है। कृपया अनावश्यक सोच-विचार और आत्म-ग्लानि में न लगे रहें। एक सत्संगी को मृत्यु से कभी नहीं डरना चाहिये।

मुक़ाबला करने और कर्मों के कर्ज़ का प्रसन्नतापूर्वक भुगतान करने की आदत डाल लेनी चाहिये।

नामदान के लिये जिन व्यक्तियों की सिफ़ारिश की जाती है उनके कर्म सिफारिश करने वाला व्यक्ति अपने ऊपर नहीं लेता। बल्कि काल के शिकंजे मे किसी आत्मा को मुक्त करने का काम परमात्मा की निगाह् में सबसे ज्यादा महत्व रखता है।

शांति और आनन्द के लिये परमात्मा की ओर मुख मोड़ें। अपना भजन-सुमिरन नियमित रूप से करते रहें, वही समस्त सुखों का सच्चा दाता है।

(१९)

जो भी गिरजाघर आपको ठीक लगता हो, आप वहां जा सकते हैं। नामदान के समय किये गये वादों में यदि अन्तर न पड़े तो इसमें कोई हर्ज नहीं।

आराम देने वाली चीज़ें रखने में कोई नुकसान नहीं, लेकिन इन चीजों के साथ बहुत ज्यादा लगाव नहीं होना चाहिये।

(२०)

धीमी रूहानी प्रगति के बारे में आपकी शिकायत को मैं समझता हूं। कृपया याद रखें कि बड़े काम जल्दी पूरे नहीं हुआ करते। उनको हासिल करने के लिये समय और मेहनत की जरूरत होती है। हमें हर चीज की कीमत चुकानी पड़ती है। क्या हम परमात्मा की प्राप्ति के लिये आवश्यक कीमत चुकाने के लिये तैयार हैं? इस महान दात को पाने के लिये कोई भी कीमत ज्यादा नहीं है। क्या इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिये जरूरी त्याग करने को हम तैयार हैं? हम परमात्मा की प्राप्ति के साथ-साथ सांसारिक भोगों का सुख भी लेना चाहते हैं, किन्तु इन दोनों में जमीन आसमान का अन्तर है। दृढ़ इच्छा-शक्ति के साथ हमें अपनी कमजोरियों पर विजय प्राप्त करनी होगी। नियमित रूप से भजन-सुमिरन करने से यह ताकत आती है। बहुत ज्यादा आत्म-विश्लेषण करने की कोशिश न करें। अपनी कमज़ोरियों

को जानना ज़रूरी है, लेकिन हमें उनके सोच-विचार में ही नहीं उलझे रहना चाहिये।

(२१)

आप पूछते हैं कि आपके मित्र को क्यों मरना पड़ा ? उत्तर बहुत सरल है। हरएक व्यक्ति को एक दिन यह संसार छोड़ना पड़ता है। केवल मृत्यु ही निश्चित है। इसके सिवाय इस दुनिया में कुछ भी निश्चित नहीं है। मृत्यु हमारी आयु, विवेक, यौवनावस्था, प्रेम, सम्पत्ति, प्रतिष्ठा अथवा भक्ति का कोई लिहाज़ नहीं करती, और न किसी से इजाज़त लेने के लिये वह रुकती है। उसके शिकार से आप प्यार करते हैं या घृणा, इसकी उसे परवाह नहीं। ऐसी घटनाएँ हमें सचेत करती हैं, ताकि हम संसार में अपने अस्तित्व की क्षण-भंगुरता के बारे में सोच सकें और यह समझ सकें कि हमें भी एक दिन इसे छोड़ना होगा। हम इस बात पर कभी गम्भीरतापूर्वक विचार नहीं करते। यदि ऐसा करते तो निश्चय ही भजन-सुमिरन करना हम लोग इस तरह नहीं भूलते।

(२२)

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि भजन में आपको अधिक कठिनाई नहीं होती और हर बार जब आप भजन में बैठते हैं तो आपको आश्चर्यजनक परिणाम और सुन्दर अनुभव प्राप्त होते हैं। इससे आपके हृदय की पवित्रता और परमात्मा की अपार दया-मेहर प्रकट होती है। ऐसी आत्मा अवश्य जल्दी ही बहुत अच्छी रूहानी तरक्की भी कर लेती है। इसी लिये प्रबल शत्रु (काल) ने आपके विरुद्ध सबसे घातक शस्त्रों का प्रयोग शुरू कर दिया है। सबसे ज्यादा चोट जो एक भक्त को पहुंचाई जा सकती है, वह है उसके हृदय में सतगुरु के प्रति श्रद्धा और भक्ति का अभाव उत्पन्न करना। इसलिये कृपया अपने मन में कभी ऐसे विचार न आने दें। खूब नियमपूर्वक अपना भजन-सुमिरन बिना नाग़ा करते रहें। इसे परमात्मा के प्रति अपना सबसे ज़रूरी कर्त्तव्य समझें। जो आपको सब-कुछ देता है, उसे आप प्रतिदिन धन्यवाद

यों न दें ? रोज़ कुछ समय सन्त-मत के साहित्य के अध्ययन में भी बितायें। काल के आक्रमणों से बचने के लिये यह बहुत अच्छा उपाय है। ध्यान रखें, काल ने पूरी ताकत के साथ युद्ध छेड़ दिया है, इस-लिये उसके हमलों से बचने के लिये आपको सभी उपाय करने चाहियें। अपना मन सुमिरन में रखें।

(२३)

आपके द्वारा दिये गये उद्धरणों को मैंने ध्यानपूर्वक पढ़ा। ईसा मसीह ने यह शब्द उस समय अपने सामने मौजूद जीवित शिष्यों से कहे थे—'उस दिन तुम्हें पता लगेगा कि मैं अपने पिता (परमात्मा) में हूं। तुम मुझ में हो और मैं तुम में हूँ'। ईसा उन्हें भरोसा दिलाना चाहते थे कि उनकी मृत्यु के समय वे उन्हें नहीं छोड़ेंगे। उस वक्त वे उनसे मिलेंगे, और तब उन्हें यह पता चलेगा कि परमपिता उनमें मौजूद है और वे परमपिता में हैं।

ये शब्द हरएक के लिये नहीं कहे गये थे, केवल उस समय के उन शिष्यों के लिये थे जो उनके सम्पर्क में आये थे। बाइबिल में हज़रत ईसा ने बिल्कुल स्पष्ट कहा है, 'जब तक मैं दुनिया में हूं, मैं दुनिया का प्रकाश हूँ।' उनके जीवन में जो लोग उनके सम्पर्क में आये उनके लिये ईसा 'देहधारी शब्द' थे। देह में रहते हुए अपने जीवित शिष्यों को जो उपदेश और आश्वासन उन्होंने दिये, वे उन शिष्यों के लिये बिलकुल सच्चे और सही थे, पर उनके लिये नहीं जो उनके बाद इस संसार में आये। परमात्मा का यह अटल विधान या कानून है कि एक जीवित सतगुरु के माध्यम के बिना कोई व्यक्ति उस तक नहीं पहुँच सकता।

दूसरे उद्धरण (२६वीं कड़ी) में वे अपने शिष्यों को यह भरोसा दिलाते हैं जिस 'शब्द' को प्रभु की दया से वे अपने अन्दर सुन रहे हैं, वह हमेशा उनके साथ रहेगा और हर समय उनको मार्ग-दर्शन तथा सुरक्षा प्रदान करता रहेगा। उन्हें यह नहीं सोचना चाहिए कि

की मृत्यु के बाद वे (हज़रत ईसा) उनका साथ छोड़ देंगे, क्योंकि 'शब्द' और ईसा मसीह असल में एक ही हैं।

तीसरा उद्धरण, 'लो, मैं सदा तुम्हारे संग रहूंगा...........' का मतलब भी यह है कि वे अपने अन्तर में सतगुरु(जो उस समय हज़रत ईसा थे) के जिस नूरानी स्वरूप का दर्शन करेंगे, वह स्वरूप हमेशा के लिये उनके साथ रहेगा। ये शब्द भी केवल उन शिष्यों के लिये थे, जिन्होंने इस संसार में अपने जीवन-काल में देह स्वरूप में ईसा मसीह के दर्शन किये थे। स्थूल शरीर सदा कायम नहीं रह सकता, इसलिये वे अपने नूरी-स्वरूप का ज़िक्र कर रहे थे।

आपका यह कहना बिलकुल ठीक है कि दुनिया में इन दिनों तथा-कथित गुरु अनेक हैं। इस बात का निर्णय आपको और केवल आपको ही करना होगा कि कौन-सा गुरु आपके लिये सही और सच्चा होगा। परमात्मा सच्चे जिज्ञासुओं की सहायता करते हैं क्योंकि यदि जिज्ञासु सच्चा और निष्कपट है तो एक जीते-जागते देहधारी सतगुरु तक उसे पहुँचाने का भार परमात्मा पर है। मैं सुझाव दूंगा कि आप सन्तमत के साहित्य का भी अध्ययन करें, जिससे आपको बहुत-से प्रश्नों के उत्तर मिलने में मदद मिलेगी और आपकी शंकाएँ भी कुछ हद तक दूर हो सकेंगी।

कृपया इस मार्ग पर आने में जल्दबाज़ी न करें। अच्छी तरह खोज कर लें और जब तक आपको पूरा यकीन न हो, किसी बात पर भरोसा न करें।

सन्तमत का अनुयायी अहिंसा के सिद्धान्तों में किसी प्रकार की ढील नहीं देता, और उसके लिये शाकाहारी भोजन अपनाना लाजिमी है। बेशक, रूहानी अभ्यास के लिये स्वास्थ्य का ठीक होना और शरीर का निरोग होना बहुत ज़रूरी है। यदि कुछ शारीरिक कष्ट ऐसे हों जिनके कारण अभ्यास में बाधा पड़े तो कृपया किसी अच्छे चिकित्सक से सलाह लें।

(२४)

रोज़ ढाई घण्टे सुमिरन-भजन में बैठने के अपने व्रत का पालन करने में जिस दिन आप चूक जायें, उस दिन अपने मन को यह याद दिलाने की कोशिश करें कि यह अनमोल मानव-शरीर परमात्मा द्वारा आपको केवल एक ऐसा अवसर प्रदान करने के लिये दिया गया है कि आप शांति और आनन्द के अपने असली धाम में वापस पहुँच सकें। इसलिये मनुष्य-जन्म के इस विरले अवसर का उपयोग करने के लिये फिर से कोशिश करें। परमात्मा के इस ऋण को चुकाने में कभी गफ़लत नहीं करनी चाहिये। आपके आसपास के सत्संगों में शामिल होने के साथ ही रोज़ कुछ समय सन्तमत के साहित्य के अध्ययन में भी लगाइये।

(२५)

आपकी शादी आपकी व्यक्तिगत और निजी समस्या है। साथी के चुनाव में किसी बाहरी व्यक्ति की सलाह मदद नहीं कर सकती। इस सम्बन्ध में तमाम पहलुओं पर सावधानी के साथ विचार करें और जैसा उचित समझें, निर्णय लें, किन्तु राधास्वामी मार्ग के किसी अनुयायी के लिये यह ज़रूरी नहीं है कि वह इस मार्ग के अनुयायी के साथ ही विवाह करे। यह सब इस बात पर निर्भर करता है कि परिस्थितियों के अनुकूल आप स्वयं को किस हद तक ढाल सकते हैं।

(२६)

आपको पता चलेगा कि भजन के लिये किये जाने वाले अभ्यास बहुत सरल और स्वाभाविक हैं। हमारा मन हमेशा किसी न किसी के बारे में सोचता रहता है और सांसारिक वस्तुओं का अन्तर में बार बार चिन्तन करता रहता है। सन्त हम से केवल इतना कहते हैं कि सांसारिक वस्तुओं का स्मरण करते रहने के बदले अन्तर के पाँच पवित्र नामों का स्मरण करें ताकि ध्यान बाहर भटकने के बजाये भीतर लग सके। इसी तरह, धुन अथवा 'शब्द' हम सब के अन्दर हमेशा मौजूद है। बाहर की बातचीत सुनने के बजाये हम अन्तर के

शब्द को सुनते हैं, जो परमात्मा की वाणी है। इस मार्ग में किसी तरह के कर्मकाण्ड या धार्मिक रीति-रिवाज की न तो कोई आवश्यकता होती है और न ही वे मार्ग में सहायक होते हैं। हमारे लिये एक सामान्य जीवन बिताना ज़रूरी है, संसार को त्यागना नहीं। परमात्मा का जितना हक़ है, केवल उतना ही उसको दें और वह है प्रेम तथा लगन के साथ भजन-सुमिरन करते हुए अपने दैनिक जीवन में सन्तमत के सिद्धान्तों का पालन करना।

(२७)

मुझे यह जानकर अफ़सोस हुआ कि आपके पति का कारोबार कई वर्षों से ठीक नही चल रहा है और उन्हें काफ़ी कर्ज़ लेना पड़ा हैं। कृपया चिन्ता न करें और कर्ज़ अदा करने में उनकी सहायता करने की कोशिश करें। हाँ, पति और पत्नी दोनों अपने कर्ज़ों के लिये (कर्म-सिद्धान्त के अनुसार) जवाबदार हैं, यदि दोनों की सहमति से और दोनों के लाभ के लिये ये लिये गये हों।

(२८)

जिस महिला के अनुभवों के बारे में आपने अपने पत्र में लिखा है, वे कितने ही सही सिद्ध हुए हों, उन पर भरोसा नहीं किया जा सकता। ऐसे माध्यमों (मीडियम) पर आश्चर्य करने और उनसे प्रभावित होने के बदले, सत्संगी को चाहिये कि जो उसको नामदान के समय बतलाया गया था, उस तरीके से भजन द्वारा सतगुरु के साथ सीधा सम्पर्क साधने की कोशिश करे।

(२९)

वास्तव में न तो कोई हमारा कुछ बुरा करता है, न हमारे साथ बुरा बर्ताव करता है। जैसा-जैसा हमें अपने कर्मों का फल मिलने वाला होता है, परमात्मा हमारे साथ लोगों से उसी के अनुसार व्यवहार करवाता है। इसलिये हमें कभी किसी को दोष नहीं देना चाहिये। नियमित रूप से श्रद्धा, प्रेम और भक्ति के साथ सुमिरन-भजन करते रहने से मनुष्य इन बातों से ऊपर उठ जाता

(३०)

अन्तर में जल्दी रूहानी प्रगति करने की आपकी तीव्र इच्छा को मैं पूरी तरह समझता हूँ। लेकिन रूहानी तरक्की स्वाभाविक तौर पर धीमी ही होती है। हमारी प्रगति कई बातों—हमारा जोश, हमारी लगन, हमारे पिछले कर्म और सतगुरु की दया—पर निर्भर करती है। कभी-कभी हमारा व्यवसाय, हमारे निवास का स्थान और हमारे रहने की स्थिति, हमारे स्वास्थ्य की दशा, हमारे पारिवारिक कामकाज, भोजन जो हम खाते हैं, विचार जो हम करते हैं और ऐसी ही अनेक बातें हमारी आन्तरिक प्रगति में बाधक होती हैं।

कुछ लोग यह सोचते हैं कि अन्दर जाने की उनकी तीव्र इच्छा के बावजूद उन्हें जैसी चाहिये वैसी सहायता मिलती प्रतीत नहीं होती। ऐसे लोगों को अपने हृदय को ज़रा गहराई से टटोलना होगा। उन्हें पता लगेगा कि जिसे वे 'तीव्र इच्छा' कहते हैं, वह बहुत ऊपरी है। आत्मा जब सचमुच अपने घर जाना चाहती है तो उसे कोई रोक नहीं सकता। यही नियम है। कोई पिता अपने योग्य पुत्र को अपनी कमाई से कभी अलग नहीं रखता, लेकिन वह अपनी गाढ़ी कमाई की पूंजी किसी को व्यर्थ लुटाने के लिये भी नहीं देता।

कृपया याद रखें कि सन्तमत में कोई असफलता नहीं होती। प्रेम श्रद्धा और नम्रता के साथ नियमित रूप से अपने भजन-सुमिरन में लगे रहें। रोज़ कुछ समय सन्तमत के साहित्य के अध्ययन में भी लगायें। कोई चिन्ता न करें। सतगुरु आपकी मदद करेंगे।

(३१)

अभ्यास में आने वाली बड़ी बाधाओं में से नींद भी एक बाधा है। दूसरी ओर, इससे आप कुछ लाभ भी उठा सकते हैं। आपको मालूम है कि जब नींद आती है तो हमारा ध्यान अपने आप आंखों के केन्द्र की ओर सिमट जाता है। अभ्यास के समय हम यही काम अपने खुद के प्रयास के द्वारा करने की कोशिश करते हैं। सो जब नींद आये तो इन्द्रियों से ध्यान के अपने आप होने वाले सिमटाव का लाभ उठाइये

और उसे नेत्र के केन्द्र पर एकाग्र करने की कोशिश करिये। इस बात की सावधानी रखें कि आप न तो सो जायें, न पूरी तरह जागते रहें। यदि आप इसमें सफल हो गये तो रूहानी अभ्यास में इससे आपको बड़ी सहायता मिलेगी।

अगर आपकी प्रगति धीमी है तो कृपया चिन्तित न हों। ऐसा होना स्वाभाविक है। करोड़ों युगों से हमारा मन अपने केन्द्र से बाहर भटकता रहा है, और यह आदत इतनी गहरी हो गयी है कि चेतना को निचले केन्द्रों से, जहाँ अनन्त युगों से वह रहती आयी है, ऊपर लाने में अवश्य ही कुछ समय और प्रयास लगेगा। इसलिये आप कृपया अपना भजन-सुमिरन प्रेम, श्रद्धा और नम्रता के साथ चालू रखें। सतगुरु सदा आपके साथ हैं और हर समय आपकी सहायता तथा मार्ग-दर्शन करने के लिये तैयार हैं। पर याद रखें कि हर चीज़ उचित समय पर मिलती है।

भजन में आपको कभी कोई नुकसान नहीं पहुँचा सकता। यह अनुभव करने की कोशिश करें कि सतगुरु हमेशा आपके साथ हैं और लगातार आपकी देख-भाल और हिफ़ाज़त कर रहे हैं।

(३२)

अन्य सत्संगियों की तरह श्री और श्रीमती...अब भी मुझे बहुत प्रिय हैं। बहुत जल्दी परमात्मा का अनुभव प्राप्त करने की उनकी कामना ही उन्हें दूसरी तरफ़ ले गयी है। उन्हें अपनी कोशिश करने दें। इसमें आपके दु:खी या परेशान होने की क्या बात है ? आप तो प्रेम और विश्वास के साथ अपना भजन-सुमिरन करते रहें।

(३३)

भक्ति और ज्ञान योग का लक्ष्य एक ही है, लेकिन उनके तरीके और पहुँच अलग-अलग हैं। ज्ञानयोग के अनुयायियों का लक्ष्य ब्रह्म है, मगर भक्ति-मार्ग, जो सन्तमत है, ब्रह्म और पारब्रह्म के परे बहुत आगे जाता है।

(३४)

दो दम्पतियों का इस सत्संग को छोड़कर आगरा के सत्संग में शामिल होने के कारण कृपया परेशान न हों। समय पर सब ठीक हो जायेगा। आप अपना भजन-सुमिरन प्रेम, विश्वास और नम्रता के साथ करते रहें। परमात्मा आप पर और अधिक दया बरसाएंगे। अन्तर में घटने वाली बातों को खुद देख लेने के बाद ही सत्य का पता चलता है। बाहरी तर्क और अक्ल की उधेड़बुन से सही मार्ग-दर्शन नहीं मिलता।

(३५)

आप लिखते हैं कि जो आवाज़ आप सुनते हैं वह आपके मन की नहीं, बल्कि शैतान की है। शायद आप यह नहीं समझते कि मन हमारे अन्दर शैतान का प्रतिनिधि है। काल या शैतान हमेशा मन के द्वारा काम करता है। असल में मन ही शैतान है और हमारा सबसे बड़ा शत्रु है। सतगुरु की कृपा से रूहानी अभ्यास के द्वारा जब यह वश में कर लिया जाता है, केवल तभी यह हमारा अच्छा मित्र बनता है।

जैसा कि मैं बार-बार कह चुका हूँ, मनुष्य के शरीर में आत्मा और मन की गाँठ बँधी हुई है, और मन जब आत्मा के अधीन हो जाता है, केवल तभी मन अपने स्रोत में (जो दूसरी रूहानी मंज़िल है) वापस जा सकता है। इस मंज़िल को तय करने के बाद आत्मा अपने असल धाम में लौटने के लिये स्वतंत्र है। पर जब तक मन पर इन्द्रियाँ हावी रहती हैं, वह यह महसूस नहीं करता कि यह संसार उसका घर नहीं है, और अपने साथ आत्मा को भी बाँधे रखता है।

(३६)

बच्चों द्वारा अण्डा और माँस खाने की समस्या और कई माताओं के सामने भी आती है। यदि बच्चे इतने बड़े हो गये हैं कि खुद निर्णय ले सकें, तो आपकी जबाबदारी समाप्त हो जाती है। आप उनके कार्यों के लिये केवल तब तक जबाबदेह हैं जब तक वे छोटे हैं और उनमें खुद अपना खाना चुनने की योग्यता नहीं है।

(३७)

मुझे आपके पत्र से यह जानकर अफ़सोस हुआ कि आपकी पत्नी ने धमकी दी है कि अगर आप शाकाहारी भोजन और सत्संगियों से मेलजोल नहीं छोड़ेंगे तो वह तलाक दे देंगी। कृपया याद रखें कि परमात्मा को पाने की लगन रखने वाले मनुष्य के रास्ते में, जब वह परमार्थ के मार्ग में सच्चाई के साथ चलने की कोशिश करता है, ऐसी परख और परीक्षा के अवसर आते रहते हैं। एक सच्चे भक्त को अपने सही और नेकी के मार्ग से कभी नहीं गिरना चाहिये। नाम-दान के समय लिये गये वादों को तोड़ने की सलाह मैं आपको कभी नहीं दे सकता। बाकी बातें आपको खुद तय करनी होंगी। हर सत्संगी के जीवन में एक समय ऐसा आता है जब उसे यह तय करना होता है कि वह इस दुनिया के क्षणभंगुर सुखों के पीछे दौड़े या परलोक के सच्चे और स्थाई आनन्द को महत्व दे। मालिक आप पर दया करें और आपकी मदद करें।

(३८)

परमात्मा को प्राप्त करने की इच्छा करने वाले सत्संगी का सबसे बड़ा शत्रु काम है। यह आध्यात्मिकता और भक्ति की जड़ को ही काट डालता है। इस पर विजय प्राप्त की जा सकती है, इसके सामने हथियार नहीं डाल देने चाहियें। यदि आपकी इच्छा हो तो आप खुशी से विवाह कर सकते हैं। यह भी एक इलाज है। यदि आप शादी न करना चाहें, तो पूरी हिम्मत बाँध कर दृढ़ निश्चय के साथ मन को पक्का कर लें कि किसी भी स्त्री पर बदनियती से नजर नहीं डालेंगे। भोजन सादा खायें और उसकी मात्रा कुछ कम कर दें और सप्ताह में एक दिन उपवास भी रखें। ऐसी संगत और जगहों को टालें जहाँ प्रलोभन की सम्भावना हो। औरों ने जो कर दिखाया है, वह आप भी आसानी से कर सकते हैं। सहायता के लिये परमात्मा की ओर मुड़ें, और आपको सहायता मिलेगी। रोज प्रेम, विश्वास और के साथ नियमित रूप से सुमिरन-भजन करें। इसके साथ ही

से पहले हर रोज़ आधा घण्टा सुमिरन में लगायें। सन्तमत के साहित्य का नित्य कुछ अध्ययन भी करें। मेरी शुभ कामनायें आपके साथ हैं।

(३९)

आपके पत्र के लिये धन्यवाद। इसे पढ़कर बहुत खुशी हुई। मुझे यह देखकर प्रसन्नता है कि इतनी छोटी आयु में मालिक ने आपको इतनी तीव्र बुद्धि बख़्शी है। एक युवा हृदय में, जो विनोद तथा क्रीड़ा का इच्छुक रहता है और जीवन के भोगों के पीछे दौड़ता है, इस तरह के विचार और प्रश्न उठने स्वाभाविक हैं। परन्तु शायद आप इस बात से सहमत होंगी कि चित्र का एक दूसरा पहलू भी है, जो बरबस हमारे ध्यान को खींचता है। मैं इसे अंधेरा पक्ष नहीं कहूँगा, बल्कि यह सही, वास्तविक और जीवन का अधिक महत्वपूर्ण अंग है। यदि आप केवल एक क्षण के लिये शांतिपूर्वक विचार करेंगी तो आप सहमत होंगी कि बुढ़ापे की ओर से हम अपनी आँखें नहीं मूंद सकते, वह ज़रूर आयेगा। क्या रोग, दरिद्रता और मृत्यु की हम उपेक्षा कर सकते हैं, जो कि अमीरों के मनोरंजन और आमोद-प्रमोद के जितने ही सत्य हैं ?

कर्म के विधान को संसार के सभी धर्म-प्रवर्तकों ने स्वीकार किया है। यह वही पुराना कानून है, जिसकी चर्चा हज़रत ईसा ने बाइबिल में की है—'जैसा तुम बोओगे, वैसा ही काटोगे'—और जिसका पुरानी बाइबिल (ओल्ड टेस्टामेंट) में हजरत मूसा ने 'आंख के बदले आँख और एक दाँत के बदले दाँत' के कानून के रूप में उल्लेख किया है। आपने कुछ ऐसे बच्चे देखे होंगे जो जन्म से अंधे, पागल, लंगड़े या अपंग होते हैं ; कुछ चांदी के पालने में पलते हैं तो कुछ को ये सुख बिलकुल नहीं मिलते। क्या परमात्मा इतना अन्यायी और क्रूर है कि वह नवजात, निर्दोष बच्चों को, उनके किसी अपराध के बिना ही ऐसी सज़ा देता है ? संसार में मिलने वाली ऐसी विषमताओं का एक-मात्र उत्तर कर्मों का कानून है। पिछले जन्मों में उन्होंने जो कुछ बोया है, उसे वे अब काट रहे हैं। ईसा, मूसा और अन्य महात्माओं ने अपनी

आन्तरिक आँखों से जो कुछ देखा, उसकी ही घोषणा उन्होंने की है। उनकी बातों का आधार बुद्धि और तर्क नहीं था।

भारतीय दर्शन-शास्त्र के प्रति तिरस्कार की भावना और भारतीयों के लिये घृणा के भाव होते हुए भी यदि आपके कर्मों में भारत और भारतीयों के निकट आना होगा, तो आप अपनी तमाम कोशिशों के बावजूद भी अवश्य आयेंगी।

ईश्वरीय ज्ञान की प्राप्ति केवल 'शब्द का भेद जानने के बाद ही हो सकती है जिसके बारे में बाइबिल में कहा है, 'जो शुरू में था परमात्मा के साथ था'। यदि आप ईमानदारी और लगन के साथ प्रकाश और ज्ञान की तलाश में हैं तो आप इस 'शब्द' के विज्ञान की खोज करें, जो ईसा मसीह के रूप में, उनके समय में, 'देह-स्वरूप' में था। इसके लिये आपको पूरब के किसी दर्शन-शास्त्र की छान-बीन या पूरब के किसी व्यक्ति से मेल-जोल करने की ज़रूरत नहीं होगी।

आप किसी भी प्रश्न या शंका के बारे में मुझे खुशी से लिख सकती हैं। मुझे इनके उत्तर देने में हमेशा बड़ी प्रसन्नता होगी। मैं आपको यकीन दिलाता हूँ कि आलोचना और सच्चे मतभेद का मैं सदा स्वागत करता हूँ।

(४०)

मुझे यह जानकर खुशी हुई कि सत्संगी की तरह जीने का नया तरीका आपको बहुत अच्छा लगा और माफ़िक आया तथा शाकाहारी भोजन अपनाने तथा मदिरा-पान बंद करने में आपको कोई कठिनाई नहीं हुई। अब दूसरा कदम यह होना चाहिए कि आप भजन-सुमिरन के लिये लगन और परमात्मा की प्राप्ति के लिये लगन पैदा करें। अब भजन-सुमिरन आपको उबाने या थकाने वाली क्रिया नहीं लगनी चाहिये। भूख की तरह ही यह भी एक आदत बन जानी चाहिये।

अब जब कि आपने अपने व्यवसाय से अवकाश ग्रहण करने का निश्चय कर लिया है, तो अपने मन से कह दीजिये कि उसकी बारी समाप्त हो चुकी है और पिछले अनेक वर्षों तक वह खुलक

चुका है, अब परमात्मा की बारी है। अब आपके अन्दर उसके प्रेम तथा भक्ति की मस्ती बनी रहनी चाहिये। चेतना को पुरानी लीक से निकालने के लिये, जिसमें वह बहुत लम्बे अरसे तक चलती रही है, पूरी कोशिश और हृदय-परिवर्तन की आवश्यकता होती है। जब हम खुद अपनी सहायता करने की कोशिश करते हैं, तभी मालिक की सहायता और दया प्राप्त होती है। कृपया चिन्ता न करें। हर कदम पर, आपकी मदद, मार्गदर्शन और रक्षा के लिये सतगुरु हमेशा आप के साथ हैं। आप उनके प्रति सचेत हो जायें और उनकी लगातार मौजूदगी का अनुभव करें। विश्वास, प्रेम और नम्रता के साथ बराबर भजन-सुमिरन करते रहें।

(४१)

भूकम्प और अन्य विपत्तियों के बारे में भविष्यवाणियों की चिन्ता कृपया न करें। अपना स्थान छोड़ने अथवा बैंक के खातों से रकम निकालने की ज़रूरत नहीं है।

(४२)

मुझे यह जानकर दुःख हुआ कि आपको एकाएक आपरेशन कराना पड़ा, जिसकी वजह से आपने माँस खाना शुरू कर दिया है। नामदान के समय लिये गये पवित्र व्रतों में सत्संगी को कभी भी ढील नहीं करनी चाहिये।

कर्म का सिद्धान्त मेहनत और कोशिश के विरुद्ध नहीं है, बल्कि हमारी कोशिशें नाकामयाब या असफल होने पर, वह सन्तुष्ट रहने की सीख देता है। हमारा वर्तमान जीवन हमारे पिछले अच्छे और बुरे कर्मों पर आधारित्त है, जिनका नतीजा सुख और दुख होता है।

भला होना और भले कर्म करना बेशक मुश्किल है, क्योंकि हमारे मन का स्वाभाविक झुकाव नीचे और बाहर की ओर है। जिन तत्वों से इस जगत का निर्माण हुआ है, उनमें तमोगुण और रजोगुण की प्रधानता है। इसलिये कोई सात्विक काम करने के लिये अधिक प्रयास की ज़रूरत पड़ती है।

अपनी बीमारी के लिये कृपया अपना इलाज ठीक से कराइये। अपने शारीरिक स्वास्थ्य का ख़याल रखना भी हमारा कर्तव्य है। तकलीफ़ और दर्द हमें सुधारने के लिये आते हैं और कभी-कभी छिपे रूप में वरदान होते हैं। यदि इस संसार में कोई पीड़ा और यातना न होती तो शांति और सांत्वना के लिये परमात्मा की ओर कभी कोई मुड़ता ही नहीं। परमात्मा पूर्ण शांति और आनन्द का सच्चा स्रोत हैं। इसलिये सहायता के लिये उसकी ओर मुड़ें, और अपना भजन-सुमिरन नियमपूर्वक करते रहें।

(४३)

सोने से पहले भजन में बैठना एक अच्छी आदत है। महाराज जगतसिंह जी के कहने का मतलब यह है कि सवेरे भजन के बाद फिर से सोना नही चाहिये।

पवित्र नामों का सुमिरन ध्यान को भौहों के बीच में रख कर करना चाहिये और इस समय हरेक अलग-अलग नाम पर पूरा ध्यान देना चाहिये।

भक्त हमेशा परमात्मा के प्रेम के आनन्द को चाहता है, परन्तु गहरे प्रेम की अवस्था में प्रेमी ख़ुद ही प्रियतम हो जाता है। तब बूंद समुद्र में लीन हुए बिना नहीं रह सकती।

(४४)

जब पेट खाली रहे और आँतड़ियां साफ हों, तब भजन में बैठना अच्छा रहता है। तब यह तकलीफ, जिसका आपने जिक्र किया है, पैदा नहीं होती। यह तकलीफ़ अधिक खाने के कारण होती है। हमारे भोजन की मात्रा साधारण या सामान्य होनी चाहिये—न बहुत ज्यादा न बहुत कम। यदि भजन में बैठने के पहले एक या दो घूंट कुनकुना पानी पी लें तो इससे भी आपकी तकलीफ़ दूर हो जायेगी।

(४५)

इस दुनिया में जो कुछ हो रहा है, कृपया उसकी चिन्ता न करें। ऐसा हमेशा होता ही रहा है। यदि आप संसार के पिछले

चुका है, अब परमात्मा की बारी हैं। अब आपके अन्दर उसके प्रेम तथा भक्ति की मस्ती बनी रहनी चाहिये। चेतना को पुरानी लीक से निकालने के लिये, जिसमें वह बहुत लम्बे अरसे तक चलती रही है, पूरी कोशिश और हृदय-परिवर्तन की आवश्यकता होती है। जब हम खुद अपनी सहायता करने की कोशिश करते हैं, तभी मालिक की सहायता और दया प्राप्त होती है। कृपया चिन्ता न करें। हर कदम पर, आपकी मदद, मार्गदर्शन और रक्षा के लिये सतगुरु हमेशा आप के साथ हैं। आप उनके प्रति सचेत हो जायें और उनकी लगातार मौजूदगी का अनुभव करें। विश्वास, प्रेम और नम्रता के साथ बराबर भजन-सुमिरन करते रहें।

(४१)

भूकम्प और अन्य विपत्तियों के बारे में भविष्यवाणियों की चिन्त कृपया न करें। अपना स्थान छोड़ने अथवा बैंक के खातों से रक निकालने की ज़रूरत नहीं है।

(४२)

मुझे यह जानकर दुःख हुआ कि आपको एकाएक आपरेशन कर पड़ा, जिसकी वजह से आपने माँस खाना शुरू कर दिया है। नाम के समय लिये गये पवित्र व्रतों में सत्संगी को कभी भी ढील करनी चाहिये।

अपनी बीमारी के लिये कृपया अपना इलाज ठीक से कराइये। अपने शारीरिक स्वास्थ्य का ख़याल रखना भी हमारा कर्तव्य है। तकलीफ़ और दर्द हमें सुधारने के लिये आते हैं और कभी-कभी छिपे रूप में वरदान होते हैं। यदि इस संसार में कोई पीड़ा और यातना न होती तो शांति और सांत्वना के लिये परमात्मा की ओर कभी कोई मुड़ता ही नहीं। परमात्मा पूर्ण शांति और आनन्द का सच्चा स्रोत है। इसलिये सहायता के लिये उसकी ओर मुड़ें, और अपना भजन-सुमिरन नियमपूर्वक करते रहें।

(४३)

सोने से पहले भजन में बैठना एक अच्छी आदत है। महाराज जगतसिंह जी के कहने का मतलब यह है कि सवेरे भजन के बाद फिर से सोना नहीं चाहिये।

पवित्र नामों का सुमिरन ध्यान को भौहों के बीच में रख कर करना चाहिये और इस समय हरेक अलग-अलग नाम पर पूरा ध्यान देना चाहिये।

भक्त हमेशा परमात्मा के प्रेम के आनन्द को चाहता है, परन्तु गहरे प्रेम की अवस्था में प्रेमी ख़ुद ही प्रियतम हो जाता है। तब बूंद समुद्र में लीन हुए बिना नहीं रह सकती।

(४४)

जब पेट खाली रहे और आंतड़ियां साफ़ हों, तब भजन में बैठना अच्छा रहता है। तब यह तकलीफ, जिसका आपने ज़िक्र किया है, पैदा नहीं होती। यह तकलीफ़ अधिक खाने के कारण होती है। हमारे भोजन की मात्रा साधारण या सामान्य होनी चाहिये—न बहुत ज़्यादा न बहुत कम। यदि भजन में बैठने के पहले एक या दो घूंट कुनकुना पानी पी लें तो इससे भी आपकी तकलीफ़ दूर हो जायेगी।

(४५)

इस दुनिया में जो कुछ हो रहा है, कृपया उसकी चिन्ता न करें। ऐसा हमेशा होता ही रहा है। यदि आप संसार के पिछले हज़ार वर्षों,

या उससे भी अधिक समय के इतिहास पर नज़र डालेंगे तो आपको इसके तमाम पृष्ठों में युद्ध और संघर्षों के वर्णन मिलेंगे।

भजन में बैठने से आपको डरना क्यों चाहिये ? कृपया याद रखें कि भजन में बैठे हुए सत्संगी को कोई हानि नहीं पहुँच सकती। पूरे समय वह मालिक के सीधे संरक्षण या निगरानी में रहता है। सत्संगी को ऐसा घबराने वाला नहीं होना चाहिये कि वह छोटी-छोटी बातों से डर जाये। बल्कि, उसे तो बाकी दुनिया के सामने बहादुरी और साहस की मिसाल कायम करनी चाहिये। अगर हम नियमपूर्वक विश्वास, प्रेम और नम्रता के साथ सुमिरन-भजन करते रहेंगे तो हम पर किसी तरह भय अथवा कमज़ोरी का आक्रमण नहीं हो सकेगा।

सतगुरु का नूरी स्वरूप आपके नेत्रों के पास ही है ज़रा अन्दर झांकें और उसे देख लें। जब भी आपका मन दुनिया के काम-काज में न लगा हुआ हो, उसे सुमिरन में लगाये रखें।

(४६)

आपका पहले से अधिक बड़ा और अधिक चमकीला चन्द्रमा देखना बहुत उत्साहवर्धक है। परमात्मा की यह बड़ी दया है। पर इसके साथ ही आपको अपनी इंद्रियों को वश में रखने के लिये अपनी खुद की कोशिश भी करनी चाहिये। मालिक उनकी मदद करता है जो उसकी बख्शिशों का सही उपयोग करते हुए खुद अपनी मदद करते हैं। हमारा यह जीवन-भर चलने वाला संग्राम है। मन के हमलों का एक बहादुर सैनिक की तरह मुकाबला करें। शत्रु के सामने अपने हथियार न डालें। जब आप बुरे विचारों का सामना करने के लिये अपने मन को तैयार कर लेंगे तो आपको मदद भी मिलेगी। सबसे अच्छा उपाय उनसे भिड़ना या उन्हीं में उलझे रहना नहीं, बल्कि उनसे ऊपर उठना है। सुमिरन-भजन को अपना परम कर्तव्य मानकर उसे नियमित समय दें।

(४७)

सतगुरु के नूरी स्वरूप का दर्शन प्राप्त करने के लिये कोई

निश्चित अवधि या मियाद नहीं है। यह सब हमारे जोश, लगन, हृदय की पवित्रता, सांसारिक वासनाओं के प्रति उदासीनता और मालिक की दया पर निर्भर करता है।

(४८)

सब ग्रहों पर जीवन है, किन्तु इस पृथ्वी पर जो जीवन है, उससे वह बिलकुल भिन्न है। उन ग्रहों में बुद्धि का स्तर भी भिन्न है और शरीर की बनावट भी अलग तरह की है। आप यह आसानी से समझ सकते हैं कि चन्द्र और सूर्य पर जीवन और रूप वैसे नहीं हो सकते जैसे पृथ्वी पर हैं। पृथ्वी पर प्रधानता पृथ्वी तत्व की है, जब कि चन्द्र पर जल-तत्व की और सूर्य पर अग्नि तत्व की प्रधानता है।

लेकिन सभी ग्रहों का पूर्ण ज्ञान प्राप्त कर लेने का भी क्या फायदा है अगर मनुष्य यह न जान पाये कि उसके अपने अन्तर में क्या है? ज्यादा अच्छा क्या है—विश्व का ज्ञान अथवा परमात्मा का प्रेम? विश्व से सम्बन्धित तमाम प्रश्नों के उत्तर जानने से ही कोई आत्मा महान् नहीं हो जाती। असली बड़ाई तो उस महान परमात्मा का पूर्ण ज्ञान प्राप्त करने में है।

(४९)

मैंने आपके पत्र को ध्यान से पढ़ा। आपके प्रश्न और शंकाएँ सही हैं और आपके जैसे सत्य के प्रत्येक जिज्ञासु के मन में इनका उठना स्वाभाविक है। मेरा ख़याल है, आपने सन्तमत अथवा परमात्मा की प्राप्ति के सन्तों के इस मार्ग को ठीक तरह से नहीं समझा है। सन्तों की शिक्षा हज़रत ईसा की शिक्षाओं से भिन्न नहीं है। अन्तर केवल हमारी समझ और उस शिक्षा की व्याख्या में है।

कृपया इस समय व्यक्तियों को महत्व न दें और सन्तों की शिक्षा की पूरी खोज करें। अगर आप इस विषय पर मिलने वाली पुस्तकों का अध्ययन करेंगे, तो उनमें आपको अपने अधिकांश प्रश्नों के उत्तर मिल जायेंगे। इन पुस्तकों में बाइबिल की शिक्षा पर भी काफ़ी प्रकाश डाला गया है। अगर आपको लगे कि कुछ प्रश्नों के उत्तर [illegible]

हैं तो आप खुशी से मुझे लिख सकते हैं और आप जो कुछ भी पूछना चाहेंगे उसे समझाने की सेवा करने में मुझे बड़ी प्रसन्नता होगी ।

जहां तक मेरा सवाल है, मैं परमात्मा का एक साधारण सेवक हूँ और मेरा किसी प्रकार का कोई व्यक्तिगत दावा नहीं है ।

(५०)

इन दिनों जिस निराशा और मायूसी के दौर से आप गुज़र रहे हैं, उसे जानकर मुझे अफ़सोस हुआ । इस दुनिया में हरेक के जीवन में चढ़ाव और उतार आते हैं, किन्तु एक सत्संगी को; जिस की मदद के लिये सतगुरु के रक्षा के हाथ सदा मौजूद हैं, किसी भी दशा में मायूस नहीं होना चाहिये । जीवन के संग्रामों को पराक्रम के साथ लड़ना चाहिये । एक सत्संगी को दुनिया से न तो कभी भागना चाहिये, न अपने परिवार के प्रति अपने कर्तव्यों से जी चुराना चाहिये, और न ही सगे-सम्बन्धियों का परित्याग करना चाहिये । अपने लिये कोई अच्छा काम ढूंढने की कोशिश करें और उस पर जमे रहें । जीवन में जो कुछ हमारे हिस्से में है, वह हमें अवश्य मिलेगा । चिन्ता से कभी किसी को मदद नहीं मिली । निराश होना एक सत्संगी को शोभा नहीं देता ।

(५१)

आगरा वालों द्वारा किये जा रहे प्रचार से आपको चिन्तित नहीं होना चाहिये । हर सुधारक, सन्त और मसीहा के खिलाफ़ ऐसे प्रचार होते रहे हैं । अपना भजन-सुमिरन करते रहें । यही मुख्य चीज़ है ।

(५२)

अपने खुद के लिये अलग शाकाहारी भोजन पकाने की आपकी कठिनाई को मैं पूरी तरह समझता हूँ । इसमें सन्देह नहीं कि एक सत्संगी को ऐसी परेशानियों का सामना करना पड़ता है, लेकिन जो लाभ हमें मिलता है उसके एवज़ में निश्चय ही यह कीमत छोटी है।

कुछ प्रगति होने पर सत्संगी को अपने-आप कई अलौकिक शक्तियां प्राप्त हो जाती हैं । पर इनका सांसारिक बातों में कभी

उपयोग नहीं करना चाहिये, और इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि इनकी वजह से अहंकार न बढ़ जाये। मुझे खुशी है कि आपको अपने स्थानीय सत्संग में आनन्द मिलता है। ये सत्संग बहुत सहायक और लाभप्रद होते हैं।

(५३)

आप खुशी से अपने नौ बरस के पुत्र को सुबह शाम सतगुरु से प्रार्थना करना, ज़रूरत के समय उनका आसरा लेना और उनसे मदद तथा मार्गदर्शन के लिये याचना करना सिखा सकते हैं। हालांकि उसे नाम नहीं मिला है तो भी इसमें कोई हर्ज नहीं। हमें अपने बच्चों के हृदय में बचपन से ही मालिक के प्रति प्रेम और भक्ति के भाव धीरे-धीरे जमाते रहना चाहिये।

हां, वह युवा-शिवरों में खुशी से शामिल हो सकता है, और यदि अपनी तमाम कोशिशों के बावजूद वह मांसाहारी भोजन से जो कि वहां खिलाया जाता है, बचने में असमर्थ रहे, तो वह शिविर के नियमों का पालन कर सकता है। लेकिन नामदान के बाद भोजन-सम्बन्धी नियमों में किसी हालत में समझौता नहीं किया जाना चाहिये।

(५४)

जहां तक आपकी समस्याओं का सवाल है, शादी कोई बुरी बात नहीं है। सन्तमत में विवाहित जीवन को हमेशा पसन्द किया जाता है। इसे न टालें और अवसर आने पर खुशी से विवाह कर लें। उचित रीति से बिताया जाने वाला वैवाहिक जीवन हमारे भजन-सुमिरन में बाधक नहीं होता।

(५५)

अपने जीवन-साथी और बच्चों के साथ मोह होना बिलकुल स्वाभाविक है, किन्तु मोह की भावना इतनी गहरी नहीं होनी चाहिये कि इसके कारण आप परमात्मा के प्रति अपने कर्तव्यों को भूल जायें। आपको चाहिये कि सबके प्रति अपनी ज़िम्मेदारियों और कर्तव्यों का बराबर पालन करें।

(५६)

आपकी घबराहट किसी प्रकार की बीमारी हो सकती है, लेकिन इसका नामदान अथवा भजन से कोई सम्बन्ध नहीं है ; बल्कि भजन से तो घबराहट दूर होती है ।

जहाँ तक अपने बच्चे का शाकाहारी भोजन पर पालन करने का सवाल है, आपको अपनी पत्नी से इस बारे में परामर्श करना चाहिये । यदि आप दोनों ही बच्चे को शाकाहारी भोजन देने के लिये राज़ी होंगे तो मुझे बड़ी खुशी होगी ।

(५७)

भजन में बैठते समय अपने मन से कह दें कि अब उसे बाहरी दुनिया अथवा इसके कार्यकलापों से सरोकार नहीं है और ढाई घण्टों तक उसका कार्य-क्षेत्र केवल आंखों का केन्द्र रहेगा । अगर बिन्दु इधर उधर घूमता है तो उसके पीछे न जायें । अपना ध्यान केवल दोनों भौहों के केन्द्र में स्थित रखें और पवित्र नामों का जप करते रहें ।

(५८)

शुरू में जो दृश्य दिखते हैं वे निचले मण्डलों के हैं, और वे हमारे मन द्वारा ही पैदा किये हुए होते हैं । मन बाहर की वस्तुओं के बारे में जो विचार करना शुरू कर देता है, वैसी ही अन्दर देखना शुरू कर देता है । इनका अधिक विश्लेषण या छानबीन करने की कोशिश न करें ।

पति और पत्नी के बीच का यौन सम्बन्ध, दोनों की सहमति या राय से ही बंद करना चाहिये । केवल यौन सम्बन्धों के बन्द करने से ही तीसरा नेत्र नहीं खुल जाता । और कई बातें भी ज़रूरी हैं । लेकिन इससे मन की एकाग्रता में ज़रूर बहुत मदद मिलती है और फिर ब्रह्मचर्य पालने की यह इच्छा सच्चे दिल से होनी चाहिये ।

(५९)

स्पष्ट शब्दों में 'पाप' की परिभाषा करना वास्तव में कठिन है, लेकिन आम तौर पर यह कहा जाता है कि जो परमात्मा के अधिक

नजदीक ले जाय, वह पुण्य है और जो हमें उस से दूर करे, वह पाप है।

कुछ हद तक यह सम्भव है कि हम अन्तर में प्रगति कर रहे हों, और फिर भी हमें उसका पता न हो।

नामदान के समय से ही सतगुरु अपने शिष्य के साथ हमेशा रहते हैं।

पाप चाहे किसी भी तरह का हो, हमारे मन को निश्चय ही एक सीमा तक नीचे धकेलता है। यह सीमा पाप की मात्रा के अनुसार कम-ज्यादा हो सकती है। पर कमाई हुई रूहानी प्रगति को एक ही पाप पूरी तरह से खत्म नही कर सकता, हालाँकि नुकसान ज़रूर होता है और कभी-कभी बहुत ज्यादा नुकसान होता है।

बाक्सिंग या मुष्टि-युद्ध आपका धन्धा है इसलिये मुकाबलों में विजय हासिल करने से न डरें। जब तक आप किसी को व्यक्तिगत नाराजगी अथवा दुश्मनी के कारण कोई आघात नहीं पहुँचाते, कर्म का बन्धन नहीं होता।

(६०)

बच्चे हमेशा अपने माता-पिता की नकल करते है। यदि हम चाहते हैं कि वे अच्छे और नेक बनें तो हमें खुद अच्छा नैतिक जीवन बिताकर उनके सामने एक आदर्श कायम करना चाहिये। आपकी तमाम समस्याओं का निवारण करने के लिये मैं आपको यही सलाह दे सकता हूं कि आप जो चाहें करें, लेकिन नामदान के समय मालिक के सामने लिये गये चार व्रतों में कभी कोई समझौता न करें।

(६१)

आप मैसानिक लाज सम्बन्धी अपने कर्तव्यों का पालन कर सकते हैं या किसी भी समाज या गिरजे में जा सकते है, बशर्ते कि आप नामदान के समय किये गये अपने चार पवित्र वादों को नही तोड़ते। किसी हालत में भी अपने रोज के भजन में नागा न करें।

(६२)

भजन से सारी घबराहट दूर हो जाती है। जब आपका सुमिरन पक्का हो जायेगा तो आपकी घबराहट गायब हो जायेगी। हर समय स्थिर और शांत रहने की कोशिश करें। सत्संगी को कभी घबराहट महसूस नहीं करनी चाहिये। ऐसे अवसरों पर सतगुरु का ध्यान करें।

प्रबल काम-वासना उठने पर अधिक भोजन खाने लगना वास्तव में उस पर विजय प्राप्त करने का इलाज नहीं है। जैसा आप खुद कहते हैं, इससे अनेक प्रकार के शारीरिक कष्ट उत्पन्न हो जाते हैं और आपकी परेशानियाँ और भी बढ़ जाती हैं। काम की वृत्ति भोग से भी तृप्त नहीं होती। आप जितना अधिक भोग में प्रवृत्त होंगे, यह उतनी ही बढ़ती जायेगी। आग में जितना ज़्यादा ईंधन डालेंगे, वह उतनी ही तेज़ होगी। अपने ख़याल को भजन-सुमिरन में लगाने से ही आप उसे वश में कर सकेंगे।

(६३)

आजकल 'धर्म' का जिस अर्थ में उपयोग होता है, वास्तव में 'राधास्वामी मार्ग' उस अर्थ में कोई धर्म नहीं है, और इस बात की पूरी कोशिश की जाती है कि यह एक धर्म का रूप न ले ले। किन्तु धर्म एक बात है और धार्मिक संस्था एक दूसरी बात है। अमेरिका में 'राधास्वामी फ़उन्डेशन, ब्यास' का पंजीकरण कराते समय यह कानूनी सलाह मुझे दी गयी थी कि 'कारपोरेशन सोल' (स्वतन्त्र निगम) बनाना वहाँ धन सम्बन्धी हिसाब-किताब की व्यवस्था करने के लिये सब से अच्छा तरीका होगा। मैं खुद ऐसी संस्थाओं के बहुत खिलाफ़ हूँ, क्योंकि मेरा अनुभव है कि लोग संस्थागत मामलों में बहुत उलझ जाते हैं, और असल मकसद या ध्येय से दूर चले जाते हैं। किन्तु अधिकांश अमेरिकी सत्संगियों की राय थी कि यदि धन का हिसाब-किताब रखने का भार किसी कानूनी संस्था पर रहे, तो उस संस्था को सेवा में प्रदान की गयी रकम पर उन्हें कर से कुछ छूट मिलेगी। इस तरह उस समय इसे कानूनी रूप देना सबसे बेहतर तरीका समझा गया।

(६४)

इस खुशी के अवसर पर मैं चाहूँगा कि आप दो बातें हमेशा याद रखें, प्रथम यह कि जिनके साथ आपका विवाह हो रहा है उनके लिये अभी आपके हृदय में जो प्यार और स्नेह भरा है, वह जीवन-पर्यन्त कायम रहना चाहिये। परमात्मा के सामने सदा प्रेम और निष्ठापूर्वक एक साथ रहने के लिये आप जो प्रण करेंगे, उसे कभी न भूलें। दूसरी बात, उस मालिक को कभी न भूलें जिसने आप दोनों का मिलाप कराया है। उसकी भक्ति और भजन के लिये रोज़ कुछ समय दिया करें।

(६५)

सतगुरु के स्वरूप की रेखा का जो आप कभी-कभी दर्शन करते हैं, वह सुमिरन में पकने और उसके फलस्वरूप एकाग्रता के बढ़ने पर धीरे-धीरे अधिक साफ़ और उज्ज्वल हो जायेगा। उज्ज्वल सुनहरी रोशनियों का दिखायी देना मालिक की दया का बहुत अच्छा लक्षण है। यह मन की चाल नहीं है। अपने ध्यान को कृपया केन्द्र पर जमाये रखें और इस बात की चिन्ता न करें कि आप तारे अथवा सूर्य के अन्दर कैसे प्रवेश करेंगे। यह प्रगति अपने आप होगी।

जो मामूली सिर-दर्द आपको कभी-कभी महसूस होता है, वह भजन के समय अनजाने ही आँखों पर दबाव डालने के कारण हो जाता है। कृपया शरीर को बिलकुल शिथिल या ढीला रखते हुए सुमिरन करें और अपनी आँखों अथवा माथे के स्नायुओं पर या इसी तरह किसी अन्य अंग पर कोई दबाव न डालें। तारे और सूर्य दिखाई देने पर हमारे अन्दर आनन्द की भावना फैल जाती है। इससे भजन के लिये हमारी लगन और जोश में वृद्धि होती है। कृपया कोई फ़िक्र न करें। मालिक आप पर और अधिक दया बरसायेगा।

'परमार्थी-पत्र, भाग २' में से रोज़ कुछ पृष्ठ भी पढ़ा करें। ऐसा अध्ययन मन में भक्ति-भावना उत्पन्न करने और उसे कायम रखने में बड़ा सहायक होता है।

नियमित रूप से बड़े सत्संगों की आवश्यकता नहीं है। यदा कदा आप छोटे सत्संगों में चर्चायें कर सकते हैं। ऐसी चर्चायें सत्संगियों और जिज्ञासुओं के लिये अक्सर अधिक लाभप्रद सिद्ध होती हैं।

(६६)

यदि आपको किसी ख़ास स्थान में होने वाले किसी सत्संग में शामिल होना अच्छा नहीं लगता तो आप वहाँ न जायें। दुनिया में किसी व्यक्ति का बहुत बारीकी से विश्लेषण करने की कोशिश नहीं करनी चाहिये। गुण और दोष सब में होते हैं। अपनी शक्ति को दूसरों के दुर्गुण देखने में लगाने के बजाय अपनी ख़ुद की कमज़ोरियों पर विजय पाने में लगाना चाहिये। बाकी बातें मालिक पर छोड़ दें।

(६७)

सतगुरु के स्वरूप की याद करने के लिये उनकी फ़ोटो देखने में कोई हानि नहीं है, पर इस बात की सावधानी रखनी चाहिये कि आप फ़ोटो का ध्यान न करने लगें।

शब्द को सुनते समय ध्यान को पूरी तरह शब्द में जमाये रखें। इस समय सुमिरन और ध्यान नहीं करना चाहिये। किन्तु यदि आप को ऐसा लगे कि मन बहुत हठी हो गया है और आपकी तमाम कोशिशों के बावजूद नेत्र के केन्द्र पर ध्यान नहीं ठहरता, तो आप इन उपायों में से किन्हीं दो या तीनों का भी प्रयोग इसे अन्दर लाने के लिये कर सकते हैं।

(६८)

आप आत्म-विश्लेषण और आत्म-ग्लानि में नाहक फँसे हुए हैं। सतगुरु की आप पर खूब दया है। कोई फ़िक्र न करें। कृपया अपने भजन-सुमिरन को नियमित रूप से समय दें। यही इस लोक और परलोक में पूर्ण शान्ति और आनन्द का सच्चा स्रोत है।

(६९)

अपने शादी-शुदा जीवन साथी के अलावा किसी अन्य के साथ संभोग करना एक सत्संगी के लिये अवांछनीय और अनुचित बात है।

कृपया अपना भजन-सुमिरन अत्यन्त नियमपूर्वक करते रहें और नित्य कुछ समय सन्तमत के साहित्य के अध्ययन में बितायें ।

(७०)

ज्योतिष की भविष्य-वाणियाँ कभी-कभी अवश्य सच निकलती हैं, लेकिन क्या इनसे हमें कोई मदद मिलती है ? उलटे, कई बार ये हमारे लिये चिन्ता का कारण बन जाती हैं । अगर भविष्यवाणी किसी दुर्घटना की होती है तो उसके होने की आशंका या घबराहट की वजह से हम बहुत पहले से ही दुखी होने लगते हैं, और फिर यह भी तो निश्चित नहीं कि वह हो या न हो। हमारे भाग्य में जो बदा है, वही हमें मिलता है । फिर चिन्ता क्यों ?

(७१)

अज्ञात का जबरदस्त डर सबको रहता है । भविष्य और भूतकाल के बारे में ज्ञान के अभाव के कारण यह भय उत्पन्न होता है । इसे जानने का एक उपाय है, और ज्ञान प्राप्त करने के लिये वास्तव में मनुष्य की ताकत या क्षमता असीम है । असल में इस संसार में ऐसा कुछ नहीं है जो रहस्यमय हो और जाना न जा सके । किन्तु जिस तरह हमने इस संसार के भौतिक पदार्थों और तथा-कथित दृश्यमान वस्तुओं के ज्ञान के लिये कोशिश की है, उस तरह इन चीज़ों के ज्ञान के लिये सही दिशा में कभी कोशिश नहीं की । इसीलिये हमारा ज्ञान सीमित ही है ।

इस जन्म में किये गये अपने अच्छे या बुरे कर्मों के अनसार मनुष्य मृत्यु के बाद किसी ऊँची या नीची योनि में जन्म पाता है । यदि किसी को संसार से और इस संसार के पदार्थों से मोह है, तो वह पृथ्वी में वापस आयेगा और किसी ऐसी योनि में पुनर्जन्म लेगा, जिसमें उसके मानसिक झुकाव उसे ले जाते है । अगर उसके मानसिक झुकाव ऊपर के मंडलों की ओर होंगे तो वे उसे वहाँ खींचकर ले जायेंगे । मनुष्य को ईश्वरत्व प्राप्त करने की शक्ति भी दी गई है । इस सीमित आत्मा की सामर्थ्य असीम है, किन्तु यह ऊँचे मण्डलों में केवल इसीि

चढ़ पाती कि यह इस सामर्थ्य का उपयोग नहीं करती। स्वाभाविक है कि यदि कोई ऊँचे मण्डलों में चढ़ने के लिये अपनी गुप्त शक्तियों का उपयोग नहीं करता, बल्कि इस दुनिया में इन्द्रियों के भोग-विलास में उलझा रहता है, तो निश्चय ही उसे किसी निचली योनि में भेजा जायेगा, जहाँ वह जी भर कर उन सुखों का भोग कर सकेगा। कोई विरले मनुष्य ही जानते हैं कि उन्हें अपने अन्दर सुख और आनन्द का कितना विशाल भण्डार मिल सकता है। अपनी अज्ञानतावश मनुष्य सांसारिक वस्तुओं, स्त्रियों और मदिरा में सुख को पाने की कोशिश करता है। किन्तु सच्चा आनन्द इन्द्रियों की दुनिया में नहीं मिल सकता। उस शान्ति और आनन्द को पाने के लिये मनुष्य को परमात्मा की ओर मुड़ना पड़ेगा।

जीवन का न तो जन्म के साथ प्रारम्भ होता है और न मृत्यु के साथ उसका अन्त ही होता है। हम एक अनन्त जीवन की अभिव्यक्ति हैं, जिसका न कोई आदि था और न कभी अन्त होगा। मृत्यु का अर्थ केवल अपने इस नाशवान मिट्टी के जामे को बदलना है, जिसमें हम फिलहाल लिपटे हुए हैं। एक समझदार व्यक्ति को मृत्यु से नहीं डरना चाहिये। यह भय तब तक रहता है, जब तक आन्तरिक ज्ञान पर अज्ञान के परदे का अंधकार छाया रहता है।

केवल तर्क और विवाद के द्वारा हमें सत्य और हकीकत की प्राप्ति में सहायता नहीं मिल सकती। वे विश्व के आदि या अन्त का, अथवा उसकी रचना कैसे और क्यों हुई, इसका निर्णय नहीं कर सकते। परमात्मा, आत्मा, सृष्टि, मृत्यु के बाद का जीवन, हमारे कर्म और उनकी प्रतिक्रियाएँ और समस्त आध्यात्मिक बातें ऐसी वस्तुएँ हैं, जिनको समझने के लिये हमारी बुद्धि बहुत कमज़ोर और सीमित है। बाल की खाल निकालने से हम किसी ठिकाने पर नहीं पहुँच सकते। इन बातों का हमें प्रत्यक्ष ज्ञान होना चाहिये, और उसे प्राप्त करने का उपाय भी है। अपनी अन्दर की आँख, अपनी आत्मा के नेत्र खोलें। यदि कोई ऐसा नहीं करता तो वह पथभ्रष्ट होकर निश्चय ही नास्तिक

हो जायेगा। हमारे मस्तिष्क की तर्क-शक्ति केवल उन वस्तुओं का मूल्य आंक सकने में और उन्हें समझने में समर्थ हो सकती है जो कि इन्द्रियों के द्वारा जाने जाते हैं। दूसरे लोक की बातों का तथा खुद परमात्मा का ज्ञान केवल आत्मा के द्वारा ही हो सकता है। आत्मा की आंख या आन्तरिक ज्ञान के द्वारा हमें परमात्मा और उसकी लीला को देखने में मदद मिल सकती है। इस कार्य के लिये हमें एक ऐसे मार्गदर्शक की मदद लेनी होगी, जो हमें प्रभु के धाम तक ले जा सके। हमें मार्गदर्शन प्रदान करने तथा सहायता देने के लिये 'क्राइस्ट' हमेशा मौजूद हैं। आपको उन्हें पाने के लिये केवल कोशिश भर करनी है।

मुझे यकीन है कि सन्तमत के साहित्य के अध्ययन में लगाये गये समय से आपको लाभ होगा।

(७२)

हम प्रेतात्माओं और उनके माध्यम (मीडियम) के अभ्यासों में उलझना उचित नही समझते। कभी-कभी वे सत्संगी की आध्यात्मिक प्रगति में बड़े बाधक सिद्ध होते हैं।

(७३)

आपकी माँ की दुखद मृत्यु का समाचार जानकार अफ़सोस हुआ। इस जन्म में सन्तमत में आना उनके भाग्य में नहीं था। आपने अपने कर्तव्य का पालन ईमानदारी से किया है और उससे आप दोनों को फायदा होगा। अब उनके साथ आपके सम्बन्ध समाप्त हो चुके हैं। वास्तव में इस संसार में हमारे सब सम्बन्ध अपने पिछले कर्मों के भुगतान के लिये होते हैं। अपना कर्ज अदा करने के बाद कर्जदार तुरन्त ही अपना चोला छोड़ देता है। हम सबको एक दिन यह संसार छोड़ना पड़ेगा, इसलिये हमें इसे प्रसन्नतापूर्वक छोड़ने की तैयारी कर लेनी चाहिए।

(७४)

एकाग्रता जितनी अधिक होगी, आन्तरिक दृश्य भी उतने ही अधिक स्पष्ट होंगे और सूक्ष्म मण्डलों में प्रवेश भी उतना ही ज्यादा होगा। आप क्या देखते हैं, इसका बहुत ज्यादा विश्लेषण या ...नबीन

करने की कोशिश न करें। हर समय अपने मन को सुमिरन में लगाये रखें। आन्तरिक दृश्यों को देखते समय भी सुमिरन में लगे रहें। एकाग्रतापूर्वक सुमिरन करने से दृश्य और स्पष्ट हो जायेंगे। सतगुरु सदा आपके साथ हैं। अपनी कोशिश करते रहें और बढ़ते चलें।

(७५)

अपने कठोर धक्के और निराशा को आपने जिस धैर्य से स्वीकार किया है, उससे मुझे ख़ुशी है। जिस प्रकार आपने इसे बर्दाश्त किया है, वास्तव में यह एक छिपा हुआ वरदान है। इस अवसर का कृपया पूरा लाभ उठायें और अपने मन को भजन और भक्ति में लगा दें; और अपने लिये कोई दूसरा काम ढूंढने की कोशिश करें। हमें जीवन का मुकावला साहस और बहादुरी के साथ करना चाहिये। आखिर इन छोटी-मोटी तकलीफ़ों में क्या रखा है? ये हमें निखारने और सँवारने के लिये आती हैं। हमारा मुख्य ध्येय या लक्ष्य तो भजन-सुमिरन और परमात्मा की प्राप्ति होना चाहिये, जो मनुष्य-जीवन का असली और सच्चा उद्देश्य है।

(७६)

भजन में बैठते समय शरीर के आसन का उतना महत्व नहीं है जितना मन की एकाग्रता का। शरीर पर तनाव नहीं पड़ना चाहिये और न उसे तकलीफ़ पहुँचनी चाहिये। जितनी देर तक हो सके, एक आसन में बैठने की कोशिश करें, पर जब आप को कष्ट महसूस होने लगे तो आसन बदल लें।

(७७)

पुरस्कार की किसी कामना के विना अथवा निष्काम भाव से किया गया कोई भी कार्य प्रतिक्रिया उत्पन्न नहीं करता। हमें अपना कर्तव्य निभाना चाहिये और परिणाम मालिक पर छोड़ देना चाहिये। लगाव के साथ किये गये हमारे काम बन्धन के कारण बन जाते हैं। फल की किसी भी कामना के बिना किसी गरीब और ज़रूरतमन्द की

मदद करना या किसी की कोई सेवा करना नेक कार्य है और इसे टालना नहीं चाहिये।

(७८)

यदि आपके स्थान के सत्संगी इसे पसंद करें तो आप खुशी से अपने घर में सत्संग की बैठक कर सकते हैं। इसके लिये आप सन्तमत के साहित्य का उपयोग कर सकते हैं। इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि ऐसी बैठकों से सत्संगियों और जिज्ञासुओं में प्रेम और स्नेह अधिक बढ़े और ये किसी प्रकार के संघर्ष या मतभेद का कारण न बनें। हरेक सत्संगी और जिज्ञासु का स्वागत होना चाहिये। सत्संगियों का व्यवहार ऐसा हो कि उससे उनकी खुद की और वे जिस संगत के हैं उसकी प्रतिष्ठा बढ़े। सत्संग की बैठक करना सतगुरु की महान सेवाओं में से एक है। सत्संग नये जिज्ञासुओं के लिये मुक्ति के द्वार खोलते हैं।

(७९)

वास्तव में परमात्मा एक है, पर वह विभिन्न मण्डलों में विभिन्न रूप में प्रकट होता है। ये पांच पवित्र नाम उसकी शक्ति के अलग-अलग रूप हैं। इनके द्वारा वह इन क्षेत्रों के कार्यों की व्यवस्था करता है। प्रत्येक मानव शरीर में परमात्मा का तत्व मौजूद है, इसीलिये जब हम हर इन्सान से प्रेम और हर इन्सान की इज्जत करते हैं तो इसका मतलब यह नहीं कि हम किसी दूसरे परमात्मा की पूजा करते हैं। सन्तों-महात्माओं ने इन मण्डलों तथा इनके धनियों के नाम इनके गुणों और विशेषताओं के अनुसार रखे हैं। हमें अपना असल धाम छोड़े असंख्य युग बीत चुके हैं और हम वहां वापस जाने का मार्ग बिलकुल भूल चुके हैं, इसलिये ये मण्डल और इनके धनी हमें बिलकुल नये, विदेशी और अजनबी लगते हैं। अपने घर वापस जाने के लिये हमें इन पांच मण्डलों में से गुज़रना पड़ता है, इसलिये हम इन धनियों को पहचानने और इनसे परिचित होने के लिये इनके नामों का जाप करते हैं। यह एक साधारण अनुभव की बात है कि अपनी ज़र्म

लगी हुई ज़मीन के मालिकों के साथ हमारा मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध होने से हम सहर्ष उनकी भूमि से गुज़र कर छोटे रास्ते से अपने घर पहुँच सकते हैं, लेकिन अनजान लोग अगर ऐसा करें तो उन पर गैरकानूनी प्रवेश के लिए मुकद्दमा चलाया जा सकता है।

शब्द या दिव्य धुन से आप जितने ज़्यादा जुड़े होंगे, सतगुरु के आप उतने ही अधिक निकट होंगे और उनके लिये आपका प्रेम भी उतना ही मज़बूत होगा। सतगुरु को आप जितना ज़्यादा प्रेम करेंगे, उतना ही ज्यादा प्रेम आपके हृदय में परमात्मा के लिये बढ़ेगा। इस मामले में 'हृदय' से हमारा मतलब शरीर के अन्दर धड़कने वाले हृदय से नहीं, आंखों के केन्द्र से है, जो आध्यात्मिक हृदय-केन्द्र है।

सतगुरु के लिये प्रेम का विकास करने का सर्वोत्तम तरीका अपना समय सुमिरन और भजन में लगाना है। विश्वास, भक्ति और नम्रता के साथ आध्यात्मिक अभ्यास में अपना जितना अधिक समय आप ख़र्च करेंगे, उतना ही सतगुरु और परमात्मा के लिये आपका प्रेम बढ़ेगा।

ईसा मसीह आपके अन्दर हैं। यदि आप उनका दर्शन करना चाहते हैं, तो आप केवल अन्तर में ही उन्हें देख सकते हैं।

(८०)

सुमिरन और भजन के द्वारा तमाम कर्मों का नाश हो जाता है। कर्म तीन प्रकार के होते हैं :

(अ) क्रियमान : इस जन्म में हम जो नये कर्म करते हैं।

(ब) प्रारब्ध : या भाग्य-कर्म, जो हमारे पिछले जन्मों के कर्मों के फल हैं, जिनका कुछ भाग हमें इस जन्म में भुगतना है।

(स) संचित : पिछले जन्मों में भोगने से बाकी बचे एकत्रित कर्म जिन्हें हमें आगे के जन्मों में भुगतना होगा।

प्रारब्ध कर्मों का भुगतान हम यहीं करते हैं। जब हमारा मन

शब्द के साथ जुड़ जाता है, तब हम कोई बुरे काम नहीं करते और इस तरह हम कोई नये क्रियमान कर्म नहीं करते। आध्यात्मिक अभ्यास के द्वारा त्रिकुटी में हमारे पहुँचने के बाद और उस मंज़िल से आगे बढ़ने से पहले संचित कर्म नष्ट हो जाते हैं।

रूहानी मार्ग में प्रगति करने के लिये पहले मन की कुछ सफ़ाई आवश्यक है। सुमिरन और भजन के साथ-साथ ही यह सफ़ाई की क्रिया भी पूर्ण होती जाती है।

शब्द हमारे अन्दर सदा मौजूद है, पर हमारा ध्यान बाहर फैला रहता है इसलिये हम उसे नहीं सुन पाते। आंखों के केन्द्र पर ध्यान जितना ज्यादा एकाग्र होगा, शब्द उतना ही ज्यादा स्पष्ट सुनाई देगा।

इस संसार में शैतानी शक्तियां भी अपना काम कर रही हैं, इसलिये जिज्ञासुओं की जानकारी के लिये सन्त इस बात को साफ़ तौर पर समझाते हैं ताकि वे उनके जाल में न फँस जायें। 'सार वचन' के जिन अंशों के बारे में आपने पूछा है, वे उस समय भारत के लोगों में आम तौर पर प्रचलित कुरीतियों के बारे में चेतावनी देने के लिये लिखे गये थे। इन बातों से सम्बन्धित अश आपके लिये अनावश्यक हैं।

यह जानने के लिये कि आपके विचारों और भावों का रुझान परमात्मा की ओर है या काल की ओर है, सबसे अच्छी कसौटी यह है कि जो विचार आपको अन्तर्मुख करने की, शब्द की ओर ले जाने की कोशिश करते हैं, वे परमात्मा की ओर से आते हैं, और वे विचार जो आपके चित्त को संसार तथा सांसारिक वासनाओं में लिप्त करते है, काल द्वारा प्रेरित हैं।

(८१)

किसी भी प्रकार का कोई संगठन चाहे खूब सोच-समझ कर और सावधानी से क्यों न बनाया गया हो, सफल नहीं हो सकता यदि उसके सदस्यों में आपसी सहयोग और सद्भाव नहीं है। किन्तु मुझे यह जानकर बहुत अफ़सोस हुआ है कि पुराने और अनुभवी सत्संगियों में

वहुत छोटी-छोटी वातों पर मतभेद और विवाद हो रहा है। संगठ
का उद्देश्य हमें एक-दूसरे के निकट लाना और हमें सही मार्ग-दर्श
प्रदान करना होता है, न कि हममें बिखराव पैदा करना। संगठन को
सफल वनाने वाली एकमात्र चीज़ है सव सम्वन्धित लोगों का आपसी
प्रेम, लिहाज और सहयोग। कृपया प्रेम और निःस्वार्थ सेवा का
वातावरण वनाने की कोशिश करें, तव आप देखेंगे कि इस प्रकार
की संस्थाओं का कोई विशेष महत्त्व नहीं है। ऐसा संगठन जो आपसी
प्रेम को वढ़ाता है और सत्संगियों का भला चाहता है, अपने आप
सफल होगा। यह देखकर मुझे वहुत दुःख होता है कि कुछ सत्संगी
सत्ता और अधिकार की प्यास में अपने आप को खो रहे हैं, और लगन
के साथ सेवा करने की ओर कोई ध्यान नहीं दिया जा रहा है।

(८२)

जव शव्द की धुन ज़ोर से सुनाई देने लगे और आपको खींचने
लगे तव आप ख़ुशी से सुमिरन वन्द करके शव्द की ओर मुड़ सकते
हैं। पर सतगुरु के स्वरूप का ध्यान करते समय आप सुमिरन चालू
रख सकते हैं।

(८३)

इच्छित संख्या में सन्तान हो जाने के वाद सत्संगी पति और
पत्नी के सम्वन्ध कैसे रहें, इस वारे में आपके प्रश्न की मैं सराहना
करता हूं। काम के अधीन होकर वासना की पूर्ति में लगने से हमारी
आध्यात्मिक प्रगति में रुकावट आती है। मालिक ने जिसे वंश-वृद्धि
ा साधन वनाया था, उसे मनुष्य ने पाशविक सुख का स्रोत वना
नया है।

कामवासना की प्रवृत्ति नीचे की ओर है। इसका हमारे शरीर
र मन, दोनों के स्वास्थ्य पर विपरीत असर पड़ता है। सिर्फ़ वासना
पूर्ति के लिये काम में प्रवृत्त होने से हमारी इच्छा-शक्ति कमज़ोर
ी है। यह हमारी आत्मा को उस ऊँचे केन्द्र से नीचे खींचती है,
वह लम्वे और लगातार अभ्यास के वाद पहुँचती है। इसलिये

यदि पति और पत्नी दोनों एक-दूसरे की सहमति से इसे बिलकुल छोड़ देने या कम करने के लिये राज़ी हो जायें, तो इससे उन्हें बहुत लाभ पहुंचेगा।

ऐसे कई सत्संगी हैं जिन्होंने यौन-सम्बन्धों का पूर्ण त्याग कर दिया है। ब्रह्मचर्य हृदय को पवित्र करता है और आत्मा को ऊपर उठाता है। लेकिन सिर्फ संयम से रहना और मन में ऐसी इच्छाओं को रखना, केवल दमन या मन को जबरदस्ती दबाना है। मन को इन इच्छाओं से मुक्त करना होगा। आत्म-संयम और आत्म-नियंत्रण, ऐसे गुण हैं जो आधे भजन के बराबर हैं। यदि आप दोनों ऐसा समझौता करना चाहते हों, तो मुझे बड़ी प्रसन्नता होगी। ऐसे निश्चय को मजबूत बनाने के लिये नियमित भजन बहुत जरूरी है। यह पति और पत्नी के बीच काम-वासना से मुक्त शुद्ध, निःस्वार्थ प्रेम को बढ़ाता है, और उसे आध्यात्मिक ऊंचाइयों तक चढ़ाता है।

(८४)

अपने वैवाहिक सम्बन्धों में जिन कठिनाइयों का सामना आपको करना पड़ रहा है, उसे मैं पूरी तरह महसूस करता हूं। इसमें कोई सन्देह नही कि आध्यात्मिक प्रगति में कामवासना एक बड़ी बाधा है, किन्तु कुछ हद तक काम-भावना एक प्राकृतिक प्रेरणा भी है। कभी-कभी बहुत ज्यादा दमन के परिणाम अच्छे नहीं होते। इसके सिवाय वैवाहिक-जीवन में शारीरिक-सम्बन्ध कुछ सीमा में कर्तव्य भी हैं। बहुत ज्यादा लिप्त होना भी अच्छा नहीं; पर इसका निर्णय दोनों की आपसी राय से ही हो सकता है।

मैं नही चाहता कि यह समस्या आपके पारिवारिक जीवन को दुःखी बना दे और सम्बन्ध-विच्छेद या तलाक की नौबत ला दे। आप दोनों को चाहिये कि अपना दृष्टिकोण एक दूसरे को प्रेम और स्नेह के साथ समझायें और शांति और सद्भावना के साथ अपने विचारों से सहमत करायें। वेशक, यह एक बहुत नाजुक समस्या है और इसका समाधान भी आप दोनों के हाथों में है

आप दोनों अपना भजन-सुमिरन बिना नाग़ा निश्चित समय पर प्रेम, विश्वास और नम्रता से करते रहें। मालिक अपनी दया बरसायेंगे और आप दोनों यह महसूस करेंगे कि मन कामवासना से विरक्त हो रहा है।

(८५)

आपमें हताश होने की भावना नहीं होनी चाहिये। जीवन जिस रूप में है, उसे साहस और सतगुरु की दया से उसी रूप में झेलना चाहिये। एक दिन सब-कुछ ठीक हो जायेगा। जितने ज़्यादा आप भजन में अपने आपको लगायेंगे, उतनी ही अधिक शांति आपको अन्तर में प्राप्त होगी।

अपनी असफलताओं के लिये व्यर्थ परेशान न हों। जो बीत चुका है, उसे भूल जायें। वर्तमान में जीयें, भजन-सुमिरन में ध्यान लगायें और भविष्य की चिन्ता न करें।

(८६)

मुझे यह जानकार ख़ुशी हुई कि आप अपने सत्संग के अध्यक्ष चुने गये हैं। अपने सत्संगी भाइयों और बहनों से यह सम्मान प्राप्त करने पर मैं केवल यही सलाह दे सकता हूँ कि सत्संगी का पद जितना ऊँचा हो, उसे उतना ही अधिक नम्र होना चाहिये। अपने यहाँ सत्संग में जितने भी व्यक्ति हों, उन सब में सबसे अधिक नम्र उसका व्यवहार होना चाहिये। इस अवसर का पूरा लाभ उठाकर उसे अपने भाइयों और बहनों की एक अति दीन सेवक के रूप में सेवा करनी चाहिये। सतगुरु के बच्चों की सेवा में अहंकार को कोई स्थान नहीं होना चाहिये। मेरी कामना है कि सत्संगियों में ख़ूब आपसी प्रेम और सद्भाव बना रहे। हमारा जीवन, चरित्र और आचरण दूसरों के लिये आदर्श स्थापित करे। मालिक आप सबको आशीर्वाद दे।

(८७)

जैसा स्वामी जी ने 'सार वचन' में बताया है, 'सहस्रदल कमल' के ठीक नीचे तीसरे तिल अथवा अष्टदल कमल में हमारी आत्मा और

मन का मुख्य केन्द्र या सदर मुकाम है। क्या सहस्रदल कमल हमारे तन में स्थित नहीं है? इसी तरह अष्टदल कमल है। यह सच है कि मन और इन्द्रियों को आत्मा से ताकत मिलती है, अथवा आपके कथनानुसार, ये अपनी शक्ति और बल आत्मा से प्राप्त करते हैं। लेकिन इसके बावजूद उन्होंने आत्मा को दास बना रखा है। भजन-सुमिरन के द्वारा हम अपनी आत्मा की धारा या रूह को मन और इन्द्रियों से वापस समेट कर उसे आँखों के केन्द्र या तीसरे तिल तक लाने की कोशिश करते हैं। आँखों के पीछे अष्टदल कमल में, जो शरीर के अन्दर मन और आत्मा का केन्द्र है, नामदान के समय सतगुरु स्वयं बैठ जाते हैं। मुझे आशा है, अब पूरी बात स्पष्ट हो गयी होगी।

(८८)

परमात्मा, धर्म और आध्यात्मिक मामलों के प्रति उदासीनता आप में ही नहीं, वर्तमान युग के अनेक युवाजनों में विरासत या सामान्य पैतृक सम्पत्ति के रूप में पायी जाती है। बेशक, रूहानी मामलों में हमें अपनी बुद्धि और विवेक को संतुष्ट करना पड़ता है, पर हमारी बुद्धि और विवेक केवल कुछ सीमा तक ही हमारे सहायक हो सकते हैं। उस अनंत व अगम को जान सकने के लिये हमारी समझ अत्यन्त अशक्त और सीमित है।

इस संसार का कामकाज चलाने के लिये परमात्मा ने हमें बुद्धि प्रदान की है। आपने यह अनुभव किया होगा कि अपनी बुद्धि की वर्तमान दशा में इस दृश्यमान स्थूल जगत में जो कुछ स्थित है, उस सबको समझने में भी यह असमर्थ है। सूक्ष्म या रूहानी जगत की तो बात ही दूर रही। हमारी तर्क-शक्ति तो केवल उन पदार्थों का मूल्यांकन और विवेचन कर सकती है जिन्हें हम अपने शारीरिक इन्द्रियों के द्वारा जान सकते हैं। परमात्मा और आध्यात्मिक वस्तुओं का अनुभव तो केवल आत्मा की आँखों से या आन्तरिक दृष्टि से ही हो सकता है। आत्मा केवल प्रत्यक्ष अनुभव के द्वारा देखती है और तर्क नहीं करती। हमें इन चीजों का सीधा अनुभव प्राप्त करना चाहिये। जो

अन्दर की आँख रूहानी मण्डलों को देखती है उसे खोलने का एक तरीका है। पर कम से कम शुरू में तो हमें उन लोगों के अनुभवों पर भरोसा करना पड़ता है जिन्होंने इस दिशा में खोज की है।

हमारे तर्क हमारी शारीरिक इन्द्रियों के द्वारा प्राप्त हमारे पिछले अनुभवों पर आधारित हैं। क्या हमारी इन्द्रियों द्वारा प्राप्त किया गया ज्ञान पूर्ण और हमेशा सही होता है? बुद्धि और तर्क और उनसे मिलने वाले नतीजे अलग-अलग लोगों के लिये अलग-अलग होते हैं और वे हमारे वातावरण, जीवन की स्थिति, आयु और अन्य परिस्थितियों के कारण बदलते रहते हैं। एक रूसी तर्क द्वारा अलग नतीजे पर पहुँचेगा, एक अमेरिकन अलग; दोनों के तर्क का परिणाम भिन्न होगा। युवा पुरुष का तर्क वृद्ध पुरुष के तर्क से भिन्न होता है। काम वासना और क्रोध के वश में आकर हम जो तर्क करते हैं, उसमें और स्थिर और शांतपूर्ण स्थिति में किये गये तर्क में बहुत अन्तर होता है। जब तर्क का यह 'माप-दण्ड' ही हमेशा बदलता रहता है, तब इसके परिणामों पर क्या भरोसा किया जाये? महान सुकरात को भी यह स्वीकार करना पड़ा कि 'कुछ क्षेत्र ऐसे भी हैं, जहाँ मनुष्य का तर्क काम नहीं आता।'

स्थूल जगत के ज्ञान के लिये जैसे हम उनसे सम्बन्धित विषयों के गुरुओं के पास जाते हैं, ठीक उसी तरह आध्यात्मिक बातों का ज्ञान प्राप्त करने के लिये किसी ऐसे व्यक्ति की तलाश करनी होगी, जो इन बातों को जानता हो।

इस तमाम चर्चा का निचोड़ एक प्रश्न में है; आप क्या पसन्द करते हैं—इस जगत के अस्थायी और अल्पकालीन सुख अथवा अपने अन्तिम धाम, सर्वोच्च मण्डल की परम शान्ति और आनन्द?

(८९)

'गुरुमत सिद्धान्त' के इन शब्दों का कि 'सतगुरु का दर्शन प्राप्त किये बगैर कोई अन्दर चढ़ाई नहीं कर सकता' अर्थ यह है कि एक जीते-जागते सतगुरु से नामदान पाये बिना कोई 'स्वर्ग के राज्य' में

प्रवेश नहीं पा सकता। इसका यह अर्थ नहीं है कि सतगुरु के शरीर का दर्शन अनिवार्य या लाज़िमी है। जीवित सतगुरु के आदेश पर उन के प्रतिनिधि द्वारा दीक्षित होना खुद सतगुरु से दीक्षित होने के बराबर है।

सतगुरु की फोटो का ध्यान नहीं करना चाहिये। ध्यान करते समय कृपया पवित्र नामों का जप करते रहें और अन्दर अन्धकार में देखते रहें। सतगुरु का स्वरूप अपने-आप प्रकट हो जायेगा।

(९०)

अपने मन को वश में करने और इसे भजन में अधिक रस प्राप्त करने के योग्य बनाने का एक-मात्र उपाय और ज्यादा भजन-सुमिरन करना है। करोड़ों युगों से हमारा मन अपने केन्द्र से बाहर रहता चला आ रहा है। बाहर और नीचे की ओर की इसको ऐसी आदत पड़ गयी है कि चेतना को निचले केन्द्रों से वापस ऊपर लाने में समय लगना स्वाभाविक है और इसके लिये लगातार मेहनत करना ज़रूरी है।

सन्त-मत की शिक्षा के साथ फिर से 'नाता' जोड़ने के लिये हमें अधिक प्रेम और श्रद्धा के साथ भजन-सुमिरन में लग जाना चाहिये। सच्ची कोशिश व परिश्रम का फल हमेशा भजन में अधिक आनन्द के रूप में मिलता है। इसलिए आपको मेरी सलाह है कि आप सन्तमत का साहित्य प्रतिदिन पढ़ें और खूब लगन के साथ भजन करें।

(९१)

अंक-विद्या और ग्रहों के बारे में कृपया परेशान न हों। प्रत्येक व्यक्ति कर्मों का एक निश्चित भण्डार लेकर आता है जिसका उसको अपने जीवन में हिसाब देना पड़ता है। इसलिये कृपया अच्छे माता-पिता की तरह बच्चे के प्रति अपना कर्तव्य निभायें और मन पर ऐसे अंध-विश्वासों को बोझ न बनने दें। आप जो भी चाहे, उसका नाम रख लें।

भजन और सुमिरन में लगे रहें, यही पूर्ण शान्ति और आनन्द

का स्रोत है। सब कुछ सतगुरु पर छोड़ दें, जो सदा आपकी तथा आपके परिजनों की सँभाल करता है।

(९२)

आपका यह कहना सही है कि पशुओं का वध करना वर्जित या मना है, पर तभी वर्जित है, जब आप उन्हें आनन्द या शिकार के लिये मारते हैं। नुकसान पहुँचाने वाले जानवरों को, जब आपको उन से नुकसान पहुँचने का ख़तरा हो, आप मार सकते हैं। उस हालत में आपको दो बुराइयों में से कम को चुनना है।

जहाँ तक आपका सेना की नौकरी छोड़ने का प्रश्न है, जब यह आपका रोज़गार है तो इसे नहीं छोड़ना चाहिये।

विवाह करना या न करना आपकी निजी और व्यक्तिगत समस्या है। इस पर सब पहलुओं से विचार करें और जैसा आप ठीक समझें, करें। मुझे इस बारे में कोई राय नहीं देनी है। यदि आप अपनी पत्नी का भरण-पोषण कर सकते हैं, तो ख़ुशी से शादी कर सकते हैं।

(९३)

आपके परिवार के सभी सदस्यों और खासकर आपकी पत्नी के आपके भजन के अभ्यास में बाधक होने के कारण आपको जिन कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है, उन्हें मैं पूरी तरह समझता हूँ। अपनी पत्नी को प्रेम और स्नेह के साथ यह समझाने की कोशिश करें कि सन्तमत के मार्ग को अपनाने से आप कोई कम श्रद्धावान ईसाई नहीं बन गये हैं, और ईसा मसीह के उपदेशों और सन्तों के उपदेशों में कोई भेद नहीं है। बल्कि हज़रत ईसा ने, सब सन्तों की तरह, जीवित सतगुरु की आवश्यकता पर ज़ोर दिया है। परमात्मा की खोज करने वालों की सहायता के लिए ईसा मसीह इस पृथ्वी पर किसी न किसी नाम से मनुष्य-रूप में हमेशा मौजूद है। प्रेम पशु तक को सुधार देता है। इस बात की पूरी कोशिश करनी चाहिये कि पारिवारिक शान्ति भंग न हो। किसी को पता लगे बिना भी सुमिरन और भजन किया

जा सकता है। सच तो यह है कि हमें अपने अभ्यास की ओर किसी का ध्यान नहीं जाने देना चाहिये।

(९४)

हर बात उचित समय पर होती है। 'नाम' के लिये कृपया जल्दी न करें। परेशान न हों। पहले अपनी पूरी तसल्ली कर लें। आपके प्रश्न और शंकायें स्वाभाविक हैं। सन्तमत के साहित्य का, खासकर 'परमार्थी पत्र, भाग २' और 'सार बचन' का पूरी तरह अध्ययन करें जिनमें आपके लगभग सब प्रश्नों के उत्तर मिल जायेंगे और आपको अपनी शंकायें दूर करने में मदद मिलेगी।

यह सच है कि हमारी आत्मा माया के जाल में बहुत बुरी तरह फँसी हुई है। फिर भी हरेक आत्मा में, यहाँ तक कि घोरतम पापियों की आत्माओं में भी, सदा अपने मूल के प्रति कुछ स्वाभाविक झुकाव होता है। यह मालिक की दया है कि अपने मूल-स्थान को वापस जाने की आत्मा की रुझान बढ़ती है और हम परमात्मा की खोज शुरू कर देते हैं। यह उसकी दया है कि हमारा मन उसकी ओर मुड़ता है, और वही ऐसी प्यास और तड़प पैदा करता है जो हमें उनके पास वापस ले जाती है।

कृपया याद रखें कि नामदान और भजन केवल परमात्मा की प्राप्ति के लिये है, न कि सांसारिक पदार्थों तथा महत्वाकांक्षाओं की पूर्ति के लिये। अपने कर्मों के कर्ज़ का स्थिर चित्त और संतोषपूर्ण तरीके से भुगतान करने में भजन-सुमिरन भी हमारी सहायता करता है। हमारी इच्छा-शक्ति भी इतनी दृढ़ हो जाती है कि हम अपने मन की समता और शान्ति आसानी से नहीं खोते और मालिक की मौज में खुश और प्रसन्न रहते हैं।

जो धुन या आवाज़ आप सुनते हैं, वह आन्तरिक रूहानी धुन है। लेकिन जब तक उसे ध्यानपूर्वक सुनने का ठीक और सही तरीका आप न सीख लें, तब तक कृपया उसकी ओर कोई ध्यान न दें।

(९५)

मुझे यह ज़ानकर बहुत अफ़सोस हुआ कि यद्यपि आप दोनों सत्संगी हैं, फिर भी आपकी पत्नी आपसे तलाक चाहती है। आप दोनों को मेरी सलाह है कि प्रेम और स्नेह के साथ एक साथ रहें और जीवन के इन थोड़े दिनों को मालिक की याद में बितायें। आप दोनों को अपना विवाह सफल बनाने की कोशिश करनी चाहिये। ये बहाने व्यर्थ हैं कि हम सहनशील नहीं हो सकते और अपने साथी से स्वभाव और भावना के साथ समझौता करने में असमर्थ हैं। मैं किसी के निजी जीवन में किसी प्रकार से हस्तक्षेप करना नहीं चाहता। यह पूरी तौर पर आपका अपना मामला है।

(९६)

गुरु नानक देव के सम्बन्ध में आपके प्रश्न का उत्तर यह है कि वे एक पूरे सतगुरु थे और उन्होंने कभी भी मछली या मांस खाने की इजाज़त नहीं दी। उनकी लिखी वाणी उनके दृढ़ शाकाहारी होने और कर्म-सिद्धान्त में उनकी आस्था के प्रमाण हैं। एक सन्त के चोला छोड़ने के बाद उसके कुछ गुमराह अनुगामी और कुछ स्वार्थी लेखक भी अपनी बुद्धि के अनुसार, उसके उपदेशों का गलत ढंग से उल्लेख करते हैं और गलत मतलब निकालते हैं। इसी तरह, उन लोगों ने गुरु नानक साहिब की जीवन-गाथाओं को तोड़-मरोड़ दिया है। अपने आप को आज गुरु नानक के अनुयायी कहने वाले मांसाहारी हो गये हैं, इसलिये अपनी खुद की कमज़ोरियों को उचित ठहराने के लिये उन्होंने गुरु साहिबों के बारे में अनेक झूठी और कल्पित कहानियाँ गढ़ ली हैं। जब तक वे यह 'सिद्ध' नहीं करते कि गुरु नानक देव ने भी सामिष भोजन किया था, वे अपने मांसाहार को कैसे उचित ठहरायें। किन्तु गुरु नानक साहिब के उपदेशों से ये तमाम दलीलें झूठी पड़ जाती हैं। एक सन्त की जीवन-कथा उनके उपदेशों के अनुकूल न हो तो हम उसकी सत्यता पर विश्वास नहीं कर सकते।

ईसा मसीह की शिक्षा का मुझे ज्यादा ज्ञान नहीं है, और न मैंने

उनके जीवन के इतिहास के बारे में कोई खोज ही की है। किन्तु पवित्र बाइबिल का जो कुछ थोड़ा-सा अध्ययन मैंने किया है, उसके आधार पर इस बात पर मैं विश्वास करता हूँ कि हज़रत ईसा मांसाहारी नहीं हो सकते थे। क्रिया और प्रतिक्रिया के सिद्धान्त को, जिसे हम कर्म और उसके फल का सिद्धान्त कहते हैं, वे मानते थे। उदाहरणार्थ, वे कहते हैं, 'जैसा तुम बोओगे, वैसा तुम काटोगे।' लेकिन हमें चाहिये कि अपना बहुमूल्य समय इस अनावश्यक गवेषणा या खोज में नष्ट न करें, और इसे इतिहासकारों पर छोड़ दें।

आप अपने शाकाहारी भोजन पर दृढ़ रहें। अपना परम कर्तव्य समझ कर अपना भजन-सुमिरन करते रहें। दूसरों के मन की बात समझने तथा भविष्य को जान लेने की शक्ति (क्लेयरवायेंस) में उलझना ठीक नहीं है, क्योंकि इससे सत्संगी की रूहानी तरक्की में रुकावट आती है और उसका अहंकार बहुत बढ़ जाता है।

(९७)

सभी बड़े नगरों में शोरगुल और बाधाओं की समस्या रहती है, और जैसा कि आपका कथन है, यह समस्या कभी-कभी चौबीसों घण्टे बनी रहती है। सत्संगी को भजन के समय इन बाधाओं से प्रभावित न होने की आदत बना लेनी चाहिये। सुमिरन करते समय शुरू में मुंह को बंद रखते हुए आहिस्ता-आहिस्ता बोल कर सुमिरन करने से हो सकता है कि आपको कुछ सहायता मिले।

(९८)

पूरी एकाग्रता के साथ सुमिरन करते हुए खूब नियमपूर्वक अपने भजन-सुमिरन में लगे रहें। आन्तरिक दृश्यों के पीछे न दौड़ें। वे सही मार्ग में वैसी ही बाधा पैदा करते हैं जैसी कि सांसारिक दृश्यों के पीछे दौड़ने से होती है। मन की इन तमाम चालाकियों से सचेत रहें। दूसरे ग्रहों में क्या हो रहा है, और उनसे आपका क्या संबंध है, इससे कोई सरोकार न रखें। इस संसार से अपनी मुक्ति का खयाल करें केवल इसी उद्देश्य से भजन-सुमिरन में बैठें और दूसरे सब विचारों को त्याग दें।

(९९)

भजन में बैठते समय कृपया केवल अपना दाहिना कान ही बन्द करें और बाँये कान को खुला छोड़ दें। इससे धुन को दाहिनी ओर मुड़ने में मदद मिलेगी। यदि इस पर भी बाँयें कान से सुनायी पड़ने वाली आवाज़ चालू रहे तो आप शब्द को सुनना छोड़कर सुमिरन में लग जायें। भौंहों के बीच के केन्द्र में ध्यान को पूरी तरह एकाग्र रखते हुए पवित्र नामों का सुमिरन करें। अँधेरे में देखते भर रहें और अपने मन को बाहर न भटकने दें। कर्तव्य समझकर भजन-सुमिरन में बैठें और कोई चिन्ता न करें।

(१००)

परलोक विद्या (स्पिरिचुलिज़्म) कोई धर्म नहीं है। सांसारिक लाभ के लिये आत्मा की शक्ति के दुरुपयोग का यह दूसरा नाम है। हमारी सम्पूर्ण आध्यात्मिक योग्यता और रूहानी प्राप्ति का उपयोग केवल परमात्मा का ज्ञान प्राप्त करने के लिये होना चाहिये। इस ऊँचे लक्ष्य के मार्ग पर जो चल रहे हैं, उनका यह अनुभव है कि रूहानी इलाज करने की ताकत का, और अभ्यासी सत्संगी को मिलने वाली अलौकिक शक्तियों का सांसारिक उद्देश्य की पूर्ति के लिये उपयोग करना आध्यात्मिक विकास में बड़ी रुकावट साबित होता है। ऐसे कार्यों से मनुष्य का अहंकार बढ़ता है और दीनता तथा नम्रता की भावना पैदा होने के बजाय गर्व या गुमान को बल मिलता है।

(१०१)

कृपया यह याद रखें कि धन-दौलत अपने-आप में बुरी चीज़ नहीं है। केवल इसका ग़लत इस्तेमाल और अनुचित प्रयोग ही आपत्तिजनक है। परमात्मा के प्रेम में लबालब भरा हुआ एक रूहानी रुझानवाला इन्सान इनका सदुपयोग कर सकता है। आपकी माँ द्वारा छोड़ा गया धन आप सहर्ष स्वीकार कर सकते हैं। इसे परमात्मा द्वारा आपको प्रदान किया हुआ धन समझें, जिसका वह आपसे हिसाब लेगा। उसके प्रतिनिधि के रूप में इसका उपयोग करें।

(१०२)

व कोई व्यक्ति किसी पूरे सतगुरु से स्वयं व्यक्तिगत रूप से या र या उनके प्रतिनिधि के द्वारा (स्वयं उनसे अथवा उनके नुसार प्रतिनिधि के द्वारा) नामदान प्राप्त करने के लिये सम्पर्क नेता है, तो चाहे नामदान पाने के पहले ही उसकी मृत्यु क्यों न ाये, उस व्यक्ति की पूरी जवाबदारी सतगुरु ले लेते हैं। जीवित गुरु से (जिसके साथ उसने ऊपर बताये अनुसार सम्पर्क किया है) मदान के लिये अपनी इच्छा प्रकट करने के समय से ही उस व्यक्ति । सतगुरु की सँभाल और मार्गदर्शन मिलने लगता है।

(१०३)

इस दुनिया के भोगों की क्षणभंगुरता और नाशवानता की छाप हमारे हृदय पर डालने के लिये हमारे जीवन में कठिनाइयांऔर मुसीबतें आती हैं। एक विचारशील व्यक्ति के लिये दुःख के ये क्षण कई बार छिपे हुए वरदान सिद्ध होते हैं।

कृपया याद रखें कि थोड़े समय के बाद विवाह का आकर्षण समाप्त हो जाता है और अपने आप में कदाचित ही सफल होता है। पति व पत्नी दोनों को अपने खुद के प्रयत्नों से इसे सफल बनाना पडता है, और सुखी घर बनाने के लिये कोई कोशिश बाकी नहीं छोडनी चाहिये। आपको दो विवाहो का अनुभव हो चुका है, अब आप यह महसूस कर सकेंगी कि सच्ची शान्ति और प्रसन्नता अपने प्यार को मालिक की ओर मोड़ने पर ही प्राप्त हो सकती है। इससे हममें स्पष्ट रूप से विचार करने की आदत पड़ती है। तब हम अपने जीवन-साथी की त्रुटियों और दोषों की ओर ध्यान न देकर सुखपूर्वक साथ-साथ जीवन बिता सकेंगे। पारिवारिक कलह तभी उत्पन्न होता है जब एक साथी दूसरे से देवताओं के समान गुणों की आशा करता है, या दूसरे पर पूरी तरह अधिकार जमाना चाहता है। इसलिये मे[illegible] सलाह है कि अपने पारिवारिक जीवन को सुखी बनाने की कोशि[illegible]

करें, और यदि इसके लिये अब भी समय बाकी हो तो प्रेम और सेवा के द्वारा अपने पति का हृदय जीतने की चेष्टा करें।

(१०४)

हमारे साथियों में से कोई—पति, पत्नी, पुत्र, पुत्रियाँ, दूसरे रिश्तेदार और मित्रगण—अच्छे या बुरे नहीं हैं। वास्तव में, इस संसार में कुछ भी बुरा नहीं है। वस्तुओं के कुप्रयोग और उनके प्रति अपने दृष्टिकोण के कारण मनुष्य दुःखी होता है। संतोष, तटस्थता और बेलाग रहने की भावना को बढ़ाने की कोशिश करें। मालिक जो दे, उसी में खुश रहें, अपना कर्तव्य प्रेम और लगन के साथ निभायें और जीवन जिस रूप में आये उसे उसी रूप में स्वीकार करें। मालिक से प्रार्थना करें। वह आपकी मदद करेगा।

(१०५)

जब हम अपने ध्यान को भीतर आँखों के केन्द्र पर एकाग्र करने का तरीका सीख लेंगे तभी हमारे सब प्रश्नों और निवेदनों के उत्तर हमें अपने अन्तर में प्राप्त हो सकेंगे। हमें स्वयं अपने अन्तर की गहराई में जाना है, और एक बार अन्दर जाने की आदत पड़ जाये तो जो कुछ हम पर बीतता है या इस दुनिया में हमारे मार्ग में आता है, उसका हम पर कोई असर नहीं होता। हम मालिक की मौज का आसरा ले लेते हैं, और अपने भाग्य-कर्मों को बदलने की इच्छा को त्याग देते हैं। फिर, जिसे हम हताशा या असफलता की मायूसी कहते हैं, वह हमारे मन की समता और शान्ति को नहीं बिगाड़ सकती। इसके विपरीत, ये हमें भीतर सतगुरु की ओर अधिक तेज़ी से ले जाती है। आँखों का केन्द्र हमारे लिये एक ऐसा स्वर्ग हो जाता है जहाँ हम विश्राम और शान्ति के लिये जब चाहें तब जा सकते हैं। विश्वास और भक्ति के साथ सुमिरन और भजन ही वह तरीका है, जिसके द्वारा यह अवस्था प्राप्त की जा सकती है।

(१०६)

इस संसार में हम सबको अपनी-अपनी कोई न कोई परेशानी और

चिन्ता तो रहती ही है, किन्तु हमें इन सब से ऊपर उठना है। स्वास्थ्य ठीक न रहने और तीन छोटे बच्चों की सँभाल में लगे रहने के कारण आपको भजन-सुमिरन में आने वाली कठिनाई को मैं पूरी तरह समझता हूँ। सांसारिक कर्तव्यों से हमें भागना नहीं है, बल्कि अपने दूसरे कर्तव्यों के साथ-साथ ही अपना आध्यात्मिक कार्य भी करते रहना है। कमज़ोर से कमज़ोर स्वास्थ्य में भी सत्संगी सुमिरन और भजन कर सकता है, क्योंकि भजन लेटे हुए भी किया जा सकता है। दूसरे लोग क्या कहते हैं, इसकी चिन्ता न करें। एक दिन, जब हमारा यहाँ का समय समाप्त हो जायेगा, हम सबको यह संसार त्यागना होगा और तमाम प्रेम और मोह को भी पीछे छोड़ना पड़ेगा।

कृपया याद रखें कि मालिक ने मनुष्य-जन्म की यह अनमोल दात अनन्त शान्ति और सुख से पूर्ण अपने सच्चे धाम में वापस पहुँचने के एकमात्र उद्देश्य से दी है। और इसीलिये प्रभु ने हमें यह एक अवसर प्रदान किया है। हमें इस महान और अपूर्व बख्शिश का पूरा उपयोग करने की कोशिश करनी चाहिए।

(१०७)

आप जितना चाहते हैं, उतना यदि आपके चाचा देने से इन्कार करते हैं तो इससे आपको दुःखी या निराश क्यों होना चाहिये? आपको अपने खुद के पैरों पर खड़े होना चाहिये और अपनी जीविका के लिये दूसरे के दान का आसरा नहीं लेना चाहिये। किसी से भी लिये गये एक-एक पैसे का किसी न किसी प्रकार इस जीवन में या अगले जन्म में भुगतान करना ही होगा। इस विश्व में हर वस्तु की अपनी कीमत है, इसलिये मनुष्य जो कुछ लेता है, उसकी पूरी कीमत उसे देर-अबेर चुकानी ही पड़ती है।

(१०८)

मुझे खुशी है कि अपने पिछले पत्र में मैंने जो कुछ लिखा था उसमें से बहुत-सी बातों पर आप सहमत हो गये हैं। मेरे ख़याल में यह अच्छा है कि आपने भोजन के बारे में यह प्रश्न फिर पूछा है।

आप शायद मेरे पत्र का यह मतलव ले वैठे हैं कि मनुष्य की आध्यात्मिक खोज के लिये एक ख़ास प्रकार का भोजन ही काफी है। यह धारणा विलकुल गलत है।

मैं यह विलकुल साफ़ वता देना चाहूँगा कि आध्यात्मिक ज्ञान के हमारे मार्ग में सवसे अधिक महत्व जीवित सतगुरु का है और उस के द्वारा दी गई वैज्ञानिक भजन-सुमिरन की उस शिक्षा का हैं जिसका उद्देश्य तीसरे नेत्र में तथा उसके पार के मण्डलों में चित्त को एकाग्र करना है। इस मार्ग में इन का स्थान सव से पहले आता है और आचरण में वुरी आदतों से वचना तथा अनुचित भोजन और शराव आदि को त्यागना इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिये साधन हैं।

जीवित सतगुरु के मार्ग-दर्शन में भजन-सुमिरन को इस मार्ग में प्रथम स्थान दिया जाता है। यह कहना कि कोई विशेप भोजन ही सवसे ज़रूरी या सव कुछ है, गाड़ी को घोड़े के सामने जोतने के वरावर होगा। यदि किसी खास तरह के भोजन से या उसके परहेज़ से ही हम परमात्मा को पा सकते होते तो यह वड़ी आसान वात होती और जीवित सतगुरु की तमाम तलाश और भजन-सुमिरन का अभ्यास व्यर्थ हो जाता। किन्तु वात ऐसी नहीं है।

वेशक, सही और वैज्ञानिक ढंग से भजन-सुमिरन करने तथा उस में सफलता पाने के लिये शाकाहारी तथा अण्डा-रहित भोजन भी एक आवश्यक साधन है। जैसा कि मैं पहले भी आपको लिख चुका हूँ, माँस और अण्डों का आहार, नशीले पेय और नशीली दवाइयों का सेवन और नशा करने की आदत—ये सव तवज्जह के आँखों के केन्द्र में एकाग्र होने में वाधा डालते हैं। यह वाधा शुद्ध शाकाहारी भोजन और शुद्ध पेय से काफ़ी हद तक टल जाती है। केवल इसी सीमा तक ही हम शाकाहारी भोजन को महत्व देते हैं। भजन-सुमिरन में हमें अपनी तवज्जह को इन्द्रियों के घाट से हटाना पड़ता है, इसलिये इस पर ज़ोर देना कि केवल भोजन ही सव कुछ है, ग़लत होगा।

भजन-सुमिरन के समय इस वात पर ध्यान देना कि आप क्या

खाते और क्या पीते हैं ठीक नहीं है, क्योंकि भजन के वक्त दूसरे दुनियावी विचारों की तरह भोजन-सम्बन्धी विचार भी तवज्जह या ध्यान के आँखों के केन्द्र में एकाग्र होने में बाधक होते हैं। हज़रत ईसा ने भी इस ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया है, वे कहते हैं कि क्या खाते हो और क्या पीते हो इस पर ध्यान मत दो (मैथ्यू ६ : २५)।

आपने कहा है कि एक मारे गये बकरे को और उन अण्डों को जिनसे बच्चे पैदा नहीं हो सकते, तुलनात्मक रूप से मैं समान मानता हूँ। यह सच नहीं है। मैंने काटे गये बकरे और मारे गये आदमी में अन्तर बताते हुए यह कहा था कि रूहानी अभ्यास में दूसरे की बनिस्बत पहला कम बाधक है। इसी तरह जिस अण्डे से बच्चा उत्पन्न होने की सम्भावना नहीं है, वह मारे गये बकरे की तुलना में भजन-सुमिरन में कम बाधक है किन्तु सब्ज़ियों और अनाज का साधारण भोजन, बच्चा न दे सकने वाले अण्डे की तुलना में और भी कम बाधक होगा। तो क्यों न हम केवल वही भोजन करें जिससे हमारे भजन-सुमिरन में कम से कम बाधा उत्पन्न हो ?

अन्त में, मैं एक बार फिर कहूँगा कि शाकाहारी भोजन इस मार्ग में केवल एक रोक के रूप में नहीं रखा गया है, बल्कि भजन-सुमिरन के अभ्यास में व्यावहारिक योग-दान के रूप में इसे अपनाया गया है। मुझे आशा है कि भोजन के प्रश्न पर आपके साथ इस पत्र-व्यवहार में मैं आपका ध्यान अनावश्यक रूप से एक ऐसे मुद्दे पर नहीं खींच रहा हूँ, जिसका कि इस मार्ग की मुख्य आवश्यकताओं में दूसरा नम्बर आता है। पहली और ख़ास आवश्यकता तो एक ऐसे जीवित सतगुरु की तलाश करना है जिसने परमात्मा का साक्षात्कार कर लिया है और उसके मार्ग-दर्शन में ठीक तौर से भजन-सुमिरन करना है ताकि परमात्मा के ज्ञान की वही अवस्था हमें भी प्राप्त हो सके।

(१०९)

विवाह व्यक्ति की निजी और व्यक्तिगत समस्या है, जिसके बारे में सम्बन्धित व्यक्तियों के द्वारा ही उचित निर्णय लिया जा सकता

है। बाहरी व्यक्ति की सलाह इस मामले में ठीक नहीं है और शायद ही कभी सहायक होती हो। जिस लड़की से आप प्यार करते हैं, यदि आपका विश्वास है कि वह इस संसार में आपकी जीवन-यात्रा में एक अच्छी सहगामिनी या साथी बन सकती है, और यदि आप उसकी योग्यता और इच्छा के अनुसार उसका भार उठा सकते हैं तो आप खुशी से उसके साथ विवाह कर सकते हैं।

(११०)

प्यार और स्नेह के साथ अपनी बेटी को उस युवक की सच्ची हालत समझाने की कोशिश करें जिसमें कि वह दिलचस्पी ले रही है। केवल इस बात से कि उसे नामदान मिल चुका है, आपकी लड़की के लिये वह योग्य वर नहीं बन जाता। यदि आपकी तमाम कोशिशों के बावजूद भी वह उस युवक से विवाह करने के अपने विचार पर अटल हो, तो कृपया अपने मन पर परेशानी का बोझ न डालें। हमारा भाग्य एक ऊँची शक्ति द्वारा तय किया जाता है, जिसमें हम कोई हेर-फेर नहीं कर सकते।

(१११)

इस मामले में आपके माता-पिता सबसे अच्छे सलाहकार हो सकते हैं। जो भी सलाह वे आपको देते हैं, वह आपके प्रति उनके गहरे प्रेम से प्रेरित होगी। इसलिये यदि उनकी सलाह आपके अपने विचारों के माफ़िक न हो तो कृपया नाराज़ न हों। मैं आपसे इतना तो कहूँगा कि विवाह को सुखद बनाने के लिये केवल 'प्यार' या 'बेहद प्यार', जैसा कि प्रेमीजन अक्सर कहा करते हैं, हमेशा सबसे अच्छा मार्ग-दर्शक नहीं होता। अन्य बातें और विचारणीय पहलू भी होते हैं जिन पर सावधानी से ग़ौर करना चाहिये। इसलिये अपने जीवन का यह महत्वपूर्ण कदम उठाने से पहले इस मसले से सम्बन्धित सभी अच्छे और बुरे पहलुओं पर बहुत सावधानीपूर्वक और अच्छी तरह से ग़ौर कर लें ताकि बाद में इसके लिये आपको अफ़सोस न करना पड़े।

(११२)

'सार वचन' का जो संदर्भ आपने दिया है कि 'उस जीव को सतगुरु आनन्द के लोक में ले जायेंगे, बशर्ते कि वह उनकी उपस्थिति में हाज़िर रहे'—का अर्थ यह नहीं है कि एक सत्संगी सतगुरु के सामने सदा शारीरिक रूप से मौजूद रहे। इसका अर्थ यह है सन्तमत के उपदेशों का तथा अपने सतगुरु का कभी परित्याग नहीं करना चाहिये।

(११३)

सत्संगियों के साथ अपने व्यवहार में हमें किसी को अपना आदर्श नहीं मान लेना चाहिये। इस बात की सावधानी हमेशा रखनी चाहिये कि उनमें से किसी के प्रति हमारी भावना, श्रद्धा और प्रेम निम्न कोटि के प्रेम के रूप में न बदल जाये। ऐसा प्रेम आसानी से काम वासना में बदल जाता है और सत्संगी अपने सतगुरु और भजन-सुमिरन को भूल जाता है। मन की चालाकियों से सावधान रहें। सहायता और सुरक्षा के लिये मालिक से विनती करें। अपने भजन-सुमिरन में खूब तत्परता और लगन से नियमपूर्वक लगे रहें।

(११४)

आपका यह कहना ठीक है कि सतगुरु अपने शिष्यों को उनकी मेहनत के अनुसार फल और दात देते हैं। इस मार्ग में हम जितनी ज्यादा मेहनत करते हैं हमें सतगुरु से उतनी ही अधिक सहायता मिलती है। जो लोग खुद कोई प्रयास नहीं करते, उन्हें जीवन में प्रतिदिन मिलने वाली बख्शिशों और दया-मेहर का कोई अनुमान नहीं हो सकता। शिष्य को प्राप्त होने वाले ये प्रसाद इतने महान होते हैं कि उनके बारे में स्वप्न में भी अनुमान या अन्दाजा नहीं किया जा सकता, और इसका अनुभव तभी होता है जब हम अपना कर्तव्य अच्छी तरह अदा करते हैं। फिर हमारा हृदय सतगुरु के प्रति आभार से भर जाता है।

जो लोग भजन-सुमिरन में पूरी लगन के साथ कोशिश नहीं करते और सन्तमत के ऊँचे सिद्धान्तों के अनुसार जीवन नहीं बिताते,

आलसी श्रेणी के लोग हैं जो दूसरे पक्ष से सारी बातों की उम्मीद करते रहते हैं। आलस्य से जीवन के किसी भी क्षेत्र में कुछ हासिल नहीं होता।

इस मार्ग पर पूरी लगन के साथ चलने के लिये आपको मेरी शुभ कामनाएँ।

(११५)

आप में काम-वासना सम्बन्धी विचार पैदा होना और भजन-सुमिरन के दौरान भी उनका होना—इस सबका एकमात्र इलाज शादी है और इसके लिये कदम उठाने का निर्णय आपको स्वयं करना पड़ेगा। मन जब एकाग्र होने लगेगा और अन्तर की मिठास का रस पाने लगेगा तो वह अपने आप सांसारिक लज्ज़तों से, जिसमें काम-वासना भी शामिल है, अपना मुंह मोड़ लेगा।

(११६)

वास्तव में हमारे विवाह और संसार के हमारे सब सम्बन्ध हमारे कर्मों के कर्ज़ के भुगतान के लिये होते हैं। कर्ज़ का भुगतान हो चुकने पर कर्ज़दार चला जाता है।

काम की सहज भावना का असली उद्देश्य क्या है, इसका हमें एहसास होना चाहिये। इसकी उपयोगिता वंश-वृद्धि के लिये है, किन्तु अपनी अज्ञानतावश हम इस दैवी शक्ति को अनावश्यक इन्द्रिय-भोगों में बर्बाद किया करते हैं, जिनकी कभी तृप्ति नहीं होती। अग्नि में जितना ज्यादा तेल डालें उतनी ही उसकी ज्वाला भड़कती है। इस पाशविक आवेश पर अंकुश लगाने के लिये केवल थोड़ी इच्छा-शक्ति और दृढ़ निश्चय की आवश्यकता है।

(११७)

एक सत्संगी को अपने क्रोध पर सदा काबू रखना चाहिये, और इस ढंग से बर्ताव करना चाहिये कि अपनी और पूरे सत्संग की इज़्ज़त बढ़े।

आपको न तो मांस खाना चाहिये, न किसी दूसरे को खिलाना

चाहिये। किन्तु आपके घर में किरायेदार या किसी अन्य हैसियत से रहने वाले, जिन पर आपका कोई अधिकार नहीं है, इच्छानुसार जो चाहें खा सकते हैं। उनके कर्मों के लिये आप जवाबदेह नहीं हैं।

(११८)

मालिक के द्वार सबके लिये खुले हैं। उससे मिलने की हम में जितनी चाह हो सकती है, उससे कहीं ज्यादा चाह से वह हम से मिलना चाहता है। वह प्रभु ही हमारे हृदय में उससे मिलने की प्रेरणा उत्पन्न करता है।

सन्तमत का कार्यक्रम बहुत सादा है। मनुष्य को केवल मांसाहार मदिरा-पान तथा अन्य बुरी आदतों से परहेज़ करना पड़ता है, एक पवित्र और सच्चरित्र जीवन बिताना पड़ता है और नामदान के समय बताई गई विधि के अनुसार प्रतिदिन ढाई घण्टों तक भजन-सुमिरन करना पड़ता है।

जिस अकेलेपन का आपको अनुभव होता है वह वास्तव में एक छिपा हुआ वरदान है। हरएक के जीवन में एक ऐसा अवसर आता है जब उसे लगता है और अनुभव होता है कि इस दुनिया में ऐसा कोई नहीं है जिसे वह अपना कह सके। ज़िन्दगी भर हम तरह-तरह के लोगों को चुनते हैं और उन्हें अपना बनाने की कोशिश करते हैं, पर कुछ समय के बाद हम महसूस करते हैं कि अब भी 'कुछ' बाकी रह गया है। अन्त में हमारा अनुभव हमें बताता है कि ये तमाम प्यार स्वार्थ-पूर्ण हैं। एक व्यक्ति दूसरे से हमेशा कुछ न कुछ चाहता ही रहता है। अकेलेपन की यह भावना तभी समाप्त होगी, जब हमारी आत्मा वापस अपने स्रोत, स्वयं परमात्मा में जा समायेगी। असल में यह भावना आत्मा की अपने मालिक के प्रति प्यास का परिणाम है, और इसका स्वागत करना चाहिये। सही तरीके से इसका उपयोग होने पर यह हमें परमात्मा की ओर ले चलेगी।

आपके दूसरे प्रश्नों के उत्तर सन्तमत के साहित्य का अध्ययन करने और नामदान प्राप्त करने पर आपको स्वयं मिल जायेंगे।

शहद खाना मना नहीं है। परमात्मा आप पर दया-मेहर करे।

(११९)

नेकी और ईमानदारी के साथ अपनी रोज़ी कमाने के लिये पूरी मेहनत करें। लाटरियों के पीछे पड़ कर अमीर बनने की कोशिश करना व्यर्थ है। हमारे भाग्य में जो लिखा होता है, वही मिलता है।

(१२०)

आपके पत्र को बहुत सावधानीपूर्वक पढ़ने के बाद मैं इस नतीजे पर पहुँचा हूं कि आपकी बेसब्री, रूहानी उन्नति के लिये आपका उतावलापन और नामदान के महत्व को पूरी तरह से समझ न पाना ही आपकी निराशा का कारण है। परमात्मा ने दयापूर्वक हमें इस रूहानी मार्ग के लिये चुना है, इस बात की हमें खुशी होनी चाहिये। यदि हम खुश नहीं हैं, तो इसका कारण यही है कि नामदान के महान प्रसाद और सौभाग्य का हमें अनुमान नहीं है।

कृपया क्षण भर के लिये शांतिपूर्वक विचार करें। क्या आप अपने देश के उन सौभाग्यशाली व्यक्तियों में से नहीं हैं जिन्हें परमात्मा ने इस मार्ग के लिये चुना है? आपके देश की जनसंख्या कितनी बड़ी है, और वहाँ निवास करने वाले किसी व्यक्ति के लिये सन्त-मार्ग से परिचित होना कितना कठिन है, और परिचित होने पर भी इस मार्ग में नामदान प्राप्त करना कितना मुश्किल है। क्या आप समझते हैं कि आपने अपने ही प्रयत्नों से इस मार्ग की खोज और प्राप्ति की है? तो फिर आप सतगुरु के पास अब आने के बजाय इसके पहले क्यों नहीं आये? हम सब अन्धे हैं। क्या एक अन्धा व्यक्ति किसी आँखों वाले को पकड़ सकता है?

अधीर न हों। हर बात अपने समय पर ही होती है। क्या जन्म लेते ही कोई बच्चा बोल और चल-फिर सकता है? क्या कोई वृक्ष अंकुर अथवा नन्हें पौधे की अवस्था में फल दे सकता है?

सो कृपया धैर्य रखें और श्रद्धा और भक्ति के साथ अपना भजन-

सुमिरन करने और सन्तमत के साहित्य का अध्ययन करने में नित्य कुछ समय दें। हमारे हृदय में अपना प्रेम कब बढ़ाया जाये, यह वह परमात्मा ही पूरी तरह से जानता है। सब-कुछ उस पर छोड़ दें। सभी बातों को अपनी नहीं बल्कि उसकी इच्छानुसार होने दें। इस सीधी सी बात को समझें, इससे आप सदैव संतुष्ट और प्रसन्न रहेंगे।

(१२१)

सवेरे किये हुये भजन-सुमिरन के बाद सोना नहीं चाहिये, क्योंकि अभ्यास से प्राप्त हुए आनन्द को नींद नष्ट कर देती है। पर अभ्यास के फलस्वरूप कभी नींद आ जाये तो आपकी आत्मा 'अन्तर में प्रवेश' कर जाती है, और ऐसे दृश्य देखती है जैसे कि आपने देखे हैं। इसमें कोई हर्ज नहीं और न ही कोई परेशान होने की बात है।

रात को सोते समय शब्द को सुनते हुए सो जाना अच्छा है। नींद आते आते शब्द सुनने में कोई हानि नहीं है। बल्कि सोते समय सुमिरन, ध्यान या शब्द को सुनने की आदत डाल लेनी चाहिये।

(१२२)

कृपया प्रेम और स्नेह के साथ अपनी माँ को यह समझाने की कोशिश करें कि अपने भजन-सुमिरन करने से आप ईसा मसीह को अपने जीवन से अलग नहीं कर रहे हैं, बल्कि उनके उपदेशों का सही रीति से पालन करने और अपने अन्तर में उनके दर्शन करने की कोशिश कर रहे हैं। उनके दर्शन करने और उनकी शिक्षा का पालन करने का यही एक-मात्र उपाय है।

अपने माता-पिता से अलग रहने की कोई ज़रूरत नहीं, बल्कि उनके साथ रह कर आपको अपने प्रेम-पूर्ण आचरण के द्वारा, जैसा कि एक सच्चे ईसाई का होना चाहिये, उन्हें जीतना है।

(१२३)

धूम्रपान एक गंदी आदत है। इसे छोड़ने का प्रयत्न करें। केवल थोड़ी इच्छा-शक्ति और संकल्प की आवश्यकता है। कई लगातार धूम्रपान करने वाले व्यक्ति तक इसे छोड़ने में सफल हुए हैं। जो दूसरों

ने किया है, वह आप भी कर सकते हैं। जब कोई किसी काम को करने का दृढ़ निश्चय कर लेता है, तब प्रभु की मदद भी मिलती है।

(१२४)

हाँ, पाँच पवित्र नामों का सुमिरन करते समय भी कई बार शब्द सुनाई देने लगता है। सुमिरन के द्वारा चित्त के एकाग्र होने पर शब्द सुनाई देने लगता है। शब्द तो हमेशा ही मौजूद रहता है, किन्तु हमारा ध्यान फैला हुआ है और इसलिये शब्द को नहीं सुन पाता।

(१२५)

हमें कभी क्रोध नहीं करना चाहिये और न किसी को अपशब्द बोलने चाहियें। इससे स्पष्ट चिन्तन का अभाव प्रकट होता है। आध्यात्मिक प्रगति में रुकावट पैदा होने के अलावा, क्रोध से स्वास्थ्य को भी काफ़ी नुकसान पहुँचता है।

(१२६)

'यह अच्छी बात है कि अपनी काम-वासना के बारे में आप इतने [illegible]व दी हैं, लेकिन हर किसी से काम-वासना की पूर्ति करने की चाह तथा नशीली वस्तुओं की कामना, न केवल आपके आध्यात्मिक स्वास्थ्य के लिये अत्यन्त हानिप्रद है, बल्कि आपके तन और मन को भी बीमार बनाती है। इस प्रकार के निम्न भाव आपके शरीर और मन दोनों को बीमार बना देंगे। ऐसे भोगों में आप जितने ज्यादा प्रवृत होंगे, उतनी ही ज्यादा उनके लिये आपकी भूख बढ़ेगी। इसलिये आपको मेरी सलाह है कि ऐसी आदतें बिलकुल त्याग दें और मन को स्वस्थ वृत्तियों में लगाये रखें और साथ ही साथ सन्तमत का साहित्य भी पढ़ते रहें। आपको चाहिये कि अपने विचारों को सही दिशा दें और अपनी दूषित इच्छाओं को उचित ठहराने की कोशिश न करें। सही सोच-विचार एक दिन आपको स्वस्थ ढंग से जीने का तरीका अपनाने के लिये साहस और शक्ति प्रदान करेगा।

मनुष्य को प्राप्त हो सकने वाली ऊँचाइयों की कोई सीमा नहीं होती, और न ही उसके डूबने के लिये गहराइयों की कोई सीमा है।

यह आपके ऊपर है कि आप आनन्द और सुख की ऊँचाइयों तथा दुःख और दर्द की गहराइयों में से किसे चुनें। मैं आपको यक़ीन दिलाता हूँ कि यदि आप अपना कर्तव्य करेंगे तो परमात्मा भी आपको अपनी कमज़ोरियों पर विजय प्राप्त करने के लिये शक्ति प्रदान करेगा। मैं आपको सलाह भर दे सकता हूँ। इस पर चलना आपका काम है।

(१२७)

काम-वासना में आपकी प्रवृत्ति का कमज़ोर होना परमात्मा की दया की निशानी और आपकी रूहानी तरक्क़ी की सूचना है। पति और पत्नी के बीच के पारस्परिक यौन-सम्बन्धों को बहुत गलत समझा गया है और इसका दुरुपयोग हुआ है। यह एक शारीरिक क्रिया मात्र है और केवल वंश-वृद्धि के उद्देश्य से प्रकृति ने इसकी व्यवस्था की है। विवाह एक बहुत पवित्र सम्बन्ध है, लेकिन इन्सान एक जानवर से भी बदतर आचरण करता है और अपने आपको बर्बाद कर लेता है।

अगर आपके पति को भी नामदान मिल जाये, तो आप दोनों एक से विचार के हो जायेंगे और अपना जीवन सुख से बिता सकेंगे। लेकिन तब तक मैं आपको कोई ऐसा काम करने की सलाह नहीं दूगा जिससे तलाक़ की नौबत आ जाये। जो परिस्थितियाँ आपके सामने हैं उनमें रहते हुए कृपया अपने पति के प्रति अपने कर्तव्य का निर्वाह करें और उन्हें उनकी इच्छा के अनुसार प्रसन्न रखें। जब आप केवल उन्हें प्रसन्न रखने के लिये उनकी इच्छा मानती हैं, तो इससे आपके आध्यात्मिक जीवन पर ज्यादा बुरा प्रभाव नहीं पड़ेगा।

कृपया अपने भजन-सुमिरन में नियमपूर्वक लगी रहें और कोई चिन्ता न करें। सब-कुछ ठीक हो जायेगा।

(१२८)

पिछले जन्म के बारे में चिन्ता न करें। अपने वर्तमान जीवन का सही उपयोग करें। अन्तर में कुछ प्रगति कर लेने पर आप सब-कुछ जान सकेंगे।

(१२९)

सूक्ष्म जगत में, पहली रूहानी मंज़िल के नीचे, अर्थात

स्वर्गों, बैकुण्ठों तथा इसी तरह के स्थानों में सुख, ईर्ष्या आदि उसी प्रकार महसूस होती हैं जिस प्रकार इस संसार में। किन्तु इसके बाद के मण्डलों में इनका अस्तित्व नहीं रहता।

(१३०)

अपने कुत्ते को धीरे-धीरे निरामिष भोजन पर लाने की कोशिश करें। किसी व्यक्ति या जानवर को माँस खिलाना उचित नहीं है।

(१३१)

आपके विस्तृत तथा सच्ची जिज्ञासा से पूर्ण पत्र के लिये धन्यवाद। मैं यह यकीन दिलाना चाहता हूँ कि जब भी ज़रूरी समझें मुझे पत्र लिख सकते हैं और परामर्श के लिये बेखटके अपने विचार प्रकट कर सकते हैं। इससे मुझे कोई परेशानी नहीं होगी। वास्तव में मेरे पास आने वालों की आध्यात्मिक आवश्यकताओं की पूर्ति करना मेरा कर्तव्य है।

आपका व्यक्तिगत इतिहास सचमुच दिलचस्प है, और क्या ही अच्छा होता अगर आपने मुझसे पहले सम्पर्क किया होता। लेकिन हर बात के लिये एक समय होता है। आप विश्वास रखें कि भारत में अपना अध्ययन समाप्त करने के बाद और अपने देश वापस जाने से पहले, जब आप मुझसे मिलेंगे तब मैं आपकी सहायता के लिये जो कुछ हो सकेगा, करूँगा। आप शाकाहारी हैं, यह विशेष लाभप्रद है। आपको यह जानकर खुशी होगी कि अमेरिका में सत्संगियों की संख्या काफी है, और वहाँ दो केन्द्र हैं—एक शिकागो में तथा दूसरा केलिफोर्निया में—जो सन्तमत के जिज्ञासुओं की सहायता करते हैं।

प्रात:काल जल्दी उठकर प्रार्थना और ध्यान करने की आपकी आदत अच्छी है। विद्यार्थी के लिये आधा घण्टा ही काफ़ी है, क्योंकि उसे अध्ययन भी करना पड़ता हैं। जैसा कि आप करते आ रहें हैं, इस अभ्यास को करते रहें, लेकिन ख़याल को दोनों आँखों के बीच में जमाये रखने का विशेष ध्यान रखें।

एक स्थान से दूसरे स्थान और एक विचार से दूसरे विचार पर

भटकने की मन की आदत है । तवज्जह को निचले केन्द्रों में गिरने से बचाने के लिये आप दोनों भौहों के बीच में एक दीपक के प्रकाश या ज्योति की अथवा गुरु के स्वरूप की कल्पना कर सकते हैं । मन ही मन आप 'राधास्वामी' शब्द को भी दोहरा सकते हैं, इससे मन को स्थिर और शांत करने में आपको सहायता मिलेगी ।

(१३२)

किसी भी गुट में शामिल होने की कोशिश न करें । हमें ऐसे छोटे दलों में विभाजित नहीं होना चाहिये, बल्कि अपने आप को एक ही मार्ग पर चलने वाले भाई और बहन समझना चाहिये । हम एक ही पिता के बच्चे हैं, और हम सब उसके पास लौटने के लिये व्याकुल हैं ।

(१३३)

इसमें सन्देह नहीं कि रोग और कुष्ठ नहीं, केवल कर्मों के कर्ज के भुगतान ही हैं; पर शारीरिक बीमारी होने पर हमें हमेशा उचित चिकित्सा करानी चाहिये । इससे भी कर्मों के कर्ज़ का कुछ भाग भुगतान होता है । इसके अलावा, हम सब तन्दुरुस्त होना चाहते हैं, और हमें से अनेक उचित चिकित्सा के द्वारा अपनी शारीरिक बीमारियों से मुक्त भी हो जाते हैं ।

कृपया अपने भजन-सुमिरन को पूरा समय देते रहें, इसमें आपको काफ़ी मानसिक शान्ति प्राप्त होगी । केवल शरीर को ही कष्ट होता है, आपके आध्यात्मिक अस्तित्व यानी आत्मा को, जिसे कोई भौतिक बीमारी भेद नहीं सकती, कोई कष्ट नहीं होता । यह उस अनन्त, अमर, स्रष्टा का एक अंश है । हमारी आतमा आनन्द के उस समुद्र की एक बूंद मात्र है । आपकी लगन और भक्ति से मैं बहुत प्रसन्न हूँ ।

(१३४)

मुझे खुशी है कि जो फोटो आपको मिला वह आपको पसन्द आया । लेकिन निर्जीव चित्र का ध्यान रखना उचित नहीं । आँखों के केन्द्र पर अपने ध्यान को जमाये रखें और मन की तवज्जह से

पवित्र नामों का सुमिरन करें। यह सुमिरन बहुत ज़रूरी है, भले ही आपको यह यंत्रवत प्रतीत हो। आँखों के बीच में मन को केन्द्रित करके किया गया सुमिरन ही शरीर के निचले भागों से सम्पूर्ण चेतना को खींचकर आँखों के केन्द्र पर लाता है। सुमिरन एकाग्रता में सहायक होता है, और बाहरी दुनिया से मन को वापस लाता है। यह सुमिरन ही आपको सतगुरु के रूहानी स्वरूप तक ले जायेगा।

कोई भी व्यक्ति अपनी या किसी और की आयु नहीं बढ़ा सकता। जो साँसें हमें प्रदान की गयी हैं, उनकी संख्या हमारे जन्म लेने के पहले ही निश्चित की जा चुकी थीं और उसमें कोई परिवर्तन नहीं कर सकता। हमारा ध्येय इस नश्वर संसार और इसके पदार्थों से अपने आपको विरक्त करना है, सांसारिक वस्तुओं के मोह में पड़ना या उस मोह को अधिक बढ़ाना नहीं है। केवल दो चीज़ें ही अन्त में हमारे साथ जायेंगी। वे हैं हमारा भजन-सुमिरन और सतगुरु। बाकी सब वस्तुएँ हमारी मृत्यु के समय यहीं छूट जायेंगी। हमेशा सतगुरु के उस स्वरूप का ध्यान करें जैसा आपने उन्हें देखा है, न कि उनके निर्जीव फोटो का।

(१३५)

सन्तमत किसी भी तरह के कर्मकाण्ड और रीति-रिवाज़ों में विश्वास नहीं करता। वास्तव में ऐसी तमाम बाहरी क्रियाओं से हमें हटाकर यह हमारे मन को अन्दर की ओर मोड़ता है। कर्मकाण्ड तो हमें संसार में और फँसाते हैं जिससे हम छुटकारा पाना चाहते हैं। एक बार आत्मा के शरीर से निकल जाने के बाद उसकी याद में की गयी कोई भी क्रिया उसके कोई काम नहीं आ सकती। मृत्यु, जन्म, विवाह आदि बातों के लिये हरएक धर्म में अलग-अलग रीति और रिवाज होते हैं और इनमें से अपनी इच्छानुसार किसी को भी मानने की सब को छूट है। जहाँ तक आध्यात्मिक प्रगति का सवाल है, ये सब अर्थ-हीन हैं और इनका रूहानियत से कोई सम्बन्ध नहीं है। ऐसी बातों के सोच-विचार में न उलझें और उस आंतरिक रूहानी यात्रा को तय करने की कोशिश करें जो आपके सामने है।

और यह अहंकार क्यों ? अपने बारे में इतनी चिन्ता क्यों ? हमारे और परमात्मा के बीच में आने वाला यह अहं ही तो है, जिसको हम कुचलना चाहते हैं। अपना अस्तित्व खोकर जैसे ही हम अपने आपको उसमें लीन कर देते हैं, वह मालिक सामने प्रकट हो जाता है। हमारा एक-मात्र शत्रु अहंकार है, जो हमें इस दुनिया के साथ जोड़कर रखता है, और हमारा सारा संघर्ष इसे अपने अन्दर से निकाल बाहर करने का ही है।

(१३६)

मैंने आपका पत्र ध्यानपूर्वक पढ़ा और आपको मेरी सलाह है कि आप अपने पिछले सब अनुभवों को भूल जायें और उस स्त्री ने जो कुछ आपका हाथ देखकर बताया, उसे भी भूल जायें। जब किसी को सतगुरु मिल जाता है, तब सतगुरु ही उसके जीवन का मार्ग-दर्शन करता है, और वही उसकी निगरानी करता है।

अपने भविष्य और रोज़गार के बारे में कोई शंका न करें। यदि आप सच्चे मन से कड़ी मेहनत करेंगे, तो आप सफल क्यों नहीं होंगे ? अपनी पढ़ाई में अपना पूरा चित्त लगायें और आपकी मेहनत का नतीजा अच्छा होगा। अपने मन में निराशावादी विचार अथवा बेसहारा, असफल या हताश होने की भावना कभी न आने दें। जीवन बहादुरों और आशावादियों के लिये है। हम सबको अपना-अपना प्रारब्ध भुगताना है, और जो कुछ भाग्य में निश्चित है उसमें परिवर्तन नहीं हो सकता, फिर नाहक चिन्ता क्यों की जाये ?

सतगुरु में भरोसा रखें, वे हमेशा आपके साथ हैं और अपने प्यार और दया-मेहर की वर्षा कर रहे हैं। प्रेम और भक्ति के साथ नियम पूर्वक भजन-सुमिरन करते रहें। इससे मन में बहुत चैन, शान्ति, तनाव से मुक्ति व आराम की भावना आयेगी। भजन-सुमिरन करने और जीवन के प्रति सही रुख अपनाने से स्वाभाविक रूप से उन सब पर भी प्रभाव पड़ेगा जिनके आप सम्पर्क में आते हैं।

(१३७)

'विश्वव्यापी चेतना' से आपका वास्तविक अर्थ क्या है, यह मुझे नहीं मालूम। किन्तु अपने पत्र में आपने जो कुछ कहा है उससे मैं यही समझ सका हूं कि आपका मतलब उस दिव्य शक्ति से है जिसे हम परमात्मा, शब्द, दिव्य-धुन, परमपिता आदि अनेक नामों से पुकारते हैं। यह शक्ति सर्वव्यापक है और इसीलिये कभी-कभी इसे 'विश्वव्यापी चेतना' कहा गया है।

सन्त-मत के अनुसार परमात्मा की प्राप्ति आत्म-साक्षात्कार अथवा अपने आपको जानने के बाद ही सम्भव है। इसमें सन्देह नहीं कि यह विश्वव्यापी शक्ति सर्वत्र और सबमें व्याप्त है। सारी सृष्टि का वह स्रष्टा है, किन्तु न तो हम उसे देख सकते हैं, न अपनी अदृश्य अवस्था में वह हमें कोई लाभ ही पहुँचा सकता है। जब भजन-सुमिरन के द्वारा अन्तर में अपनी आतमा को शब्द के साथ जोड़कर, अपने अन्तर में उस शवित को पहचान लेते हैं, तो उसके बाद हम जहाँ भी देखते हैं, उसे ही पाते हैं। इसलिये पहले हमें उसे अपने अन्दर प्राप्त करना है, ताकि वह हमें अभी और आगे आने वाली ज़िन्दगी में काम आ सके।

भजन-सुमिरन नियमपूर्वक करें, और जब आप उस सुरीली धुन के सम्पर्क में आयेंगे, तो सब बातें समझ में आ जायेंगी।

(१३८)

हम सबके अपने-अपने बोझ हैं जिन्हें जहाँ तक हो सके प्रभु की पूरी शरण लेकर सहने की कोशिश करनी चाहिए। इस जीवन में उतार-चढ़ाव आते ही रहते हैं और परिस्थितियाँ हमेशा बदलती रहती हैं। कोई भी सुख या दुःख, तन्दुरुस्ती या बीमारी हमारे साथ हमेशा नहीं रहती।

(१३९)

सत्संगियों में सच्चा प्रेम और मेल-जोल होना चाहिये। इस संसार में हमें किसी की, खास कर सत्संगी भाई या बहन की भावना

को ठेस नहीं पहुँचानी चाहिये। अगर किसी को ऐसा लगे कि उसने किसी के दिल को चोट पहुँचायी है, तो उसे अपना दोष स्वीकार करके माफ़ी माँगते हुए तुरन्त अपनी भूल सुधार लेनी चाहिये। इस प्रकार अपराध और चिन्ता के बादल छँट जाते हैं और फिर से प्रेम छा जाता है।

परेशान न हों, बल्कि रोज़ प्रेम और विश्वास के साथ अपना भजन-सुमिरन करते रहें। अपने हृदय को समस्त कमज़ोरियों से मुक्त रखें। तब ध्यान शीघ्र आँखों के केन्द्र में एकाग्र हो जायेगा। जिस समय सत्संगी भजन में बैठना चाहता हो, उस समय उसके दिल में बैर या इस तरह की कोई भावना नहीं रहनी चाहिये। हृदय जब हर प्रकार के अच्छे या बुरे विचारों और इच्छाओं से ख़ाली रहता है, तब ही मालिक की दया हम पर उतरती है। अगर मन पहले से ही सांसारिक भावनाओं और वासनाओं से भरा हुआ है, तो प्रभु की दया को आने के लिये स्थान ही कहाँ है? रोज़ भजन-सुमिरन करते हुए और परमात्मा को हमेशा मन में याद करते हुए सुखी और तनाव-रहित जीवन बितायें।

(१४०)

मेरी समझ में नहीं आता कि यह समझकर कि आप पूरी तरह पवित्र नहीं हैं, आप भजन-सुमिरन क्यों कम करते हैं। वास्तव में भजन-सुमिरन ही हमें पवित्र बनाता है हमारे बुरे से बुरे पापों को धो डालता है। भजन-सुमिरन का मुख्य उद्देश्य ही हमारे कर्मों के बोझ को हलका करना और हमारी आत्मा को उस शब्द-धुन के साथ जोड़ना है, जो हम में से प्रत्येक के अन्दर गूंज रही है। कृपया भजन-सुमिरन में लापरवाही न करें, बल्कि हर रोज़ सही भावना के साथ भजन को पूरा समय दें।

आपने व्यक्तिगत रूप से सतगुरु के दर्शन नहीं किये हैं, इसलिये सुमिरन करते समय सतगुरु के स्वरूप का ध्यान न करें, बल्कि अपने ध्यान को आँखों के केन्द्र में स्थिर करके आँखों के बीच में अंधकार

में देखते रहें (इन शारीरिक नेत्रों से नहीं, वल्कि तवज्जह के द्वारा) आँखों के केन्द्र में जब आपको एकाग्रता पक्की हो जायेगी और मन स्थिर हो जायेगा, तव सतगुरु का स्वरूप अपने आप प्रकट होगा, और तव आप जितना चाहें उसका ध्यान कर सकते हैं। सुमिरन द्वारा एकाग्रता के साथ मन में पाँच पवित्र नामों को दोहराने से यह सव होगा।

(१४१)

याद रखें कि हम सवको अपना प्रारब्ध भुगतना है, जो कि हमारे पिछले जन्मों के अपने कर्मों का नतीजा है। हमें सुख और दुःख से निर्लिप्त रहते हुए, और सतगुरु में अपार श्रद्धा रखते हुए खुशी-खुशी जीवन विताना है।

(१४२)

कृपया याद रखें कि हमारा मन एक अत्यन्त शक्तिशाली नका-रात्मक शक्ति है, जो हमेशा हमें यहाँ इस दुनिया में रखने की कोशिश करती रहती है और हमें भटकाने की और जितना हो सके मार्ग से दूर ले जाने की कोशिश करती रहती है। विश्व की रचना मन ने की है और इसकी बैठक या सदर मुकाम दूसरी मंज़िल में है। यह जो चाहे सो कर सकता है। आपके सतगुरु की तरह बोल सकता है और आपके सतगुरु के स्वरूप तक को धारण कर सकता है। पर कसौटी आपके पास है। सतगुरु पीछे से वात नहीं करते। वह हमेशा आमने-सामने आकर आपसे वात करेंगे। यह मन ही है जो चालवाज़ी करता है और आपको इससे सावधान रहना चाहिये। इसके अलावा, अपने ... में आपने जिन शब्दों और स्थितियों का वर्णन किया है, उनसे ...गुरु का कोई सरोकार नहीं है। इन वातों को कोई महत्व न दें। ...न के समय चित्त को आँखों के केन्द्र में रख कर श्रद्धा और भक्ति ...ाथ सुमिरन करते रहने के सिवाय किसी अन्य वात पर ध्यान ... ।

इस 'मैं—मेरी' का, इस अहं का त्याग करना इतना आसान नहीं ...ह तभी छूटता है जव अभ्यासी मन से पूरी तरह छुटकारा पा

कर दूसरी मंज़िल पार कर लेता है। अपने अन्दर दीनता उत्पन्न करने की हमेशा कोशिश करनी चाहिये, किन्तु मन के रहते इस अहं से मुक्ति पाना सम्भव नहीं है।

(१४३)

यदि आपको ऐसा लगे कि सुमिरन के आसन में ही आप शब्द सुन सकते हैं, तो आप वैसा कर सकते हैं। ध्येय तो यह है कि ध्यान कहीं बाहर न जाये और पूरे समय आँख के केन्द्र में बना रहे। शरीर को सुन्न हो जाना चाहिये और समस्त चेतना को आँख के केन्द्र पर सिमटना चाहिये। यह अवस्था किसी भी आसन में प्राप्त हो सकती है, बशर्ते कि हम शरीर को हिलाएँ-डुलाएँ नहीं, बल्कि उसे एक ही आसन में पूरी तरह स्थिर और गतिहीन बनाये रखें। शुरू-शुरू में होने वाले दर्द, असुविधा और इसी तरह की बातों को सहन करना पड़ता है। ये इस बात के प्रमाण हैं कि चेतनता उन अंगों को छोड़ कर ऊपर चढ़ रही है। समय के साथ यह सिमटाव जल्दी होने लगेगा और जैसे-जैसे आप सिमटाव के आदी होते जायेंगे, ये कष्ट भी गायब होने लगेंगे।

(१४४)

आपके आन्तरिक अनुभव अच्छी एकाग्रता और अन्तर में होने वाली प्रगति के लक्षण हैं। आसनों के बारे में कृपया परेशान न हों। आप किसी भी सहज और सुविधाजनक आसन में बैठ सकते है, असली चीज़ एकाग्रता है, न कि आसन।

(१४५)

हमारे जन्म के पहले ही हमारे वर्तमान जीवन की छोटी से छोटी बातें निश्चित हो चुकी हैं और उनमें अब कोई भी परिवर्तन नहीं किया जा सकता। हरएक को अपना प्रारब्ध भुगतना पड़ता है, और मुख पर मुसकान और हृदय में कृतज्ञता की भावना के साथ उसे भुगत लेना ही अच्छा है।

इस संसार से, जो हमेशा दु:ख और मुसीबतों का स्थान बना

रहेगा, सन्तों की शिक्षा छुटकारा पाने का मार्ग बताती है। न नशीली चीज़ें, न बन्दूक और न ही ज़हर हमारी समस्याओं का इलाज है। हमारे समस्त कर्म, जो हमारे विचारों और क्रियाओं के परिणाम हैं, हमारे साथ दूसरे जन्म में जाते हैं और यदि हम आत्मघात करते हैं, तो उसका पाप भी उनमें जुड़ जाता है। अपनी ज़िन्दगी के दिन कम करके हम जो बोते हैं, उसको काटने से कभी नहीं बच सकते। इसके विपरीत, हम अपना बोझ और भी भारी बना लेते हैं। न तो एल.एस.डी. और न ही दूसरी ऐसी चीज़ें हमारी समस्या को सुलझा सकती हैं। हमें शरण और आसरा प्रदान करने वाला केवल सतगुरु और वह शब्द है, जो हरएक मनुष्य के अन्दर गूंज रहा है। यह परमात्मा की आवाज़ है जो सबको आँखों के केन्द्र के ऊपर से बुला रही है। सतगुरु की दया से जब हम अपने मन और आत्मा को शब्द की उस आवाज़ के साथ जोड़ते हैं तब वह हमें अन्तर में ऊपर की ओर वहाँ खींच ले जाती है जहाँ से यह आती है, और जो हमारा धुरधाम है।

(१४६)

अंधकार के राजा काल के इस देश से जल्दी से जल्दी बाहर निकलने के लिये पूरी कोशिश करनी चाहिये। सुमिरन पर अधिक ज़ोर दें और अपने मन में हर वक्त सुमिरन करते रहने की कोशिश करें। शुरू-शुरू में सुमिरन बहुत ही ज़रूरी है। यह सुमिरन ही है जो एक दिन आपको अन्तर में सतगुरु के रूहानी स्वरूप तक ले जायेगा।

(१४७)

कृपया इतने उदास और हताश न हों। अपने दोषों और अवगुणों को जान लेना अच्छा है, लेकिन उनके लिये दु:खी रहने के बजाये उनसे छुटकारा पाने के लिये कोई उपाय ढूंढना चाहिये। यदि आपने ईमानदारी के साथ परमात्मा के प्रति अपने कर्तव्यों का पालन अब तक नहीं किया है, तो अब शुरू कर दें। जो हमें करना चाहिये, करना ही पड़ेगा। मेहनत और कोशिश के बिना कुछ नहीं मिलता। हर रोज़

की कीमत चुकानी पड़ती है। बहादुर और साहसी बनें। परमात्मा आप से जो जवाबदारी पूरी कराना चाहता है, उससे जी न चुरायें। पूरी मेहनत और लगन के साथ उसके प्रति अपना फ़र्ज़ अदा करें और बाकी सब-कुछ उस पर छोड़ दें।

सतगुरु अपने शिष्य को कभी नहीं छोड़ते, हालांकि कुछ शिष्य सतगुरु से दूर भागने की कोशिश करते हैं। सतगुरु ने एक जिम्मेदारी ली हुई है, वे उसे अदा करने में कभी नहीं झिझकते। उनसे नामदान प्राप्त करने वाले हरएक शिष्य को वे परमात्मा तक पहुँचा कर ही रहेंगे। मगर उनके उपदेशों पर चलकर हम उनका काम अधिक आसान कर सकते हैं। पूरी लगन के साथ अपने भजन-सुमिरन को समय दें।

(१४८)

कामवासना और रूहानी प्रगति एक-दूसरे से कोसों दूर हैं। रात और दिन एक साथ नहीं रह सकते। इसी तरह, जहाँ कामवासना है, वहाँ मन और विचार की पवित्रता असम्भव है और इसके बिना किसी भी प्रकार का आध्यात्मिक लाभ प्राप्त करने का कोई सवाल ही नहीं उठता। सन्तमत की पुस्तकें पढ़ें, अपने मन को वश में रखें, उसको ऐसे दूषित विचारों से दूर रखें, और उसे नेक और उत्तम बातों में लगाये रखें। कोशिश आपको ही करनी है और अगर ऐसे गन्दे विचारों से छुटकारा पाने की आपकी इच्छा सच्ची होगी और पश्चातापपूर्ण मन से आप ईमानदारी के साथ कोशिश करेंगे, तो परमात्मा भी आपकी सहायता करेगा।

डाक्टरों ने निश्चित रूप से सिद्ध कर दिया है कि धूम्रपान स्वास्थ्य के लिये बहुत हानिकारक है; यह तन्दुरुस्ती के लिये एक बहुत बड़ा ख़तरा है। अगर आप इससे छुटकारा पाना चाहते हैं, तो इसे धीरे-धीरे छोड़ने की कोशिश करें। दृढ़ संकल्प या पक्के इरादे के द्वारा ही आप इस कमज़ोरी से छुटकारा पा सकेंगे। मालिक से हिम्मत और दया के लिये प्रार्थना करें।

रहेगा, सन्तों की शिक्षा छुटकारा पाने का मार्ग बताती है। न नशीली चीज़ें, न बन्दूक और न ही ज़हर हमारी समस्याओं का इलाज है। हमारे समस्त कर्म, जो हमारे विचारों और क्रियाओं के परिणाम हैं, हमारे साथ दूसरे जन्म में जाते हैं और यदि हम आत्मघात करते हैं, तो उसका पाप भी उनमें जुड़ जाता है। अपनी ज़िन्दगी के दिन कम करके हम जो बोते हैं, उसको काटने से कभी नहीं बच सकते। इसके विपरीत, हम अपना बोझ और भी भारी बना लेते हैं। न तो एल.एस.डी. और न ही दूसरी ऐसी चीज़ें हमारी समस्या को सुलझा सकती हैं। हमें शरण और आसरा प्रदान करने वाला केवल सतगुरु और वह शब्द है, जो हरएक मनुष्य के अन्दर गूंज रहा है। यह परमात्मा की आवाज़ है जो सबको आँखों के केन्द्र के ऊपर से बुला रही है। सतगुरु की दया से जब हम अपने मन और आत्मा को शब्द की उस आवाज़ के साथ जोड़ते हैं तब वह हमें अन्तर में ऊपर की ओर वहाँ खींच ले जाती है जहाँ से यह आती है, और जो हमारा धुरधाम है।

(१४६)

अंधकार के राजा काल के इस देश से जल्दी से जल्दी बाहर निकलने के लिये पूरी कोशिश करनी चाहिये। सुमिरन पर अधिक ज़ोर दें और अपने मन में हर वक्त सुमिरन करते रहने की कोशिश करें। शुरू-शुरू में सुमिरन बहुत ही ज़रूरी है। यह सुमिरन ही है जो एक दिन आपको अन्तर में सतगुरु के रूहानी स्वरूप तक ले जायेगा।

(१४७)

कृपया इतने उदास और हताश न हों। अपने दोषों और अवगुणों को जान लेना अच्छा है, लेकिन उनके लिये दुःखी रहने के बजाये उनसे छुटकारा पाने के लिये कोई उपाय ढूंढना चाहिये। यदि आपने ईमानदारी के साथ परमात्मा के प्रति अपने कर्तव्यों का पालन अब तक नहीं किया है, तो अब शुरू कर दें। जो हमें करना चाहिये, करना पड़ेगा। मेहनत और कोशिश के बिना कुछ नहीं मिलता। हर रोज़

की कीमत चुकानी पड़ती है। बहादुर और साहसी बनें। परमात्मा आप से जो जवाबदारी पूरी कराना चाहता है, उससे जी न चुरायें। पूरी मेहनत और लगन के साथ उसके प्रति अपना फ़र्ज़ अदा करें और बाकी सब-कुछ उस पर छोड़ दें।

सतगुरु अपने शिष्य को कभी नहीं छोड़ते, हालांकि कुछ शिष्य सतगुरु से दूर भागने की कोशिश करते हैं। सतगुरु ने एक जिम्मेदारी ली हुई है, वे उसे अदा करने में कभी नहीं झिझकते। उनसे नामदान प्राप्त करने वाले हरएक शिष्य को वे परमात्मा तक पहुँचा कर ही रहेंगे। मगर उनके उपदेशों पर चलकर हम उनका काम अधिक आसान कर सकते हैं। पूरी लगन के साथ अपने भजन-सुमिरन को समय दें।

(१४८)

कामवासना और रूहानी प्रगति एक-दूसरे से कोसों दूर हैं। रात और दिन एक साथ नहीं रह सकते। इसी तरह, जहाँ कामवासना है, वहाँ मन और विचार की पवित्रता असम्भव है और इसके बिना किसी भी प्रकार का आध्यात्मिक लाभ प्राप्त करने का कोई सवाल ही नहीं उठता। सन्तमत की पुस्तकें पढ़ें, अपने मन को वश में रखें, उसको ऐसे दूषित विचारों से दूर रखें, और उसे नेक और उत्तम बातों में लगाये रखें। कोशिश आपको ही करनी है और अगर ऐसे गन्दे विचारों से छुटकारा पाने की आपकी इच्छा सच्ची होगी और पश्चात्तापपूर्ण मन से आप ईमानदारी के साथ कोशिश करेंगे, तो परमात्मा भी आपकी सहायता करेगा।

डाक्टरों ने निश्चित रूप से सिद्ध कर दिया है कि धूम्रपान स्वास्थ्य के लिये बहुत हानिकारक है; यह तन्दुरुस्ती के लिये एक बहुत बड़ा ख़तरा है। अगर आप इससे छुटकारा पाना चाहते हैं, तो इसे धीरे-धीरे छोड़ने की कोशिश करें। दृढ़ संकल्प या पक्के इरादे के द्वारा ही आप इस कमज़ोरी से छुटकारा पा सकेंगे। मालिक से हिम्मत और दया के लिये प्रार्थना करें।

(१४९)

सन्तमत केवल उन अनुभवों को महत्व देता है जो जाग्रत-अवस्था में किये गये भजन से प्राप्त होते हैं, न कि स्वप्न में। स्वप्न में प्राप्त होने वाले अनुभवों पर हम विश्वास नहीं कर सकते। वे प्रामाणिक हो सकते हैं और उनका कुछ आध्यात्मिक मूल्य भी हो सकता है, या फिर वे केवल स्वप्न-मात्र ही हो सकते हैं। हमारे मन में अनगिनत संस्कार भरे पड़े हैं। जिस दिन हम पहली बार सृष्टि में आये तभी से मन इन संस्कारों को इकट्ठा कर रहा है। ये संस्कार ही कभी-कभी स्वप्न में उभर कर आ जाते हैं। आपके अनुभव काफ़ी अर्थपूर्ण प्रतीत होते हैं, पर जैसा ऊपर बताया जा चुका है, असली महत्व के अनुभव तो वे होते हैं जो सचेत अवस्था में किसी सन्त के द्वारा बताये गये तरीके से किये गये भजन के द्वारा, अपने अन्तर में प्रवेश करने पर हमें प्राप्त होते हैं।

आत्मा को परमात्मा का अनुभव इस शरीर में ही करना है, हमें उसकी खोज करनी है। परमात्मा को हम केवल मनुष्य-शरीर में ही, जिसे खुद परमात्मा ने अपने निवास के लिये बनाया है, पा सकते हैं, बाहर कहीं नहीं। उसके पास वापस पहुँचने का मार्ग भी हममें से हरएक के अन्दर उसने खुद ही रखा है, चाहे हम किसी भी जाति, पंथ, रंग और राष्ट्रीयता के क्यों न हों। यह एक ऐसा मार्ग है कि जिस पर चलने का हरएक को हक़ है, और इसमें किसी के प्रति कोई भेदभाव नहीं बरता जाता। सन्तों के मत में दूसरे धर्मों की तरह कोई कर्मकाण्ड, रीति-रिवाज या औपचारिकताएँ नहीं होती। यह तो जीने की एक रीति है जो हमें उस शब्द से हमारे अन्तर में गूंजने वाली दिव्य धुन से, जुड़ने का उपाय बताती है। यह धुन ही हमें खींच कर वापस हमारे सच्चे धाम में ले जायेगी।

(१५०)

दु:खों का उद्देश्य हमें पवित्र और शुद्ध करना है ताकि हम प्रभु को प्राप्त करने योग्य बन सकें। अपने पिछले जन्मों में जो बीज हमने

खुद बोये थे, यह उसी फसल की कटाई भी है। सुख और दुःख, दोनों ही वे बीज हैं जिन्हें हमने अपने पिछले जन्मों में बोया था और जिन्हें आज हम काट रहे हैं। इस जन्म में हम फिर अगले जन्मों के लिये नये बीज बो रहे हैं, जो हमारे अगले जन्म के भाग्य बनेंगे। संसार एक बड़ा भयानक चक्र है, जिससे छुटकारा केवल परमात्मा की दया-मेहर से ही पाया जा सकता है। इसका अनुभव हमें एक जीवित सतगुरु से मिलने और उनके उपदेशों के अनुसार चलने पर प्राप्त होता है।

परमात्मा को प्राप्त करने के लिये संसार में युगों से लोगों द्वारा अनेक उपाय अपनाये गये हैं। पूरे सतगुरु और सन्तों द्वारा अपनायी गयी विधि सबसे प्राचीन और सच्ची है, जिसमें न तो कोई परिवर्तन हो सकता है और न किसी परिवर्तन की गुंजाइश ही है, क्योंकि यह मनुष्य द्वारा बनाई गई नहीं है। इसका निर्माण स्वयं परमात्मा ने किया है। यह स्वाभाविक है, जब कि अन्य रीतियाँ अस्वाभाविक हैं और आदमी के दिमाग की उपज हैं।

(१५१)

हर सभा या समुदाय का आनन्द उसके सदस्यों के आपसी प्रेम और मेल पर निर्भर करता है। सन्तमत की सभा या सत्संग में प्रेम और सहयोग के सिवाय कुछ नहीं होना चाहिये, क्योंकि अपने धाम को वापस पहुँचने के लिये हम सब एक ही मार्ग पर चल रहे हैं। परन्तु विवाद पैदा करने के लिये मन को हमेशा कुछ बहाने मिल ही जाते हैं। इसलिये हमें इस धूर्त शत्रु से हमेशा सावधान रहना चाहिये।

बेशक आप ठीक कहते हैं, यह मार्ग व्यक्तिगत है। सतगुरु के साथ प्रत्येक व्यक्ति के निजी सम्बन्ध का बड़ा महत्व है। हरएक को अपने खुद के कर्म या प्रारब्ध भुगतने हैं, जिसमें कोई दूसरा दख़ल नहीं दे सकता। मार्ग में अपनी मेहनत, प्रेम, भक्ति, और पिछले कर्मों के अनुसार हरएक की अपनी व्यक्तिगत प्राप्ति या उपलब्धि भी होती है। फिर भी ऐसी बैठकों और सत्संगों में शामिल होने में कोई हर्ज

(१४९)

सन्तमत केवल उन अनुभवों को महत्व देता है जो जाग्रत-अवस्था में किये गये भजन से प्राप्त होते हैं, न कि स्वप्न में। स्वप्न में प्राप्त होने वाले अनुभवों पर हम विश्वास नहीं कर सकते। वे प्रामाणिक हो सकते हैं और उनका कुछ आध्यात्मिक मूल्य भी हो सकता है, या फिर वे केवल स्वप्न-मात्र ही हो सकते हैं। हमारे मन में अनगिनत संस्कार भरे पड़े हैं। जिस दिन हम पहली बार सृष्टि में आये तभी से मन इन संस्कारों को इकट्ठा कर रहा है। ये संस्कार ही कभी-कभी स्वप्न में उभर कर आ जाते हैं। आपके अनुभव काफ़ी अर्थपूर्ण प्रतीत होते हैं, पर जैसा ऊपर बताया जा चुका है, असली महत्व के अनुभव तो वे होते हैं जो सचेत अवस्था में किसी सन्त के द्वारा बताये गये तरीके से किये गये भजन के द्वारा, अपने अन्तर में प्रवेश करने पर हमें प्राप्त होते हैं।

आत्मा को परमात्मा का अनुभव इस शरीर में ही करना है, हमें उसकी खोज करनी है। परमात्मा को हम केवल मनुष्य-शरीर में ही, जिसे खुद परमात्मा ने अपने निवास के लिये बनाया है, पा सकते हैं, बाहर कहीं नहीं। उसके पास वापस पहुँचने का मार्ग भी हममें से हरएक के अन्दर उसने खुद ही रखा है, चाहे हम किसी भी जाति, पंथ, रंग और राष्ट्रीयता के क्यों न हों। यह एक ऐसा मार्ग है कि जिस पर चलने का हरएक को हक़ है, और इसमें किसी के प्रति कोई भेदभाव नहीं बरता जाता। सन्तों के मत में दूसरे धर्मों की तरह कोई कर्मकाण्ड, रीति-रिवाज या औपचारिकताएँ नहीं होती। यह तो जीने की एक रीति है जो हमें उस शब्द से हमारे अन्तर में गूंजने वाली दिव्य धुन से, जुड़ने का उपाय बताती है। यह धुन ही हमें खींच कर वापस हमारे सच्चे धाम में ले जायेगी।

(१५०)

दुःखों का उद्देश्य हमें पवित्र और शुद्ध करना है ताकि हम प्रभु को प्राप्त करने योग्य बन सकें। अपने पिछले जन्मों में जो बीज हमने

खुद बोये थे, यह उसी फसल की कटाई भी है। सुख और दुःख, दोनों ही वे बीज हैं जिन्हें हमने अपने पिछले जन्मों में बोया था और जिन्हें आज हम काट रहे हैं। इस जन्म में हम फिर अगले जन्मों के लिये नये बीज बो रहे हैं, जो हमारे अगले जन्म के भाग्य बनेंगे। संसार एक बड़ा भयानक चक्र है, जिससे छुटकारा केवल परमात्मा की दया-मेहर से ही पाया जा सकता है। इसका अनुभव हमें एक जीवित सतगुरु से मिलने और उनके उपदेशों के अनुसार चलने पर प्राप्त होता है।

परमात्मा को प्राप्त करने के लिये संसार में युगों से लोगों द्वारा अनेक उपाय अपनाये गये हैं। पूरे सतगुरु और सन्तों द्वारा अपनायी गयी विधि सबसे प्राचीन और सच्ची है, जिसमें न तो कोई परिवर्तन हो सकता है और न किसी परिवर्तन की गुंजाइश ही है, क्योंकि यह मनुष्य द्वारा बनाई गई नहीं है। इसका निर्माण स्वयं परमात्मा ने किया है। यह स्वाभाविक है, जब कि अन्य रीतियाँ अस्वाभाविक हैं और आदमी के दिमाग की उपज हैं।

(१५१)

हर सभा या समुदाय का आनन्द उसके सदस्यों के आपसी प्रेम और मेल पर निर्भर करता है। सन्तमत की सभा या सत्संग में प्रेम और सहयोग के सिवाय कुछ नही होना चाहिये, क्योंकि अपने धाम को वापस पहुँचने के लिये हम सब एक ही मार्ग पर चल रहे है। परन्तु विवाद पैदा करने के लिये मन को हमेशा कुछ बहाने मिल ही जाते हैं। इसलिये हमें इस धूर्त शत्रु से हमेशा सावधान रहना चाहिये।

बेशक आप ठीक कहते हैं, यह मार्ग व्यक्तिगत है। सतगुरु के साथ प्रत्येक व्यक्ति के निजी सम्बन्ध का बड़ा महत्व है। हरएक को अपने खुद के कर्म या प्रारब्ध भुगतने हैं, जिसमें कोई दूसरा दख़ल नहीं दे सकता। मार्ग में अपनी मेहनत, प्रेम, भक्ति, और पिछले [illegible] के अनुसार हरएक की अपनी व्यक्तिगत प्राप्ति या उपलब्धि भी [illegible] है। फिर भी ऐसी बैठकों और सत्संगों में शामिल होने में कोई [illegible]

नहीं, यदि इनमें भाग लेने वालों के हृदय में ये सत्संग सतगुरु और प्रभु की याद पैदा करके उनके हृदय में भक्ति और प्रेम जाग्रत करते हों।

दूसरों की आलोचना करने या उनका विरोध करने की कोशिश न करें, वल्कि नामदान के समय वतायी गयी रीति के अनुसार इस मार्ग पर प्रेम और भक्ति के साथ चलें। आख़िर, हमारी कोशिश और हमारा भजन ही हमारे जीवन में सबसे ज़रूरी चीज़ है। महत्व-हीन वातों को लेकर अपने मन को अनावश्यक रूप से विचलित या अशान्त न करें। सन्तमत के महत्वपूर्ण और वुनियादी असूलों पर टिके रहें और सन्तों के उपदेशों के अनुसार जीवन व्यतीत करें।

(१५२)

मुझे खुशी है कि सन्तमत में सत्संगी की अपनी खुद की मेहनत और कोशिश के महत्व को आप महसूस करते हैं। इस मार्ग में हम सव को ज्यादा से ज्यादा प्रयास करना चाहिये और व्यर्थ की वहाने-वाज़ी करके अपने कर्तव्य से जी नहीं चुराना चाहिये। हमारे प्रयास करने पर ही परमात्मा की दया-मेहर हमें मिलेगी, और हमारी मेहनत और उसकी दया-मेहर दोनों मिलकर हमारी मददगार होंगी।

सन्तमत को स्वीकार करने के वाद नाहक ही अन्य प्रणालियों या तरीकों की ओर न भागें। 'साइंटोलॉजी' और इस तरह की अन्य प्रणालियाँ परमात्मा द्वारा स्वयं निर्मित इस मार्ग का स्थान कभी नहीं ले सकतीं। साइंटोलॉजी के वारे में जो थोड़ा-सा मैं जानता हूँ, वह और कुछ नहीं केवल एक अधिक दृढ़ इच्छा-शक्ति वाले व्यक्ति द्वारा दूसरे के मन को वश में करने की विद्या है। अन्त में यह हमें कहीं भी नहीं ले जाती और इससे मनुष्य दृढ़ इच्छा-शक्ति वाले व्यक्ति का गुलाम वन जाता है। इन सव वातों का आत्मा के विकास और प्रगति से कोई संवंध नहीं है, जो कि हमारा असली ध्येय है। ऐसी चीज़ों में न उलझें, क्योंकि इनमें प्रवृत होना व्यर्थ होगा और इन प्रणालियों से आपको कोई लाभ नहीं होगा। जो मार्ग आपको वताया

गया है, उसका पालन करें और इन बातों में उलझ कर अपनी प्रगति में बाधा न डालें। आप एक ही समय में दो नावों पर सवार नहीं हो सकते। रूहानी तरक्की के लिये इस मार्ग के प्रति दृढ़ और अडोल विश्वास बहुत आवश्यक है। परमात्मा के महल में पहुँचने के लिये कोई छोटे रास्ते नहीं हैं। जो मार्ग आपको बताया गया है, उससे अधिक छोटा, शीघ्र पहुँचाने वाला और सुरक्षित मार्ग और कोई नहीं है।

(१५३)

हमेशा आँख के केन्द्र पर पूरी तरह एकाग्र होकर सुमिरन करते हुए भजन शुरू करना चाहिये। सुमिरन करते समय शब्द की ओर ध्यान नहीं देना चाहिये। ध्यान को दोनों भौहों के बीच में पूरी तरह जमाये रखना चाहिये और सुरत या चेतनता को शरीर के निचले भाग से आँख के केन्द्र तक चढ़ने देना चाहिये। ढाई घण्टे के लगभग तीन-चौथाई समय तक यह अभ्यास करने के बाद, बचे समय में दाहिनी ओर से अथवा दोनों भौहों के बीच से आने वाले शब्द को ध्यान से सुनें। याद रखें कि शब्द को ध्यान से सुनते समय सुमिरन नहीं करना चाहिये, क्योंकि उस समय पूरा ध्यान उस धुन या आवाज पर लगाना चाहिये जो कि असल में दोनों भौहों के बीच में से आती है।

मृत्यु के बाद ऊपर के लोकों में नाम नहीं दिया जा सकता, क्योंकि नाम सदा एक जीवित सतगुरु द्वारा ही प्रदान किया जाता है, और इसके लिये शिष्य का भी नामदान के समय स्थूल शरीर में होना आवश्यक है। आम तौर पर भजन के बिना आत्मा सूक्ष्म जगत में प्रवेश ही नहीं कर सकती। जिन आत्माओं को नाम नहीं मिला है, उनका हिसाब सूक्ष्म जगत के नीचे ही तय किया जाता है और इसके बाद आत्मा को उसके कर्मों के अनुसार नया जन्म दिया जाता है।

(१५४)

मुझे प्रसन्नता है कि सन्तमत में आपकी रुचि है। कृपया सावधानी-पूर्वक विषय का अध्ययन करें, और इस मार्ग में प्रगति करने के लिये

मनुष्य को किस प्रकार का जीवन बिताना पड़ता है और मन की किस प्रवृत्ति का विकास करना पड़ता है, इसे पूरी तरह समझ लें। यह अच्छी तरह समझ लेना बहुत ज़रूरी है। जल्दबाज़ी में कुछ भी नहीं करना चाहिये। इस दिशा में कोई अन्तिम कदम उठाने से पहले आप को अपना अध्ययन भी पूरा करना है। इस मार्ग को अपनाने की प्रेरणा आपके अन्तर से आनी चाहिये। कोई दूसरा व्यक्ति आपको यह नहीं बता सकता कि आप इस मार्ग पर चलने के योग्य हैं या नहीं। आपके अपने हृदय से आवाज़ आनी चाहिये।

आप किस प्रकार का ध्यान करते हैं, यह मैं नहीं जानता ; लेकिन पुस्तकें पढ़कर अथवा दूसरों से सुनकर कुछ भी करना उचित नहीं। अभी तो आप किताबें पढ़ें और सन्तों की शिक्षा के अनुसार अपने जीवन को ढालने की कोशिश करें। आगे चलकर यह बहुत सहायक होगा। जल्दी न करें, बल्कि इस दिशा में कदम उठाने से पहले अपने मन की खोज करके पता लगायें कि सन्तों के मार्ग पर चलने की योग्यता और तैयारी आप में है या नहीं ?

(१५५)

नहीं, यह सोचकर कि हम उनकी सहायता कर रहे हैं, किसी को अपने मित्रों का ध्यान करने की कोशिश नहीं करना चाहिये। अपनी ख़ुद की सहायता कर चुकने के बाद ही हम दूसरों की सहायता कर सकेंगे। दूसरों की मदद करने योग्य होने के पहले हमें अपने अन्तर में ऊँचे आध्यात्मिक स्तर पर पहुँचना ज़रूरी है। प्रत्येक सत्संगी परमात्मा और सतगुरु के सीधे संरक्षण में है, और वह दूसरों की सहायता और प्रेम पर निर्भर नहीं रहता। हम शब्द का, उस दिव्य ध्वनि का ध्यान करते हैं जो हम सब का स्वामी और रक्षक है। अन्तर में हमें सतगुरु और उस ध्वनि के साथ जुड़ जाना चाहिये। इस संसार में बाकी सब चीज़ें नाशवान हैं। भजन को रोज समय दें और देखें कि अन्दर कितना आनन्द भरा हुआ है।

(१५६)

सत्संग के तमाम केन्द्रों को पूरे मेल-जोल के साथ काम करना चाहिये और केवल आध्यात्मिक बातों पर ही ज़ोर देना चाहिये। अधिकार तथा पद के लिये सत्संगियों के बीच होने वाले विवाद से ऐसे संगठनों का उद्देश्य ही समाप्त हो जायेगा। सत्संगियों में मैं जब ऐसे मतभेद देखता हूं तो मुझे बहुत दुःख होता है। जो लोग कुछ कर्तव्य निभाने के लिये चुने गये हैं, उन्हें खुद संगत का अत्यन्त विनम्र सेवक समझना चाहिये और अपने कर्तव्यों का पालन इस तरह करना चाहिये मानों वे परमात्मा की हिदायत और मार्ग-दर्शन में काम कर रहे हों। अहंकार और घमण्ड सत्संग के मूल पर ही आघात करते हैं, और उनमें उलझने वाले लोगों के लिये भी उतने ही हानिप्रद हैं, जितने पूरे सत्संग के लिये। प्रेम और मेल की भावना पैदा करने की कोशिश करें और भक्ति के साथ नियमपूर्वक अपना भजन चालू रखें। मनुष्य-जन्म का परम ध्येय सतगुरु के आदेश के अनुसार अन्तर में रूहानी मार्ग पर प्रगति करना है, जहाँ सतगुरु हमेशा आपके साथ है।

(१५७)

भजन के समय कभी-कभी सर के ऊपरी भाग पर थोड़ा दबाव मालूम पड़ता है। इसे कोई महत्व न दें। यह कोई ऐसी शारीरिक बीमारी नहीं है जिसके लिये किसी डाक्टर की सलाह आवश्यक हो। एकाग्रतापूर्ण सुमिरन और उसके फलस्वरूप आँख के केन्द्र पर और अधिक ध्यान जमने पर यह लक्षण दूर हो जायेगा। शरीर के निचले भाग से सुरत का सिमटाव होने पर ऐसा अनुभव होना स्वाभाविक है। कोई चिन्ता न करें। सतगुरु हमेशा अपने हरएक शिष्य के साथ हैं और जिनको भी उन्होंने नाम दिया है उन सब शिष्यों की आत्मा को वापस परमात्मा से मिलाने के लिये वचनबद्ध हैं।

(१५८)

कृपया याद रखें कि जिसे नाम मिल चुका है, उसे कोई दुष्टात्मा नुकसान नहीं पहुँचा सकती। यह केवल आपकी कमज़ोरी है जिसका

आपका मन काल्पनिक भय उत्पन्न करके लाभ उठा रहा है। इस विचार को आप अपने मन से सदा के लिये निकाल दें। श्रद्धा और भक्ति के साथ अपना आध्यात्मिक अभ्यास नित्य नियमपूर्वक करें, सन्त-मत का कुछ साहित्य भी रोज़ पढ़ें और विश्वास रखें कि आपकी कोई हानि नहीं हो सकती। सतगुरु हमेशा आपके साथ हैं।

(१५९)

आपके प्रश्नों के सम्बन्ध में यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता कि हज़रत ईसा ने वे सब चमत्कार किये थे जो उनके नाम पर प्रचलित हैं। जो भी चमत्कार उन्होंने किये उनका उद्देश्य लोगों की शारीरिक बीमारियों को दूर करने का उतना नहीं था, जितना कि उन्हें अपना उपदेश देने का था। उदाहरणार्थ, जब वे एक जगह से दूसरी जगह जाते और लोगों को पता चलता तो वे अपने अंधे और बीमार उनके पास ले आते थे। इस तरह एक अच्छी भीड़ हो जाती थी। उनका ध्यान आकर्षित करने के लिये उन्होंने शायद एक या दो को ठीक भी कर दिया होगा, और बाद में इतने लोगों को इकट्ठा हुआ देखकर वे पहाड़ी पर चढ़ गये और अपना प्रसिद्ध प्रवचन 'सरमन आन दी माउंट' दिया।

अपने शिष्यों के विश्वास को मजबूत बनाने के लिये, या जब उनकी तकलीफ़ इस हद तक पहुँच जाती कि उसे सहन करने में वे बिलकुल असमर्थ हो जाते हैं, और मार्ग को छोड़ने तक की संभावना हो जाती है, तब उन्हें मदद पहुँचाने के लिये सन्त कभी-कभी चमत्कार भी करते हैं। किन्तु सन्तों के जीवन में ऐसे अवसर बहुत कम आते हैं। उनके असली चमत्कार, जो वे रोज़ करते हैं और जिनकी कोई गिनती नहीं, तो हैं हमारे आध्यात्मिक अंधेपन और अन्य आध्यात्मिक रोगों को दूर करना, ताकि हमारी अन्दर की आँख खुले और हम इस रूहानी मार्ग पर उन्नति कर सकें। बाइबिल में ऐसे अनेक अंश हैं जिनसे यह प्रकट होता है कि हज़रत ईसा के अधिकांश चमत्कार भी इस प्रकार के आध्यात्मिक चमत्कार ही थे, न कि शारीरिक।

गुज़रे ज़मानों के इतिहास के चक्कर में पड़ कर हम मन को भ्रम में क्यों डालें ? पुराना इतिहास इतना अविश्वनीय है, और प्रमाण इतने अपूर्ण और विकृत हैं कि उन पर विश्वास नहीं किया जा सकता। अच्छा होगा कि आप अपने मन को भजन-सुमिरन में लगायें, और वर्तमान के बारे में तथा अपने जीवन के बारे में सोचें। हम स्वयं इस कष्टमय संसार से और जन्म तथा मरण के चक्र से मुक्त होने के लिये उत्सुक हैं। समय थोड़ा है और हमें बहुत कुछ करना है। हमें अपने मन को बिलकुल शान्त और स्थिर बनाना है, इसलिये ऐसी बातों के बारे में सोचकर, जो अब हमें कोई मदद नहीं दे सकतीं, मन को और अधिक चंचल क्यों बनायें ? इससे अच्छा तो यह है कि प्रेम, भक्ति और श्रद्धा का विकास करें और नित्य नियमपूर्वक अपना भजन करते रहें। केवल यही अन्तिम समय में हमारी सहायता करेगा।

(१६०)

मुझे यह जानकर दुःख हुआ कि एक सत्संगी लड़की के साथ आपका अनुचित सम्बन्ध था और अब आप उस अनुचित बात को भविष्य में भी जारी रखना चाहते हैं। अपने विवाहित साथी के सिवाय किसी और से संबंध रखना अत्यन्त ही अनुचित और निन्दनीय हैं। बिना विवाह किये ऐसे सम्बन्ध को रखना पाप को बनाये रखना है। यह सब सन्तमत के उपदेशों और सिद्धान्तों के विरुद्ध है। हमारा जीवन बहुत नेक, साफ़ और पवित्र होना चाहिये, नहीं तो परमात्मा से आप यह उम्मीद कैसे कर सकते हैं कि वह आपको वापस अपने पास बुला ले ? एक स्वच्छ पारिवारिक जीवन का अर्थ है एक वैध विवाहित जीवन। वह दिव्य-ध्वनि किसी ऐसी वस्तु का स्पर्श नहीं करेगी जो गंदी और अपवित्र हो। उस दिव्य-ध्वनि से यह आशा करने के पूर्व कि वह हमसे सम्पर्क स्थापित करे, यह जरूरी है कि हम हर तरह से अपने समस्त विचारों और कर्मों में स्वर्ण के समान शुद्ध हों।

(१६१)

किसी भी प्रकार का ध्यान और रूहानी अभ्यास—चाहे वह

की किसी भी प्रणाली का हो—एक जीते-जागते गुरु के मार्गदर्शन के बिना, केवल किताबें पढ़कर, नहीं करना चाहिये। बाहरी दुनिया के ख़तरों और संकटों से कहीं ज़्यादा बढ़कर खतरे और संकट अन्तर में हैं। एक पूर्ण सतगुरु के मार्ग-दर्शन और सहायता के बिना जिज्ञासु ज़रूर भयंकर कठिनाइयों में पड़ जायेगा, क्योंकि काल की बेशुमार विरोधी ताकतें शिष्य को गुमराह करने के लिये हमेशा अन्दर मौजूद हैं।

अभी तो आपको सन्तमत के विज्ञान की पुस्तकों का अध्ययन करके इसके उपदेशों को ठीक तरह से समझने की कोशिश करना चाहिये। सन्तमत को अच्छी तरह समझ लेना बहुत ज़रूरी है, और इसे समझने के लिये जो भी समय लगेगा वह समय का सदुपयोग ही होगा। सन्तमत के सिद्धान्तों के अनुसार रहने की कोशिश करें। सन्तों के उपदेशों के अनुसार अपने जीवन को ढालने की कोशिश की जानी चाहिये। बाद में, नाम प्राप्त कर लेने पर, आप अभ्यास शुरू कर सकते हैं।

(१६२)

इस विषय में गहरे अध्ययन और समझ की आवश्यकता है। आपको चाहिये कि सन्त-साहित्य के अध्ययन को काफ़ी समय दें। केवल कौतूहलवश अथवा इसीलिये कि आपका कोई परिचित भी उस पर चल रहा है, किसी मार्ग को अपनाने में कोई फायदा नहीं है। आपको खुद की राय कायम करना ज़रूरी है, और जिस सत्य की आप तलाश कर रहे हैं उसके प्रति आपकी पूर्ण आस्था या विश्वास होना चाहिये। इस मार्ग में आने से पहले यदि आप मन को हर तरह से सन्तुष्ट नहीं कर लेंगे, तो मन आपको भजन-सुमिरन तथा प्रेम और श्रद्धा के साथ मार्ग का अनुसरण कभी नहीं करने देगा। इस प्रकार का निर्णय लेने के योग्य होने के लिये सन्तमत की पुस्तकों का पठन और अध्ययन निहायत ज़रूरी है। तब ही आप जान सकेंगे कि इन उपदेशों का मतलब क्या है और आपसे क्या अपेक्षा या आशा की

जाती है। इसमें जीवन को एक बिलकुल भिन्न ढांचे में ढालना पड़ता है, और एक ऐसा दृष्टिकोण अपनाना पड़ता है जो कि आम दुनिया के दृष्टिकोण से अलग है।

(१६३)

ऐसा कुछ भी नहीं है जिस पर प्रेम, स्नेह, युक्ति और समझदारी के द्वारा विजय हासिल न की जा सके। पारिवारिक मतभेद अलग होने से नहीं सुलझते।

यौन सम्बन्ध का नियन्त्रण भी पति-पत्नी की आपसी सहमति से होना चाहिये। वैवाहिक जीवन काम-वासना में बिना सोच-विचार के डूबे रहने और केवल निम्न वासनाओं की तृप्ति के लिये नहीं है। इसे विवेकशील संयम से उचित सीमाओं के अन्दर बनाये रखना पड़ता है। परिस्थिति को सहानुभूतिपूर्वक, प्रेम तथा चतुराई के साथ सँभालें, क्योंकि कठोर और निर्दयी कदम उठाने का नतीजा कड़ुआ और दुःखदायी हो सकता है।

अपना ध्यान भजन-सुमिरन में रखें। इस ओर कभी भी लापरवाही नहीं करनी चाहिये। भजन को और सब बातों पर प्राथमिकता दी जानी चाहिये।

(१६४)

कृपया याद रखें कि रूहानी अनुभव की प्राप्ति किन्हीं भौतिक, स्थूल या जड़ साधनों के द्वारा नहीं हो सकती, चाहे ये साधन 'एल. एस.डी.' या ऐसी कोई भी वस्तु हों। इन चीज़ों का सम्बन्ध शरीर और मन से है, जब कि परमात्मा इन दोनों से परे है। मानसिक और आध्यात्मिक रूप से खोखला बनाने के अतिरिक्त ये नशीली चीज़ें व्यसनी के शारीरिक स्वास्थ्य को बुरी तरह जर्जर कर देती हैं। अनेक युवा व्यक्ति इन दवाओं के प्रभाव के कारण पागल हो चुके हैं, और आत्मघात तक कर चुके हैं। केवल एक दवा या नशीली वस्तु के लेने से ही यदि परमात्मा को पाया जा सकता था तो इस संसार में कौन उसे प्राप्त किये बिना रहता? यह तो बड़ा आसान

तरीका होता। किन्तु परमात्मा को पाने का मार्ग यह नहीं है, बल्कि यह तो हमें परमात्मा से और दूर ले जाता है।

(१६५)

कृपया ज़रा भी परेशान न हों। जिसको नाम मिल चुका है, वह सतगुरु के हाथों के बाहर कभी नहीं जा सकता। उसके सतगुरु सदा उसके साथ रहते हैं और उसकी सँभाल करते हैं।

भजन में प्रगति अनेक बातों पर निर्भर करती है। शिष्य का कर्तव्य है कि सतगुरु द्वारा बताई गई रीति से भजन-सुमिरन करता रहे और उसके फल के बारे में चिन्ता न करे। यह उसकी चिन्ता का विषय नहीं है, इसकी देखभाल सतगुरु करता है। कभी-कभी कर्मों का कोई ऐसा चक्र आता है कि भजन एक प्रकार का नीरस कार्य प्रतीत होता है और प्रगति का कोई अनुभव नहीं होता। शिष्य समझने लगता है कि उसे छोड़ दिया गया है और भजन का कोई फल नहीं मिल रहा है। इनमें से कोई भी बात कभी नहीं होती, क्योंकि सतगुरु शिष्य को कभी नहीं छोड़ता, और न ही भजन-सुमिरन कभी फल प्रदान करना बन्द करता है। भजन में लगाया गया हरएक क्षण आप खाते में जमा होता है। कृपया इस विचार को त्याग दें कि आप पीछे फिसल रहे हैं या सतगुरु ने आपको छोड़ दिया है। विश्वास, प्रेम और भक्ति के साथ अपना भजन-सुमिरन पहले जैसे करते रहें और बाकी सब प्रभु पर छोड़ दें। हर बात उचित समय पर होती है। जब बादल छँट जाते हैं, तो सूर्य फिर से अपनी पूरी उज्वलता के साथ चमकने लगता है। जितना ज़्यादा आप प्रेम और भक्ति विकसित करेंगे और जितना अधिक आप प्रयास करेंगे, आपकी आध्यात्मिक पूंजी भी उतनी ही बढ़ेगी।

(१६६)

दु:खी व पीड़ित लोगों के प्रति आपकी सहानुभूति की भावना बिलकुल स्वाभाविक है, किन्तु केवल सहानुभूति से उनको किसी भी प्रकार की सहायता नहीं मिल सकती। वास्तव में उनके कष्टों के बारे

में सोचते रहने या उनका दु:ख बँटाने की चिंता से अब एक के बजाये दो असन्तुष्ट और दु:खी व्यक्ति हो गये ।

इसमें सन्देह नहीं कि सहानुभूति प्रदर्शित करना अच्छी बात है, और जहाँ तक हो सके हमें सहायता भी करनी चाहिये, लेकिन साथ ही यह याद रखना चाहिये कि हर इन्सान ने अपने पिछले जन्म में जो कुछ बोया है, उसी को वह इस संसार में काट रहा है, और भाग्य या प्रारब्ध अटल है ।

संसार हमेशा दु:ख-दर्द का स्थान बना रहेगा, यह कभी स्वर्ग नहीं बन सकता । वास्तव में, इस संसार में जीवन सुख और दु:ख दोनों से बना है । इसलिये सन्त हमें जन्म-मरण तथा सुख-दु:ख की इस दुनिया से हमेशा के लिये छुटकारा पाने की सलाह देते हैं । इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिये अवसर केवल तब तक ही है जब तक हम मनुष्य शरीर में हैं, और हर जन्म में हमें मनुष्य का चोला नहीं दिया जाता । करोड़ों जन्मों के बाद ही हमें यह प्राप्त होता है, और यह एक विरला और मूल्यवान उपहार है । इसे संसार की नश्वर बातों और पदार्थों में व्यर्थ नहीं गँवाना चाहिये ।

मनुष्य-जीवन का उद्देश्य परमात्मा की प्राप्ति है, और यदि हम उसे पाने का मार्ग नहीं ढूढते तो हम इस मनुष्य जीवन को, जिसे परमात्मा ने हमें बख़्शा है, व्यर्थ गँवा देते हैं । कृपया सन्तमत की पुस्तकों का सावधानीपूर्वक अध्ययन और इन उपदेशों को पूरी तरह समझने की कोशिश करें ।

(१६७)

आप यह स्वयं स्वीकार करती हैं कि सन्तमत के लिये आपके बहुत ज्यादा जोश ने आपके भावुक पति के मन में, जो ख़ुद नाम प्राप्त कर चुके हैं, एक तीव्र प्रतिक्रिया उत्पन्न कर दी है । सन्तमत के प्रति अपने उत्साह को बाहर प्रकट नहीं करना चाहिये । असल में इस बाहरी उत्साह की वजह से मन और भी चंचल हो जाता है, जबकि सन्तमत में हमारी सब कोशिशें और मेहनत मन को शान्त और स्थिर

करने के लिये होती हैं। सन्तमत के उत्साह को भीतर हज़म करना चाहिये और इसे गहरी दीनता तथा परमात्मा और सतगुरु के प्रति अधिक प्रेम और भक्ति के रूप में बदल देना चाहिये। केवल शब्दों और भावनाओं के द्वारा व्यक्त किये गये ज़बानी प्रेम और भक्ति का सन्तमत में महत्व नहीं है। आवाज़ दिल से आनी चाहिये। हमारी सच्ची लगन का अंदाज़ हमारे अन्दर उत्पन्न दीनता और कोमलता से लगाया जाता है।

आपके इस बाहरी जोश या उत्साह ने, जो कि केवल बाहरी था, आपके पति के मन में एक कड़ी प्रतिक्रिया उत्पन्न कर दी है। यह स्वाभाविक ही था। अब आप उनसे प्रेम और स्नेहमय व्यवहार करें और उनके प्रति उदारता और कोमलता लाने का प्रयत्न करें। अपने घरेलू जीवन को क्यों बिगाड़ा जाये, खास तौर पर जब आप जानती हैं कि आपके पति बहुत भले हैं और आप उन्हें बहुत प्यार करती हैं। आपके पति का आपके प्रति जो प्यार और स्नेह था, उसे अपनी कोमलता और नम्रता के द्वारा आप ही वापस ला सकती हैं।

आप लिखती हैं कि जब वे बीमार थे उन दिनों उनके साथ आपके सम्बन्ध काफी अच्छे हो गये थे। यह बड़ी उत्साहवर्धक या हौसला देने वाली बात है। इस परिवर्तन का लाभ उठायें और आनंद की इस भावना को दिन पर दिन और बढ़ने दें। सन्तमत हमारे घरेलू जीवन में किसी प्रकार अशान्ति पैदा करने की शिक्षा नहीं देता। हमें सामान्य मनुष्य की तरह रहना है, जीवन के सभी क्षेत्रों में अपने कर्तव्यों का पालन करना है और साथ ही अपने भजन-सुमिरन के लिये भी प्रतिदिन निश्चित समय देते रहना है। एक अनासक्त मन के साथ हर काम को परमात्मा द्वारा सौंपे गये कर्तव्य या ज़िम्मेदारी के रूप में पूरा करते हुए हमें इस संसार में जीना है।

अपने पति को किसी बात के लिये विवश या मजबूर करने की कोशिश न करें, बल्कि उन्हें ख़ुद ही महसूस करने दें कि जीने का सही तरीका क्या है? प्रत्येक व्यक्ति का अपना प्रारब्ध होता है जिसे

उसे भुगतना पड़ता है, और उसमें आप कोई दखल और हस्तक्षेप नहीं कर सकतीं। हम सब परमात्मा के हाथ में हैं और वह जो ठीक समझता है वही करता है। अपने पति के प्रति अपने कर्त्तव्यों का पालन आप सच्चाई से करें, उनको नाराज़ होने का कोई कारण न दें और फिर उन्हें परमात्मा पर छोड़ दें। हरएक को व्यक्तिगत रूप से अपने कर्मों का हिसाब चुकाना पड़ता है, और ये रिश्ते-नाते केवल इन कर्मों का हिसाब चुकाने के लिये ही हैं। अपने आप में इन रिश्तों की कोई असलियत नहीं होती। इतनी अधिक परेशान न हों कि आपके मन की शान्ति और आपका भजन-सुमिरन विगड़ने लगे।

इस संसार में जीवन हमेशा उतार-चढ़ावपूर्ण रहता है और हमेशा ऐसा ही रहेगा। यह जीवन बहुत थोड़े समय के लिये है और इसका कोई स्थायी महत्व नहीं है। उस जीवन के बारे में सोचें जो उस पार हमारी प्रतीक्षा कर रहा है। आगे होने वाली यात्रा के लिये भी कुछ तैयारियाँ करें। यह जन्म तो हमारे मार्ग में पड़ाव-मात्र है। प्रतिदिन भजन के लिये समय दें और सब चिन्ताएँ छोड़ दें। सब-कुछ प्रभु के हाथों में है और हमें उसकी मौज में रहने की कोशिश करनी चाहिये।

(१६८)

मैं नहीं समझ पाता कि आपका मन चरस, एल. एस. डी., और ऐसी नशीली वस्तुओं के चक्कर में क्यों इतना डूबा रहता है जब कि आपको संसार में इससे कहीं ज्यादा ज़रूरी काम करने हैं। जीवन बहुत छोटा है, और हमें वापस अपने धाम पहुँचने के लिये बहुत कुछ करना है। इन प्रलोभनों के बारे में सोचने के लिये समय कहाँ है? इनके बारे में सोचते रहने के बजाय आपको इनसे दूर भागना चाहिये। इन दुर्बलताओं, गलत और अनुचित वस्तुओं या विषयों में ही पड़े रहने का मतलब मन को एक ऐसी खुली छूट दे देना है जिससे वह हमें निम्नतम स्तर पर खींच सके। हम नामदान के समय ली गई ज़िम्मेदारी, परमात्मा और भजन-सुमिरन के बारे में क्यों न

का अर्थ नश्वर शरीर के उपचार के लिये, जिसे एक दिन त्यागना ही है, गाढ़ी मेहनत से कमाई अपनी रूहानी पूंजी को ख़र्च करना है। यह शरीर एक किराये का मकान है जो हमें एक ख़ास समय के लिये दिया गया है, जिसके वाद हम इसमें नहीं रह सकते। सन्तमत में शरीर के कल्याण की वनिस्वत आतमा के कल्याण का अधिक महत्व है। आध्यात्मिक चिकित्सा और इस तरह के समस्त चमत्कार सन्तमत में विलकुल मना हैं। अपने भजन से मिली पूंजी को हमें अपने अन्दर वहुत सँभाल कर रखना है। इसे व्यर्थ की चीज़ों के लिये इधर-उधर फेंकना नहीं है।

(१७०)

किसी को जान-बूझकर निषिद्ध या सन्तमत में मना की गई चीज़ों को नहीं खाना चाहिये। शाकाहारियों के लिये भोजन में ताज़े फल, साग-सब्जियाँ, मेवे तथा दूध और दूध से बनी चीज़ें उत्तम हैं जोकि पोषण की दृष्टि से भी अच्छी हैं। सत्संगी को अपनी आवश्यकता के अनुसार सही चीज़ें और उनका ठीक मिश्रण खोज निकालना चाहिये।

इसमें सन्देह नहीं कि अहंकार वहुत अप्रिय वस्तु है, और इससे छुटकारा पाना भी वहुत ही मुश्किल है। यह क्या है और कितना शक्तिशाली है इसका पता हमें सन्तों की वाणी का अध्ययन करने पर ही लगता है। यह अहं ही है जिस पर सारा संसार टिका हुआ है, और हमारे तथा परमात्मा के बीच में यही असली बाधा है। जब हम अपने व्यक्तित्व, अहं अथवा हौमैं को जीत लेते हैं, तब मालिक के सिवाय रह ही क्या जाता है? अहंकार पर विजय प्राप्त करने के लिये हमें पूरी कोशिश और शक्ति लगानी होगी। जैसे-जैसे हम आँख के केन्द्र में अपने मन को स्थिर कर के उसे शब्द के साथ जोड़ेंगे, वैसे-वैसे धीरे-धीरे हमारा अहंकार कम होता जायेगा। यह शब्द हम सब के अन्दर लगातार धुनकारें दे रहा है।

(१७१)

जिज्ञासुओं के द्वारा बहुत सवाल पूछे जाना स्वाभाविक बात है। इनका उत्तर आप सन्तमत के उपदेशों का सावधानी पूर्वक अध्ययन करके दे सकते हैं। ऐसा कोई ज़रूरी सवाल नहीं है जिसका किसी न किसी पुस्तक में पूरी तरह समाधान न किया गया हो।

इसमें सन्देह नहीं कि कर्म और पुनर्जन्म दो ऐसी कठिन बातें हैं, जिन्हें पूरी तरह समझ पाना पश्चिम के निवासियों के लिये मुश्किल है। पर इससे किसी को सन्तों के मार्ग पर चलने में किसी प्रकार की रुकावट नहीं आती। शुरू-शुरू में कर्म और पुनर्जन्म में विश्वास होने या न होने से कोई फ़र्क नहीं पड़ता, क्योंकि असल में इस मार्ग पर चलना आत्मा को उस दिव्य-ध्वनि के साथ जोड़ने के सिवाय और कुछ नहीं है। यह ध्वनि हरएक मनुष्य के अन्दर आँख के केन्द्र के ऊपर गूंज रही है। यही मुख्य चीज़ है और इससे जुड़ने की युक्ति किसी ऐसे जीवित सतगुरु से ही मिल सकती है, जो इस मार्ग के पूरे जानकार हों तथा जो अन्दर और बाहर, दोनों जगह हमारा मार्ग-दर्शन कर सकते हों। जो सतगुरु चोला छोड़ चुके हैं, वे अब हमारे लिये यह कार्य नहीं कर सकते।

आप कहते हैं कि मन आत्मा की रूह है, इस कथन से आप का क्या मतलब है, मैं नहीं समझ पाया। आत्मा और रूह एक ही वस्तु है और आत्मा को शब्द-धुन के साथ तब तक नहीं जोड़ा जा सकता, जब तक मन को आत्मा के साथ न ले लिया जाये, क्योंकि आँखों के केन्द्र पर मन और आत्मा की गाँठ बँधी हुई है। मन क्या है, यह ठीक तरह से समझा सकना कठिन है, लेकिन सन्तमत के साहित्य को पढ़ने से इसकी शक्ति और इसके काम करने के तरीकों का कुछ अन्दाज़ आपको मिल सकेगा। मन काल का प्रतिनिधि या एजेण्ट है और प्रत्येक जीवित प्राणी के साथ जुड़ा हुआ है, ताकि यह उसे वापस प्रभु के पास जाने से रोक सके। यह मन ही हमारा सबसे बड़ा शत्रु है जिसे हमें अपने काबू में लाना है। संसार में काम चलाने

के लिये मन आवश्यक है, और यदि हम उचित ढंग से इसका उपयोग न करें तो यह हमें पापों की ओर प्रवृत्त करता है और परमात्मा से दूर रखता है।

(१७२)

नामदान के समय परमात्मा के आगे लिये गये वादों को कभी नहीं तोड़ना चाहिये। यदि कोई ऐसा करता है, तो इससे यही पता चलता है कि परमात्मा के लिये उसकी प्रीति और भक्ति केवल मौखिक या ज़बानी है।

(१७३)

भजन-सुमिरन में हमारी कम रुचि का कारण यह है कि हम यह नहीं मानते कि यह थोड़े दिनों का मनुष्य-जीवन शीघ्र ही समाप्त हो जायेगा, और परमात्मा की प्राप्ति केवल थोड़े वर्षों की इस ज़िन्दगी में ही सम्भव है। हमारे मन ने अब तक आन्तरिक मिठास का स्वाद नहीं लिया है, केवल सांसारिक सुखों का उपभोग किया है, इसीलिये यह उनकी ओर तेज़ी से दौड़ता है।

जिन निचले केन्द्रों में हमारी चेतना हज़ारों वर्षों से रहती चली आ रही है, उनसे उसे वापस ऊपर लाने के लिये हमें अपनी ओर से लगातार कोशिश करनी पड़ती है। इसलिये भजन के समय यदि हमारा मन बाहर भटके, तो हमें हताश और निराश नहीं होना चाहिये। इसे बाहर जाने से रोकने के लिये हमें बार-बार कोशिश करनी चाहिये।

मन की चालाकियों से आसानी से घबरा न जावें। अपनी कोशिश में बराबर लगे रहें। बड़े काम कभी जल्दी में अदा नहीं होते। थोड़े क्षणों के लिये भी बार-बार अपने मन को अन्दर लाने से आपकी साधना पक्की हो जायेगी। एक समय आयेगा जब आप अपने ध्यान को आसानी से तीसरे नेत्र पर एकाग्र करके आन्तरिक आनन्द का रस लेने लग जायेंगे।

कोई शक नहीं कि शुरू में लगातार सख़्त मेहनत की ज़रूरत होती है, लेकिन जो श्रम तथा कष्ट हमें संसार के मूल्यहीन पदार्थों को प्राप्त

करने के लिये उठाने पड़ते हैं, उनके मुकाबले यह मेहनत कुछ भी नहीं है। परमात्मा के प्रति अपना परम कर्तव्य समझकर, भजन में रोज़ अत्यन्त नियमपूर्वक बैठें। इस बात की परवाह न करें कि आपका मन सहयोग देता है या नहीं, बस कोशिश करते रहें। प्रति-दिन कुछ समय सन्तमत के साहित्य के अध्ययन में भी लगायें। इससे उत्साह और लगन बनाये रखने में सहायता मिलती है।

(१७४)

आप सन्तमत के सिद्धान्तों को अच्छी तरह जानते हैं, और आपको उन पर दृढ़ रहना चाहिये। वासना ख़ुद ही एक घोर पाप है, और एक सत्संगी बहन की ओर ऐसा आकर्षण होना उसे और भी जघन्य बना देता है। सत्संगियों का एक दूसरे के प्रति ऐसे अनुचित विचार रखना कितना गम्भीर अपराध है, यह आप ख़ुद महसूस कर सकते हैं। ऐसे पापपूर्ण विचारों को अपने मन से निकाल दें। हृदय में काम के रहते हुए किसी तरह की आध्यात्मिक प्रगति का सवाल ही नहीं उठता, क्योंकि इस हालत में भजन-सुमिरन का कोई अर्थ ही नहीं रह जाता।

अपने ख़यालों को सुमिरन में लगाये रखें और जब कभी वासना-पूर्ण विचार आपके मन में आयें, उनको फ़ौरन बाहर निकाल दें। यदि आप ईमानदारी से उनसे छुटकारा पाना चाहेंगे और ऐसा करने के लिये प्रयास करेंगे, तो परमात्मा भी आपकी सहायता करेगा। इन वासनाओं से अपने मन को मुक्त करना आपके हित में है। हर वक्त अपने मन को अच्छे कामों में लगाये रखने की कोशिश करें और उसे इस प्रकार की पापपूर्ण बातों को सोचने का कोई समय न दें। मन जब भी बेकार या ख़ाली रहता है तब उसकी प्रवृत्ति मनुष्य को नीचे खींचने की होती है। उसे बेकार न रहने दें, बल्कि भजन या सुमिरन या किसी अन्य अच्छे कार्य में लगाये रखें। दृढ़ इच्छा-शक्ति, निश्चय और परमात्मा तथा सतगुरु में विश्वास आपकी समस्या को काफ़ी हद तक हल करने में सहायक होंगे। नामदान के समय किये गये अपने

वादों को याद रखें और सन्तमत के सिद्धान्तों पर जमे रहने की कोशिश करें। यदि आप ऐसा करने का पक्का इरादा कर लेंगे तो यह कठिन नहीं होगा।

(१७५)

दुखी मानवता की सहायता के लिये संसार में हर समय सतगुरुओं और सन्तों को भेजने की यह योजना प्रभु की अपनी बनाई हुई है। संसार कभी सतगुरु से ख़ाली नहीं रहता। अपने घुरधाम की यात्रा में हमें हर कदम पर एक जीवित सतगुरु की मदद की ज़रूरत पड़ती है।

सब पूर्ण सतगुरुओं के उपदेश बिलकुल एक समान हैं। लेकिन सभी गुरु पूर्ण गुरु नहीं होते। वे अलग-अलग रूहानी स्तर पर पहुँचे हुए होते हैं। हज़रत ईसा ने कहा है, 'मेरे पिता के घर में अनेक महल हैं।' यह आध्यात्मिक मार्ग में आने वाली विभिन्न मंज़िलों, जिनमें सर्वोच्च मंजिल भी शामिल है, की ओर इशारा है। कोई गुरु अपने शिष्य को अपनी पहुँच से आगे नहीं ले जा सकता। सन्तमत के साहित्य में जहाँ यह कहा गया है कि सब सतगुरु एक ही सत्य का बयान करते हैं, वहाँ मतलब सर्वोच्च श्रेणी के पूर्ण सतगुरुओं से है।

सन्तमत की पुस्तकों का अध्ययन कृपया बहुत खोज के साथ करें। किसी भी बात को अपने मित्रों के निर्णय के अनुसार आंख मूंद कर न मान लें। ख़ुद पूरी तरह खोज करें। नामदान के लिये कोई जल्दी न करें। यह मैं आपके अपने हित में कह रहा हूँ, क्योंकि जब आप मार्ग के सिद्धान्तों को पूरी तरह समझ लेंगे और जब आपको विश्वास हो जायेगा कि यह मार्ग आपके लिये सही है, तब आपके लिये मार्ग सहज हो जायेगा। यदि इस खोज में सारा जीवन व्यतीत हो जाये, तो यह समय की बर्बादी नहीं है, बल्कि उस व्यक्ति के लिये श्रेयस्कर ही है।

(१७६)

सन्तमत हमें यह नहीं कहता कि जीवन और प्रकृति के सौन्दर्य

को हम न देखें, किन्तु यह बताता है कि उनमें हम इतने आसक्त न हो जायें कि जीवन के अपने असली ध्येय को ही भुला दें। इस तरह का दृढ़ बन्धन अथवा मोह हमें इस दुनिया में फिर से खींच लायेगा ताकि हम अपनी इच्छाओं की पूर्ति कर सकें। सत्संगी को जीवन की खुशी उसी तरह लेनी चाहिए जैसे मधुमक्खी शहद की प्याली के किनारे बैठ कर उसका रस लेती है। वह मधु की मिठास का आनन्द लेती है और सूखे व साफ़ पंखों से उड़ भी जाती है। किन्तु यदि वही मधुमक्खी शहद के प्याले के बीच में बैठी होती, तो उसके पंख शहद में भर जाते और वह शहद में डूब जाती और अन्त में अपना जीवन खो देती। बतख़ पानी में रहती है किन्तु उसके पंख गीले नहीं होते, और वह सूखे पंखों से उड़ जाती है। हमें भी संसार में इसी प्रकार रहना चाहिये। परिवार, समाज, बिरादरी और देश के प्रति हमें अपनी ज़िम्मेदारी पूरी करनी चाहिये, किन्तु अपने आपको उनमें इतना लीन नहीं कर देना चाहिये कि परमात्मा को ही भूल जायें।

सन्तमत के उपदेशों के अनुसार एक साफ़ और सदाचारपूर्ण जीवन व्यतीत करें, और प्रतिदिन अपने भजन-सुमिरन को नियमपूर्वक समय दें। इससे आपको शान्ति और संतोष मिलेगा और जिस भरोसे का अभाव आप महसूस कर रहे हैं, वह भी मिलेगा।

(१७७)

शरीर को तन्दुरुस्त रखने के लिये हठ योग का अभ्यास करने में कोई हानि नहीं है, किन्तु हठयोग आदि के साथ किसी प्रकार का ध्यान करना बहुत खतरनाक हो सकता है। पहली बात तो यह है कि हठयोग किसी पूरे योगी की देख-रेख में किया जाना चाहिये, जो शिष्य के पास मौजूद हो। फिर कभी-कभी हठयोग के अभ्यासी में खतरनाक मानसिक शक्तियां जाग उठती हैं, जिनको, मन और विचार की पवित्रता के अभाव में, काबू करना मुश्किल होता है। ऐसे समय में ये शक्तियां बहुत ख़तरनाक सिद्ध होती हैं, और इनका परिणाम पागलपन या आत्म-घात तक हो सकता है। इसके अतिरिक्त, इस

प्रकार के योग से प्राप्त होने वाले फल का कोई आध्यात्मिक या रूहानी फ़ायदा नहीं होता ।

परमात्मा की प्राप्ति में यदि आपकी रुचि सच्ची है तो सन्तमत की पुस्तकें पढ़ें और इस सुरत-शब्द योग को समझने की कोशिश करें, जिसमें कोई नुकसान नहीं होता और जिसमें कम मेहनत और समय में अधिक अच्छे फल मिलते हैं। जब आप इस योग की दूसरों से तुलना करेंगे तब आपको पता चलेगा कि यह दूसरे योगों से बहुत अच्छा है। इस तरह इस बारे में आप खुद ही अपना फ़ैसला कर सकेंगे।

(१७८)

हमें चाहिये कि अपने अन्तर में गूंजने वाली परमात्मा की आवाज को पकड़ें। यह आवाज हमें खींच कर वहां ले जायेगी जहां से निकल रही है। धुरधाम पहुँचने के लिये इसके सिवाय और कोई मार्ग नहीं है। मन बहुत शक्तिशाली विरोधी है और यह हर समय हमें मालिक से दूर रखने की कोशिश करता रहता है। अपनी मौजूदा हालत में यह अन्तरमुख नहीं होना चाहता और गन्दे तथा मलीन इन्द्रिय-भोगों में डूबा रहना चाहता है। इसलिये हमारे और मन के बीच जोरदार लड़ाई होनी ही है; हमें इस शत्रु से हमेशा सावधान रहना चाहिये।

जब तक मन अन्तर की सुरीली आवाज में रस लेना आरम्भ नहीं करता, आत्मा असहाय रहती है, क्योंकि दोनों एक जटिल गांठ में बंधे हैं। हमें पूरी कोशिश करके इस मन को अन्तर की ध्वनि में रस लेने के लिये मजबूर करना चाहिये। अपनी लगातार कोशिशों से हमें अन्त में जरूर सफलता मिलेगी। बेशक प्रगति धीमी होती है, परन्तु हमें इस मार्ग में कभी निराश नहीं होना चाहिये। लाखों जन्मों में हमने कर्मों का जो बोझ इकट्ठा किया है, उसे खत्म करने में समय तो लगेगा ही। प्रेम और भक्ति के साथ भजन और सुमिरन करने से यह सम्भव हो सकेगा। यदि आप अपनी भरसक कोशिश जारी रखेंगे तो एक दिन अपने धाम पहुँच जायेंगे। आपकी कोशिश

जितनी ज्यादा होगी, परमात्मा आप पर उतनी ही अधिक दया-मेहर करेगा।

(१७९)

'साइन्टालाजी' के बारे में जो कुछ मुझे मालूम है, उसके आधार पर मैं कह सकता हूं कि यह ख़तरे से खाली नहीं है। मेरे देखने में ऐसे वृत्तान्त आये हैं, जहां इसके फेर में पड़कर लोग अपना विवेक खो बैठे हैं। सन्तों की शिक्षा का जो लोग पालन करते हैं, उन्हें मन को व्यवस्थित और नियंत्रित रखने की युक्ति दी जाती है। आजकल की इन नई-नई प्रणालियों का प्रयोग करना उचित नहीं। इनका अन्तिम परिणाम कभी-कभी बहुत हानिकारक होता है।

(१८०)

सन्तमत के अनुसार विवाह किये बग़ैर एक पुरुष और स्त्री का घनिष्ट सम्बन्ध होना बहुत अनुचित है। हो सकता है कि विवाह केवल एक कानूनी औपचारिकता हो या जैसा कि आपका कथन है, कागज़ का एक टुकड़ा ही हो, किन्तु सामाजिक और नैतिक बन्धनों का अपना अलग महत्व और मूल्य है। पति और पत्नी के आपसी सम्बन्धों के अलावा किसी दूसरे के साथ ऐसे संबंध उचित नहीं कहे जा सकते।

(१८१)

मृत्यु के समय किसी भी सत्संगी की आत्मा शरीर का त्याग उस समय तक नहीं करती, जब तक सतगुरु उसे लेने नहीं आते। किन्तु सभी सत्संगियों को यह बात प्रकट करने की इजाज़त नहीं दी जाती। सतगुरु को इन बातों की चर्चा और प्रचार की क्या ज़रूरत है?

(१८२)

मुझे खुशी है कि आपने एक सत्संगी बहन की सहायता की, किन्तु आप उसके बारे में परेशान न हों। परमात्मा सबकी संभाल कर रहा है। हर व्यक्ति के अपने कर्म होते हैं, जिनका उसे सामना करना पड़ता है और यह प्रारब्ध बदला नहीं जा सकता। 'जैसा बोओगे, वैसा काटोगे'—जीवन का अटल नियम है। कुछ का बोझ हलका है,

दूसरों का बोझ भारी हो सकता है, किन्तु याद रखें कि परमात्मा हर एक शिष्य का बोझ शीघ्र हलका करने में सहायता पहुँचा रहा है।

श्रद्धा और भक्ति के साथ किये गये भजन-सुमिरन के द्वारा ही हम प्रभु के सामने खड़े होने के योग्य बन सकते हैं। हमें इस जीवन की कठिनाइयों से ऊँचा उठने की कोशिश करनी चाहिये। यह जीवन अनित्य और नाशवान है। आगे आने वाला जीवन बहुत महत्वपूर्ण है और हमें उसके लिये कार्य करना चाहिये।

कृपया किसी के बारे में चिन्ता न करें, केवल परमात्मा के चिंतन में लगे रहें। जब वही सब का कर्ता-धर्ता है और हमें रास्ता दिखाने के लिये हमेशा तैयार रहता है, तब हमें किसी बात की फ़िक्र क्यों करनी चाहिये? केवल वही जानता है कि हम में से हरएक के लिये सबसे अच्छा क्या है।

(१८३)

मृत्यु के समय एक सत्संगी ख़ुशी के साथ अपनी आँख का अथवा शरीर के किसी अंग का दान कर सकता है। यह हरएक का निजी मामला है, और सन्तमत के सिद्धान्तों के विरुद्ध नहीं है।

(१८४)

जिसे आप अपना अनुभव कहते हैं, उसे कोई महत्व न दें। जब तक मनुष्य को नाम नहीं मिलता और वह एक देहधारी सतगुरु के उपदेशों के अनुसार भजन-सुमिरन नहीं करता, तब तक उसके किसी अनुभव पर भरोसा नहीं किया जा सकता। बायीं ओर से प्राप्त होने वाले तमाम अनुभव अत्यन्त हानिप्रद होते हैं, और जो कुछ ध्यान आप कर रहें हैं, उसे छोड़ देना बेहतर होगा। किसी भी प्रकार के ध्यान के बारे में इतनी जल्दबाज़ी करने की कोई आवश्यकता नहीं। यह समय तो आपको सन्तमत की पुस्तकों के अध्ययन और [illegible] के सिद्धान्तों के अनुसार जीवन बिताने की कोशिश में लगाना [illegible] मन एक अत्यन्त प्रबल शक्ति है जो भरोसा दिलाकर इस [illegible] को धोखा देता है कि वे यह महसूस नहीं कर पाते कि [illegible]

दिया गया है। अपने किसी भी प्रकार के अनुभव पर भरोसा न करें और ऊपर दी गयी सलाह पर अमल करें। यह आपके अपने हित में और आपकी अपनी भलाई के लिये है।

(१८५)

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि आप पर जो उदासी, थकावट और निराशा की दशा थी, वह चली गई है। हम सब के जीवन में अक्सर ऐसे समय आया करते हैं। परमात्मा की भक्ति में जो दृढ़ और अडोल रहता है, वह बिना अपनी समता या धीरज खोये सरलता और साहस के साथ उनका सामना कर सकता है। झूले की दोनों छोरें आड़े डंडे पर कस कर बँधी होती हैं, उसे चाहे कितनी ज़ोर से इधर-उधर झुलायें, मगर वह हमेशा अपने स्थान पर आ जाता है। इसी तरह, यदि प्रेम और भक्ति के द्वारा परमात्मा के साथ हमारी गहरी लिव लग गयी है, तो दुनिया में आने वाली दुख-दर्द की तेज़ आँधियां हमें डाँवाँडोल नहीं कर सकतीं।

(१८६)

अपने बहरेपन के बारे में परेशान न हों। कभी-कभी सत्संगी के लिये यह छिपा हुआ वरदान सिद्ध होता है। टेप रेकार्ड सुनने के बदले आप सन्तमत के साहित्य का नित्य अध्ययन कर सकते हैं। यह भी उतना ही अच्छा साबित होगा।

(१८७)

व्यर्थ ही मन के बहकावे में न आयें। सन्तमत कोई नया मार्ग नहीं बतलाता और न कर्मकाण्ड और रीति-रिवाजों में विश्वास रखता है। यह परमात्मा के पास वापस जाने के उस मार्ग की ओर इशारा करता है, जो हरएक मनुष्य के अन्तर में है। इस मार्ग या पथ को परमात्मा ने स्वयं बनाया है। यह कोई धर्म नहीं है जिसे हम किसी भी दिन छोड़ दें और जब चाहें अपना लें। यह समझने की कोशिश करें कि सन्तमत क्या है और इसकी तह में कौन-सा गहरा सत्य छिपा हुआ है।

केवल मन ही हमारा एकमात्र विरोधी है, जिसे हमें वश में करना है। यह काम कुछ दिनों या वर्षों का नहीं है। एक सूफ़ी सन्त के अनुसार, 'प्रियतम की बाहों में पहुँचने के लायक बनने में पूरा जीवन तक लग जाता है।' ज़रा सोचें, जब से सृष्टि की रचना हुई, तब से मन को इन्द्रियों का सुख भोगते हुए कितना समय बीत चुका है। और यह आप स्वयं समझ सकते हैं कि मन की इस आदत को बदलने के लिये कितना समय लगेगा और कितनी मेहनत की ज़रूरत होगी।

इस स्थूल संसार में हमारे जीवन में होने वाली बातों में सन्तमत दख़ल नहीं देता, वे हमारे प्रारब्ध के अनुसार होती हैं। यह मार्ग केवल परमात्मा की प्राप्ति के लिये है। भजन-सुमिरन को हम बाद में करने के लिये कैसे छोड़ सकते हैं जब कि हमें कल की ख़बर नहीं है और न ही आने वाले कल पर हमारा कोई नियंत्रण या वश है। मनुष्य चाहता कुछ है, होता कुछ और है। परमात्मा के सुमिरन के बिना ली गयी हमारी प्रत्येक सांस समय की बर्बादी है हरएक दिन हमें मौत के करीब ले जा रहा है। समय कम है और हमें करना बहुत है। कृपया मन की बात न मानें, यह हमें मार्ग से हटाने के लिये हमेशा तैयार रहता है।

भजन-सुमिरन को जितना हो सके समय देकर सन्तमत को मौका दें, परन्तु अन्तर में चढ़ाई करने की कोई कामना न करें। रूहानी उन्नति हमारे हाथ में नहीं, बल्कि एक बहुत ऊँची शक्ति के हाथ में है। हमारा कर्तव्य तो एक भिखारी की तरह परमात्मा के द्वार पर पड़े रहना है, और उसकी करुणा और दया-मेहर के लिये प्रार्थना करना है। आपका मन जो कुछ कहता है, मुझे आशा है, आप उसे नहीं सुनेंगे और शाकाहारी भोजन पर रहते हुए रोज़ श्रद्धा और भक्तिपूर्वक अधिक से अधिक समय भजन-सुमिरन को देंगे।

(१८८)

अपने पत्र में आपने जिस अनुभव का वर्णन किया है वह शुभ है। उससे घबरा कर भजन-सुमिरन नहीं छोड़ना चाहिये।

में दिखने वाले ऐसे प्रकाश से कोई हानि नहीं होती। अभ्यासी को चाहिये कि अन्दर होने वाले अनुभवों को सहज भाव से स्वीकार करे तथा ऐसे समय में पाँच नाम का सुमिरन करता रहे, और किसी भी आवाज़ या दृश्य के प्रति अपने अन्दर मोह पैदा न होने दे। अन्दर जो कुछ भी आये उसे आप देखते या सुनते रहें, पर अपने ध्यान को आँखों के केन्द्र से हटने न दें। जब ऐसे दृश्यों का अनुभव होने लगे तो सुमिरन छोड़कर भजन में बैठने के बजाय सुमिरन को चालू रखना ही उत्तम है।

इन दृश्यों की छानबीन या विश्लेषण करने की कोशिश न करें। शिष्यों का ध्यान जब थोड़ी देर के लिये अचानक तीसरे तिल से ऊपर भी चला जाता है, तब कभी-कभी ऐसे दृश्य दिखायी देते हैं। अच्छे कर्मों के कारण अथवा सतगुरु की दया-मेहर से ऐसा हो सकता है। ऐसी बातों के लिये हमें परमात्मा का आभारी होना चाहिये, और दीनता तथा अधिक लगन और चाव के साथ अभ्यास करते रहना चाहिये। कभी-कभी ऐसे दृश्यों का उद्देश्य भजन-सुमिरन के प्रति सत्संग के चाव और लगन को बढ़ाना भी होता है। जब आप अन्तर में प्रवेश करेंगे तो ऐसे और भी अनेक सुन्दर दृश्य देखेंगे और मधुर ध्वनियाँ सुनेंगे, जैसी इस संसार में कहीं नहीं हैं। भजन-सुमिरन में और अधिक प्रेम व भक्ति के साथ लगे रहें और बिलकुल न डरें। जब आपके साथ पवित्र नाम की शक्ति है और अन्तर में सतगुरु भी हैं तब कोई भी आपको हानि कैसे पहुँचा सकता है?

(१८९)

आपके प्रथम प्रश्न के बारे में सुमिरन का लक्ष्य और ध्येय अन्तर में सतगुरु के दिव्य स्वरूप का दर्शन है, परन्तु इसके लिये सतगुरु के बाहरी स्वरूप का ध्यान करना लाज़िमी या बहुत ज़रूरी नहीं है। सुरत या चेतनता को तीसरे तिल पर ठहराये रखने में ध्यान सहायक होता है, क्योंकि कभी-कभी अन्दर अँधेरे में बिना किसी आधार के सुरत को ठहराये रखना कठिन होता है। केवल सुमिरन ही सुरत या शरीर

की समस्त चेतना को तीसरे तिल पर लायेगा, और मन तथा आत्मा को अन्दर सूर्य और चन्द्र के मंडलों के पार सतगुरु के दिव्य स्वरूप तक ले जायेगा। जिस सतगुरु ने आप को नाम दिया था वे ही सतगुरु अपने दिव्य स्वरूप में आपके सामने प्रकट होंगे। उन का रूप वैसा ही होगा जैसा कि आपको नाम देते समय था।

इसमें सन्देह नहीं कि हर सतगुरु का असली स्वरूप शब्द होता है। परन्तु अन्दर अपने शिष्य के सामने नूरी अथवा ज्योतिर्मय स्वरूप में प्रकट होते समय उनका वही रूप होता है जो कि देह स्वरूप में है या था। आपको बड़े महाराज जी की फोटो का ध्यान नहीं करना चाहिये, क्योंकि उससे कोई सहायता नहीं मिलेगी। यदि आप चाहें तो जिन सतगुरु का आपने देहस्वरूप दर्शन किया है उनका ध्यान कर सकते हैं। अन्त में जब आप तीसरे तिल के पार पहुँचेंगे तो उनके तथा आपके सतगुरु (बड़े महाराज जी) के बीच का भेद मिट जायेगा, तथा कुछ और ऊपर जाने पर आप बड़े महाराज जी का उनके दिव्य स्वरूप में दर्शन कर सकेंगे। सुमिरन पर बल दें क्योंकि आखिर यही आपको दिव्य स्वरूप तक ले जायेगा।

(११०)

इसका अर्थ यह नहीं है कि नाम लेने के बाद हम अधिक पापी हो जाते हैं। हमें अपनी कमजोरियों का अधिक ज्ञान हो जाता है। जीवन में कई बातों को हम कोई महत्व नहीं देते थे, और नाम लेने से पहले हम अपनी कई बुरी आदतों पर गर्व किया करते थे और बिना सोच-विचार के उनमें लगे रहते थे। अब नाम लेने के बाद हम महसूस करने लगते हैं कि वे कितना नुकसान पहुँचाती थीं और वे ऐसी कमजोरियाँ हैं जिन्हें हमें जीतना चाहिये।

हमें जरा भी निराश और हताश नहीं होना चाहिये। सन्तों के मार्ग में हम सभी मुक्ति के लिये संघर्ष कर रही आत्माएँ हैं। हमें नाम दिया गया है, तो इसका यही अर्थ है कि परमात्मा हमें अपने पास वापस बुलाना चाहता है। जब यह उसकी इच्छा है, तो हमें

अपने लक्ष्य को प्राप्त करने से कौन रोक सकता है ? किन्तु हमें परमात्मा के सामने जाने के लायक बनना चाहिये । किसी अपवित्र या गन्दी वस्तु को वह छूता या स्वीकार नहीं करता । उसके सामने खड़े होने से पहले हमें अपने-आपको निर्मल करके शीशे की तरह चमकाना है । देरी सिर्फ समय की है । मन के साथ चल रहे युद्ध को हमें जीतना ही है । अनेक आघात किये जायेंगे और अनेक सहने होंगे । सतगुरु और परमात्मा हमारे साथ हैं, इसलिये विजय निश्चित है । किसी बात की चिन्ता किये बिना नित्य अपना कर्तव्य करते रहें । सब दया-मेहर, कृपा, पवित्रता, प्रेम और भक्ति केवल भजन-सुमिरन से ही आयेगी ।

(१९१)

प्रभु का प्रेम सबके लिये है, और यह हमको न मिले इस का प्रश्न नहीं उठता । हमें अपने आपको उस प्रेम के लायक बनाना है । यदि हममें ग्रहण करने की ताकत हो, तो प्रेम अन्दर से ही आता है । वह कहीं बाहर नहीं है । इसका स्रोत आपके भीतर है, और भजन-सुमिरन के द्वारा यह हमेशा बढ़ता रहता है ।

(१९२)

आपकी समस्या निजी है और ऐसे मामलों में सलाह देना मैं उचित नहीं समझता । मैं दोनों पक्षों को आपस में तय करने के लिये छोड़ देता हूँ । जहाँ तक मेरे अपने विचारों की बात है, मैं तलाक का विरोधी हूँ । मेरा विचार है कि पारिवारिक मेल कुछ त्याग करके भी कायम रखना चाहिये, विशेष कर उस स्थिति में भी जब बच्चों को पिता और माता दोनों के प्यार की ज़रूरत है । अपने माता-पिता में अनबन के कारण उन्हें क्यों दण्ड मिले ? मैं इस बात को इसी दृष्टि से देखता हूँ ।

दुनिया में सब जगह हमेशा मतभेद हुआ ही करते हैं, किन्तु इस का अर्थ यह नहीं कि हम लोगों से दूर भाग जायें और अपने सम्बन्ध तोड़ लें । यह मेरी निजी राय है, और इसे मैं किसी पर थोपना नहीं

चाहता। आपने मेरी राय माँगी है, केवल इसीलिये मैंने इतना कुछ कहा है। परिस्थितियों के अनुसार जो आप उचित समझें वह करें।

(१२३)

मुझे यह जानकर दुःख हुआ कि आपका स्वास्थ्य ठीक नहीं है और शायद आपको अस्पताल में जाना पड़ सकता है। कृपया याद रखें कि आपकी बीमारी का नामदान से कोई सम्बन्ध नहीं है। यह बहुत दुःख की बात है कि आपने शाकाहारी भोजन छोड़ दिया है। नामदान के समय आपने ईमानदारी और सच्चे मन से ही वचन लिया था, उसे आपको याद रखना था। सन्तमत में शाकाहारी भोजन पर दृढ़ रहना कोई औपचारिकता मात्र नहीं है, यह बहुत ज़रूरी बात है। माँसाहारी भोजन का अर्थ कर्मों का अत्यन्त भारी कर्ज़ लेना है। जिसका भुगतान करना बहुत मुश्किल होता है। सन्तमत के मार्ग में एक बार दाखिल होने के बाद किसी को भोजन के नियम से गिरना नहीं चाहिये।

अस्पताल के अधिकारियों को यदि आप अपने सिद्धान्त समझा दें और उन्हें माँसाहार के सम्बन्ध में अपनी आपत्ति बता दें, तो मैं समझता हूं कि वे आपकी भावना का सम्मान करेंगे। मैंने कुछ सत्संगियों से सुना है कि जेल तक में, अधिकारियों को केवल अपनी बात समझाकर, वे विशेष शाकाहारी भोजन पाने में सफल हुए हैं। सन्तमत के सिद्धान्त बहुत स्पष्ट हैं, और मुझे विश्वास है कि आप स्वीकार करेंगे कि मैं इन सिद्धान्तों के खिलाफ़ कोई राय नहीं दे सकता।

(१२४)

प्यार आपके अन्दर में है, और यह भजन-सुमिरन से फलता-फूलता है। इस मार्ग पर आप जितना अधिक प्रयास करते हैं, उतना ही अधिक अन्दर का प्रेम विकसित होता है। यह सब परमात्मा की दया है। अगर भजन-सुमिरन प्रेम और भक्ति के साथ रोज़ करते रहें, तब दिव्य ज्योति और शब्द के आन्तरिक द्वार खुल जायेंगे

(१९५)

आपके पत्र में लिखी गयी बातों के बारे में मेरा उत्तर है कि जिन आत्माओं को अन्ततः सन्तमत के उपदेशों का पालन करना है, उन्हें कभी-कभी सन्तमत के सम्पर्क में आने के बहुत पहले से ही ऐसे अनुभव होने लगते हैं। ये अनुभव एक तरह से उनकी आने वाली रूहानी ज़िन्दगी के सूचक हैं। यह ज़रूरी नहीं कि ऐसे लोगों को सिर्फ़ सतगुरु के ही दर्शन हों। कभी-कभी उन पहुँची हुई आत्माओं के चेहरे, जिनके साथ पिछले जन्मों में हमारा सम्बन्ध रहा है, हमारे सामने प्रकट होने लगते हैं।

जब आपको नाम मिल ही चुका है, आप अपने मंज़िले-मकसूद पर चल रहे हैं और एक दिन परमात्मा तक पहुँच जायेंगे, तो अब उन पुराने अनुभवों की छानबीन करने या उनके बारे में सोचते रहने की कोई ज़रूरत नहीं है। अब तो अपने भजन-सुमिरन में एक-चित्त हो कर लगने और सन्तमत के सिद्धान्तों के अनुसार अपना जीवन बिताने का समय आ गया है। नियमपूर्वक अपना भजन-सुमिरन करते रहें आप ज्यों-ज्यों अन्तर में आगे बढ़ेंगे, आपको अपने अन्दर और सुन्दर वस्तुएँ दिखाई देंगी। केवल भजन-सुमिरन के द्वारा ही आप सच्चा सुख और परम आनन्द प्राप्त कर सकेंगे और आपको अनुभव होंगे जो वर्णन से परे हैं।

(१९६)

आप अपने पूर्व जन्म के अच्छे कर्मों के कारण नामदान से ही बड़े महाराज जी का अन्तर में दर्शन कर सके थे। ऐसे अ दूसरों को नहीं बताने चाहियें। यह आपका निजी खज़ाना है, प्यार के साथ सँभाल कर रखना चाहिये और केवल अपने सतग ही बताना चाहिये।

(१९७)

शुरू-शुरू में शब्द-धुन को सुनने के लिये दाहिने कान को से बन्द करना ज़रूरी है ताकि बाहरी आवाज़ों को रोका

और अन्तर में शब्द को सुनना आसान हो सके। यदि आप कान बन्द किये बिना ही अन्तर में ध्वनि को दाहिनी ओर से या भौंहों के बीच में सुन सकते हैं, तो खुशी के साथ ऐसा कीजिये।

(१९८)

परमपिता परमात्मा केवल एक ही है और उसी के पास हमें वापस पहुँचना है। हमारी आत्मा परमानन्द और सुख के उसी सागर की एक बूंद है। हमें अपने परमपिता के पास वापस ले जाने वाले मार्ग में आन्तरिक मंजिलें हैं। हज़रत ईसा ने भी इनका उल्लेख करते हुए कहा है, 'मेरे पिता के घर में अनेक मंज़िलें हैं।' अपने परमपिता के पास वापस ले जाने वाले मार्ग में हमें जिन आन्तरिक मंजिलों से गुज़रना पड़ता है, ये नाम उन मंज़िलों के धनियों के हैं। जब हम इन धनियों या शक्तियों का सुमिरन करते हैं तो वे हमारी आन्तरिक प्रगति में मदद देते हैं और मार्ग में आने वाली अलग-अलग रूहानी मंजिलों को पार करने में सहायक होते हैं।

(१९९)

आसन के सम्बन्ध में कृपया याद रखें कि यह कोई बहुत महत्व की चीज नहीं है। महत्व की बात तो यह है कि जो आसन आप चुनें उस पर कायम रहें और सुमिरन के दौरान उसमें हिले-डुलें नहीं। हिलने-डुलने से शरीर से चेतना को सिमटाने में रुकावट पैदा होगी। आसन अपने आप में महत्वपूर्ण नही है। जो आपको सुविधाजनक प्रतीत हो, वह आसन चुन लें, किन्तु उस पर अचल या अडोल रहने की कोशिश करें और शरीर के अंगों को सुन्न होने दे, जो कि सिमटाव का लक्षण है। शरीर में होने वाले प्रारम्भिक कष्टों, दर्दों और चुभनों की परवाह न करें, बल्कि उन्हें सहने की कोशिश करें। जब तीसरे तिल की ओर जाने के लिये चेतना सिमटने लगती है, तभी ऐसा होता है और कुछ सत्संगी दूसरों की अपेक्षा इसे अधिक महसूस करते हैं। यह हमेशा कायम नहीं रहता। धीरे-धीरे जब आप इस सिमटाव के अभ्यस्त या आदी हो जायेंगे, और जब सुमिरन पक्का

हो जायेगा, तो ये कष्ट गायब हो जायेंगे। तब सिमटाव खुद ही, किसी भी प्रकार के कष्ट के बिना, एक सुखद प्रक्रिया बन जायेगा।

(२००)

हमारे जीवन में अच्छी भक्ति की घड़ियाँ और ख़ालीपन के क्षण कर्मों के चक्र के फलस्वरूप ही आते हैं। जैसे-जैसे भजन-सुमिरन में उन्नति होगी और प्रेम तथा भक्ति अधिक गहरी होगी, वैसे ही अभ्यास में मिलने वाला सुख स्थायी और स्थिर होता जायेगा।

(२०१)

बाइबिल में वर्णित 'दि सिल्वर कॉर्ड' अर्थात 'रूपहरी डोर' से तात्पर्य उस अदृश्य कड़ी से है जो आतमा को स्थूल शरीर से जोड़े रखती है। जब तक यह 'सिल्वर कॉर्ड' कायम और क्रियाशील रहती है, तब तक हम इस संसार को नहीं छोड़ते।

बेशक संगीत सुनने में सुन्दर लगता है, किन्तु इस जगत का संगीत केवल मन को प्रभावित करता है और स्थायी नहीं होता। सच्चा संगीत, जिसकी धुन आपके अन्तर में हो रही है, आतमा को प्रभावित करता है, सच्ची शान्ति और सुख देता है तथा अन्त में संसार-चक्र से छुटकारा दिलाता है।

(२०२)

हृदय-प्रतिरोपण से सम्बन्धित आपके प्रश्न के बारे यह कहना है कि इस प्रतिरोपण का सन्तमत अथवा कर्मों से कोई सम्बन्ध नहीं है, व्यक्ति की मृत्यु होने पर आतमा पूरे शरीर को छोड़ देती है। फिर वह शरीर कर्मों के चक्कर में नहीं रहता। मृत्यु के बाद मनुष्य के कर्म, आतमा और मन शरीर का त्याग कर देते हैं। यदि ऐसे मृत शरीर से हृदय अथवा कोई अन्य अंग निकाला जाये तो मरने वाले पर या अंग को ग्रहण करने वाले व्यक्ति पर, एक-दूसरे के कर्मों का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। आतमा के शरीर से अलग हो जाने के बाद उस व्यक्ति के कर्मों का चक्र समाप्त हो जाता है।

(२०३)

मांस को छूना, व्यवहार में लाना या उसे अपने पालतू जानवरों को खिलाना उचित नहीं है। इस मार्ग पर चलने वालों को इससे बचना चाहिये। बेहतर होगा यदि आप उन्हें मांस, मछली या अण्डों से रहित अच्छा भोजन दें।

(२०४)

आपने अपने पत्र में जो कुछ लिखा है, उसे पढ़कर मुझे अफसोस हुआ, जो प्रश्न आपने अब उठाये हैं, उनके बारे में पूरी जाँच और खोज आपको नाम माँगने से पहले कर लेनी चाहिये थी। मैं हमेशा जिज्ञासुओं को जोर देकर समझाता हूँ कि इस मार्ग पर आने का फैसला करने से पहले सन्तमत के हर पहलू के बारे में अपने आपको पूरी तरह सन्तुष्ट कर लें। आपके पत्र से ऐसा लगता है कि मांस, अण्डे आदि निषिद्ध पदार्थों का लोभ छोड़ने में आप असमर्थ है। आपके प्रश्नों का जितना सम्भव होगा उतने विस्तार से मैं उत्तर दूगा। यदि आपने सन्तमत की पुस्तकों को अच्छी तरह पढने की कोशिश की होती तो इस समय ये प्रश्न नही उठते।

यह गलत धारणा है कि हम मांस और अण्डो के अलावा किसी अन्य पदार्थ से प्रोटीन नहीं पा सकते। संसार में करोड़ों स्त्री-पुरुष ऐसे है जो इसलिये नही कि वे सत्संगी हैं, बल्कि दूसरे कई कारणों से पक्के शाकाहारी है। उन्हें अपने शरीर के विकास के लिये आवश्यक प्रोटीन कहाँ से मिलता है? संसार के इतिहास मे ऐसे अनेक प्रतिष्ठित व्यक्ति हुए है जो पक्के शाकाहारी थे और जिन्होंने एक लम्बा और स्वस्थ जीवन व्यतीत किया है। बर्नाड शा, महात्मा गाँधी तथा अन्य अनेक विख्यात व्यक्ति शाकाहारी थे और उन्होंने अन्य साधनों से ही प्रोटीन प्राप्त किये। अमेरिका में भी कुछ चिकित्सिक है जिन्होंने यद्यपि सन्तमत के बारे में कभी नही सुना, फिर भी स्वास्थ्य और स्वास्थ्य-रक्षा की दृष्टि से पूरी तरह शाकाहारी भोजन के हिमायती हैं। उनका विचार है कि अधिक प्रोटीन का सिद्धान्त एक भ्रम है,

और व्यक्ति को शाकाहारी भोजन से भी काफ़ी मात्रा में प्रोटीन मिल सकता है। इसलिये यह सोचना विलकुल गलत है कि एक शाकाहारी को अपने भोजन में आवश्यक प्रोटीन नहीं मिलता। यह उन मांसाहारियों का केवल एक खोखला वहाना मात्र है जो अपने स्वाद को; जिस पर वे कोई नियन्त्रण नहीं रख सकते, पूरा करना चाहते हैं।

इसी विषय पर मैं आपका ध्यान डेरे द्वारा प्रकाशित 'सन्तमत दर्शन, भाग २' नामक पुस्तक के पत्र क्रमांक ४४१ और ४४४ की ओर आकर्पित करना चाहूंगा।

हम जो भोजन खाते हैं, वह हमारे मन पर वहुत प्रभाव डालता है। एक पुरानी और वहुत सच्ची कहावत है कि 'जैसा खावे अन्न, वैसा होवे मन'। वुरे भोजन से वुरे विचार पैदा होते हैं, शुद्ध भोजन से शुद्ध विचारों को प्रोत्साहन मिलेगा। शुद्ध विचार अच्छे चरित्र का निर्माण करेंगे और परमात्मा के लिए अच्छे चरित्र का होना वहुत ज़रूरी है।

सात्विक और शुद्ध भोजन (जो कि सतोगुण से सम्बन्धित है) शान्ति और शुद्ध विचार उत्पन्न करता है। यह भोजन फल, सब्जियाँ, दूध, मक्खन, पनीर, शहद, गेहूँ, दाल, मेवा, जौ, चावल इत्यादि वस्तुओं का होता है। इसमें सव सादे तथा हलके भोजन थोड़ी मात्रा में शामिल हैं।

राजसिक भोजन (रजोगुण से सम्वन्धित) वह होता है जो मन को सांसारिक कार्यों की ओर प्रवृत्त करता है। यह अण्डे, मछली, चाय, काफ़ी, मिष्ठान आदि इसी तरह की वस्तुओं का होता है। इसमें अन्य उत्तेजक वस्तुएँ या अधिक मात्रा में कोई भोजन या पेय भी शामिल हैं। ऐसी वस्तुओं के गुण, सात्विक भोजन के गुणों की तुलना में, निम्न कोटि के होते हैं। सात्विक भोजन भी अधिक मात्रा में लेने से राजसिक हो जाता है।

तामसिक (तमोगुण से सम्वन्धित) भोजन वह है जो आलस्य, क्रोध और अपवित्र विचारों को उत्पन्न करता है। इसमें मांस, मदिरा व

अन्य तरह के मादक पेय, तम्बाकू तथा भारी व बासी भोजन आते हैं।

रूहानी प्रगति के लिये मन की स्थिरता बहुत ज़रूरी है और इसके लिये उचित मात्रा में सात्विक भोजन लेना सबसे अच्छा है।

अपने मन के बहकावों में न आयें, और इस तरह की निरर्थक शंकायें उत्पन्न करके अपनी प्रगति को न रोकें। परमात्मा की प्राप्ति के लिये अंडे, शराब आदि को छोड़ना कोई बड़ा त्याग नहीं है। विश्वास करें कि संतुलित शाकाहारी भोजन के द्वारा अपने शारीरिक विकास और तन्दुरुस्ती के लिये आप मांसाहारी ख़ुराक ज़ितने ही, बल्कि उससे कहीं ज्यादा पोषक तत्व प्राप्त कर सकते हैं।

यह कहना कि स्वभाव से मनुष्य मांस भक्षक है, एक विवादास्पद विषय है। ऐसे अनेक माने हुए वैज्ञानिक हैं, जिनकी स्पष्ट राय है कि मनुष्य के दांत मांस-भक्षक पशुओं की तरह के नहीं बल्कि शाकाहारी वर्ग के जीवों के दांतों की तरह के हैं। जब प्रभु ने मानव-जाति को अनेक प्रकार के सात्विक भोजन प्रदान किये हैं तो फिर उसे पक्षियों, मछलियों और जानवरों को मारने और अपने शरीर को कब्रिस्तान बनाने की क्या आवश्यकता है? मानव-शरीर में परमात्मा निवास करता है, और यही एकमात्र ऐसी योनि है जिसमें उसकी प्राप्ति हो सकती है। इसे यथासम्भव पवित्र रखना चाहिये।

यह सिद्ध किया जा चुका है कि अच्छा संतुलित शाकाहारी भोजन शरीर और मन को अच्छा स्वास्थ्य प्रदान करता है। पर यदि वह ऐसा नहीं भी करता तो भी हमें याद रखना चाहिये कि परमात्मा को प्राप्त करने के लिये हमें कुछ त्याग करने होंगे, और कुछ सिद्धान्तों का पालन करना होगा। खाने-पीने की कुछ वस्तुओं का परित्याग सबसे सरल बात होनी चाहिये। आत्मा का कल्याण शरीर के पोषण से कहीं अधिक महत्वपूर्ण है। शाकाहारी भोजन से आत्मा के कल्याण के साथ ही शरीर का भी पोषण होता है।

सन्तमत में गंभीर बीमारियों की हालत में भी मछलियाँ और उनसे बनी वस्तुओं के खाने की इजाज़त नहं

पहले से ही गम्भीर हुई हालत में कर्मों का और बोझ क्यों बढ़ाया जाये ? अनेक गैर-सत्संगी डाक्टर भी कुछ बीमारियों में मांस और अण्डे को भोजन में से निकालने की सलाह देते हैं।

इस जन्म में आप अपना प्रारब्ध या पिछले कर्मों का फल भुगत रहे हैं, जो आपके जन्म के पूर्व ही निश्चित हो चुका था, पिछले जन्म में आपने जो कुछ बोया था, उसे यहां काट रहे हैं। इस प्रारब्ध को भुगतना ही पड़ता है। आप मांसाहार द्वारा शाकाहार से अधिक मात्रा में भी प्रोटीन ग्रहण कर लें, फिर भी प्रारब्ध के अनुसार शारीरिक बीमारियां तो भोगनी ही पड़ेंगीं।

आपका दूसरा प्रश्न उस दान के बारे में हैं जो लोग डेरे में देते हैं। बड़े दुःख की बात है कि आपने इस विषय पर कोई विचार ही नहीं किया और वस्तुस्थिति की जांच किये बिना ही जल्दबाज़ी में सतगुरुओं के ख़िलाफ़ आरोप लगा दिया। ब्यास की वर्तमान कालोनी एक ऐसा स्थान है जहां लगभग दो लाख व्यक्ति प्रतिवर्ष चार-पांच बार एकत्रित होते हैं। इसके अलावा साल में अन्य चार या पांच अवसरों पर लाख-लाख व्यक्ति इकट्ठे हुआ करते हैं। कालोनी में लगभग दो से तीन हज़ार ऐसे निवासियों की स्थायी जनसंख्या है जो यहां पूरे वर्ष भर रहते हैं। इस कालोनी का प्रबन्ध एक पंजीबद्ध न्यास (रजिस्टर्ड ट्रस्ट) द्वारा किया जाता है जो मई और जून की तपती गरमी तथा दिसम्बर और जनवरी की कड़कड़ाती ठण्ड में भी इतने बड़े जन-समूह के ठहरने की व्यवस्था करता है। यह ट्रस्ट एक निःशुल्क और मुफ्त लंगर चलाता है, कालोनी की सफ़ाई व्यवस्था का संचालन करता है, शीतकाल में विदेशी मेहमानों के यहां आगमन पर उनको निवास प्रदान करता है, एक निःशुल्क अस्पताल एक वाचनालय, एक चाय-जलपानगृह और जन-कल्याण के कई केन्द्र चलाता है। ट्रस्ट ने कितना विशाल कार्यभार अपने ऊपर लिया हुआ है और कितने लक्ष्य प्राप्त कर लिये हैं, इस पर देख कर ही विश्वास किया जा सकता है।

आप किसी से भी, जो यहां रह चुके हों, डेरे के जीवन और

कार्य के बारे में पूछें तो इस बात की कुछ कल्पना कर सकेंगे कि ट्रस्ट का बोझ और जिम्मेदारियां कितनी बड़ी हैं। उन सब को चलाने के लिये सारे दान, जो केवल सत्संगियों से ही स्वीकार किये जाते हैं, ट्रस्ट को ही दिये जाते हैं और वही इन्हें लेता है। ट्रस्ट के हिसाब की चार्टर्ड अकाउन्टेंटों के एक दल द्वारा प्रति वर्ष जांच की जाती है। आय-व्यय का चिट्ठा तैयार किया जाता है और उसे भारत सरकार के आय-कर विभाग के पास भेजा जाता है। पुस्तकों में एक एक पैसे का हिसाब रखा जाता है। न्यास अपने क्रिया-कलापों और वित्त के विवरण देते हुए अपना वार्षिक विवरण या रिपोर्ट तैयार करता है और प्रतिवर्ष उसकी एक प्रतिलिपि समस्त विदेशी प्रतिनिधियों को भेजी जाती है।

डेरे के किसी भी गुरु ने दान की पूंजी का एक पैसा भी अपने निजी उपयोग में नहीं लिया है। परम सन्त बाबा जैमलसिंह जी, जिनके नाम पर इस कालोनी का नामकरण किया गया है, सेना में सेवा-रत थे और रिटायर होने पर जो भी पेंशन उन्हे मिली उसी में उन्होंने अपना गुजारा किया। उनके उत्तराधिकारी बडे महाराज जी ने भी सेना की मिलीटरी इंजीनियरिंग डिवीजन में सेवा की और अवकाश प्राप्त करने के बाद शासन द्वारा उनकी सेवाओं के लिये दी जाने वाली पेंशन पर अपने जीवन का निर्वाह किया। यद्यपि महाराज जी के पुत्रों के पास कृषि की पारिवारिक काफी बड़ी भूमि थी, फिर भी उन्होंने अपने पुत्रों तक से कोई सहायता स्वीकार नही की। केवल अपनी पेंशन पर ही गुजारा किया। सरदार बहादुर जगतसिंह जी महाराज, जो बड़े महाराज जी के उत्तराधिकारी थे, राजकीय कृषि महाविद्यालय के उप-प्राचार्य पद से सेवा-निवृत्त अर्थात रिटायर हुए थे। अपनी सेवा-निवृत्ति के बाद उन्हें अच्छी पेंशन मिली थी और वे उस पर ही अपना जीवन-यापन करते रहे। मौजूदा गुरु के पास अपनी पारिवारिक कृषि-भूमि है और उसकी आमदनी से वे अपना और अपने परिवार का निर्वाह करने के अलावा अपनी कृषि उपज में से

मात्रा में अनाज आदि डेरे के लंगर के लिये मुफ्त देते हैं । मैं सोचता हूं कि क्या ही अच्छा होता कि इन तमाम बातों के बारे में मुझे लिखने के पहले और मार्ग से हटने का बहाना खोजने के पहले, आपने जांच-पड़ताल कर ली होती ।

आपने अपने पत्र में जो लिखा है वह ठीक नहीं है, गुरु-गद्दी एक ही परिवार में नहीं रहती । स्वामी जी महाराज ने बाबा जैमल सिंह जी महाराज को नाम दिया था, जिन्हें उन्होंने इस अभिप्राय से पंजाब भेजा था कि जिनके भाग्य में नाम लेना था, उन्हें वे मार्ग पर ला सकें । उन दोनों में कोई पारिवारिक नाता नहीं था । असल में, बाबाजी तो स्वामीजी महाराज की जाति के भी नहीं थे । बड़े महाराज जी, जो बाबा जी के उत्तराधिकारी बने और जिनसे उन्होंने नामदान प्राप्त किया, बाबाजी महाराज के परिवार के सदस्य नहीं थे । सरदार बहादुर जगतसिंह जी महाराज, जिन्होंने बड़े महाराज जी से नाम प्राप्त किया और उनके उत्तराधिकारी थे, इस संसार में उनसे सम्बन्धित नहीं थे । मौजूदा गुरु भी सरदार बहादुर जगतसिंह जी महाराज का सम्बन्धी नहीं है ।

इस अथवा उस सन्त का कौन सतगुरु था, ऐसे अर्थहीन प्रश्नों से कोई लाभ नहीं होगा । किन्तु आपकी सूचनार्थ मैं आपको बता दूं कि आगरे के स्वामीजी महाराज को आगरा से कुछ मीलों की दूरी पर स्थित हाथरस के तुलसी साहिब से प्रकाश मिला था । अब यदि आप यह पूछें कि तुलसी साहिब के सतगुरु कौन थे, तो इतिहास में इसका उल्लेख नहीं है । इतिहासकार महान शासकों, राजनीतिज्ञों, वैज्ञानिकों, आदि के जीवन में रुचि रखते हैं । महान सन्तों और पैगम्बरों के जीवन और कार्यों में उनकी रुचि नहीं होती । उदाहरणार्थ, हज़रत ईसा के जीवन की घटनाओं का इतिहास कितना अविश्वासनीय और थोड़ा है, और उनके जीवन के बारे में आज भी कितना अधिक मत-भेद है ।

एक ऊँचे धरातल से नीचे देखने पर पता चलता है कि मनुष्य की

कोई स्वतन्त्र इच्छा नहीं होती, किन्तु इस धरातल से देखें तो उसके पास सीमित स्वतंत्र इच्छा है। यह स्वतंत्र इच्छा भी प्रतिबंधित है कई बातों के अधीन हैं। यह प्रश्न इतनी बार उठाया जा चुका है और विस्तारपूर्वक इतनी बार समझाया जा चुका है कि इस पत्र में इसकी चर्चा करना व्यर्थ है। आप कृपया 'परमार्थी-पत्र, भाग २' तथा 'सन्त संवाद, भाग १' पढ़ें, जिनमें इस विषय को विस्तारपूर्वक समझाया गया है।

अन्त में मैं आप से विशेष रूप से कहना चाहूंगा कि वर्तमान या अपने आप पर ध्यान दें, बीते हुए कल में न उलझें। इस छोटी और अनिश्चित जिन्दगी में भजन-सुमिरन ही सबसे महत्वपूर्ण वस्तु है। प्रत्येक क्षण कीमती है, क्योंकि हम नहीं जानते कि कब बुलावा आ जाये। इस बहुमूल्य जीवन को अर्थहीन प्रश्नों और तर्कों में बरबाद करने से कोई लाभ नहीं। ऐसे व्यर्थ के प्रश्न और शंकायें उठाने की मन की आदत है, और वह इन्हें इसलिये उठाता है कि हम सच्चे मार्ग से दूर रहें। यदि हम इस पर नियंत्रण या रोक नहीं रखेंगे, तो अन्त में, जब 'बिगल' बजेगा और हमें इस जीवन के रंगमंच से वापिस बुलाया जायेगा, उस समय हमें पछताना पड़ेगा। यह कोई नहीं जानता कि वह बुलावा कहां और कब आयेगा या जीवन में अभी कितना समय बाकी है। प्रत्येक क्षण को परमात्मा की भक्ति और ध्यान में बिताना चाहिये। इन्द्रियों के भोगों का अन्त, देर-अबेर, यातना और मरण में होता है। आइये, हम उस स्थायी सुख और अनन्त आनन्द को प्राप्त करने के लिये मेहनत करें, जोकि हमारा ध्येय, हमारी मंजिल है।

इतने विस्तार में मैंने इस आशा से लिखा है कि जो जिम्मेदारी आपने ली है, उसे आप याद रखेंगे और जिस मार्ग और उद्देश्य को प्राप्त करना चाहते हैं उस पर डटे रहेंगे।

(२०५)

मुझे प्रसन्नता है कि आपने सन्तमत के मार्ग पर दृढ़ रहने के

महत्व को महसूस कर लिया है और मांस, शराब आदि वर्जित वस्तुओं को छोड़ने का निश्चय कर लिया है। हरएक व्यक्ति अपने कर्मों के लिये उत्तरदायी है ; यह आपके सोचने-समझने की बात है कि पूरी तरह शाकाहारी भोजन पर वापिस आने में आप कितना समय लगाते हैं। परन्तु इससे इंकार नहीं किया जा सकता कि जब भी आप वर्जित भोजन ग्रहण करते हैं, आप अपने कर्मों का बोझ बढ़ाते हैं। किसी के प्राण लेकर उसके माँस से अपनी भूख मिटाना सन्तमत में, और यों भी, बहुत बड़ा पाप है। वास्तविक हत्या आप स्वयं भले ही न करते हों, किन्तु इससे कोई विशेष अन्तर नहीं पड़ता।

(२०६)

आपने अपनी वर्तमान हालत के बारे में जो कुछ लिखा है, उसे पढ़कर मुझे दुःख हुआ। मनुष्य कोई भी काम जब कुदरत के खिलाफ़ करता है तो उसके कारण स्वाभाविक तौर पर उसे कष्ट झेलने पड़ते हैं, उसके स्वाभिमान को ठेस लगती है, और वह दूसरों की नज़रों में गिरता है। हस्तमैथुन की आपकी आदत अस्वाभाविक है ; इसके फलस्वरूप आपको लज्जा आती है और आपका स्वाभिमान गिरता है।

जब आप यह अच्छी तरह जानते हैं कि जैसा आप करते हैं, वैसा करने के लिये प्रकृति ने हमें नहीं बनाया है, तो इसे छोड़ क्यों नहीं देते ? ऐसा क्या है, जिसे यदि मनुष्य ठान ले, तो नहीं छोड़ सकता ? अधःपतन की ओर ले जाने वाला यह काम ऐसा नहीं है कि उसके बिना आप या कोई अन्य जी नहीं सकता। ऐसा भी नहीं कि जिसे छोड़ा नहीं जा सकता। मनुष्य ने जीवन में अनेक महान त्याग किये हैं, और यह उनकी तुलना में कुछ भी नहीं है।

पुरुषों तथा स्त्रियों के समलैंगिक संबंध केवल पश्चिमी समाज द्वारा ही घृणा से नहीं देखे जाते, बल्कि संसार का हर भला और समझदार व्यक्ति इस बारे में इसी तरह के विचार रखता है। कोई भी नेक और आदरणीय व्यक्ति इस बुराई को उचित नहीं मानेगा। इस आदत को छोड़कर इस अपराध की भावना से छुटकारा पा लें।

आपको केवल अडिग संकल्प और दृढ़ इच्छा-शक्ति की आवश्यकता है। अपने मन से कह दें कि अब भविष्य में आप ऐसे ओछे और हीन कर्म नहीं करेंगे। अपने मन और इन्द्रियों को ऐसे काम न करने दें जिनमे आपको दूसरों की दृष्टि में गिरना पड़े और जिनको खुद आप का अन्तःकरण गलत समझता है। अगर आप ईमानदार और सच्चाई के साथ कोशिश करेंगे तो मालिक भी आपको इस बुरी आदत को जीतने में मदद करेगा। कोशिश करने की शक्ति और इच्छा आपके अन्दर से उत्पन्न होनी चाहिये। सुमिरन पर अधिक जोर दें और ऐसे हीन विचार अपने मन में न आने दें। सुमिरन में पहले से ज्यादा समय देने और सन्तमत की कुछ पुस्तकों का पाठ करने से आपको आवश्यक मदद व शक्ति मिलेगी।

(२०७)

जहाँ तक सन्तमत का सम्बन्ध है, किसी भी प्रकार का मादक व नशीला पेय वर्जित है। ऐसी नशीली चीज़ों में सुलफ़ा, एल. एस.डी., गांजा, भांग, अफ़ीम और अन्य ऐसी पीनक या नशा लाने वाली और मतिभ्रम पैदा करने वाली चीज़ें आती है। इनमें चिकित्सा के लिये दी जाने वाली दवाइयां शामिल नहीं हैं, जिन्हें डाक्टर बीमारियों के लिये देते हैं।

सन्तमत तथा-कथित प्रेत-सम्पर्क विद्या, परलोक-विद्या, माध्यम (मीडीयम) और इसी तरह की बातों में पड़ने की आज्ञा नहीं देता, क्योंकि इनमें पड़ने वाले व्यक्ति को किसी प्रकार की सहायता नहीं मिलती बल्कि ये उसके मन और इच्छा-शक्ति को नुकसान पहुँचाते हैं। सब सत्संगियों को इन बातों से दूर रहना चाहिये। यहां तक कि उत्सुकतावश भी ऐसे स्थानों में जाने में कोई फ़ायदा नहीं है। ऐसी बैठकें हानिप्रद हैं और आपके किसी काम नहीं आ सकतीं।

'प्रत्येक व्यक्ति के पांच गुरु होते हैं' इससे आपका क्या अभिप्राय है, मैं नहीं समझ सका। मैंने इस तरह की कोई बात कभी नहीं सुनी। सन्तमत में हमारा अपना सतगुरु ही हमारा एक-मात्र गुरु और मार्ग दर्शक होता है।

(२०८)

आजकल धर्म का जो अर्थ लगाया जाता है, उस अर्थ में हमारा यह कोई धार्मिक समुदाय नहीं है। सन्तमत (सन्तों का मार्ग), जैसा इसे कहा जाता है, एक मात्र सच्चे परमात्मा के जिज्ञासुओं और भक्तों का एक 'समाज' या 'शाला' है, जिसके सदस्यों में संसार के प्रायः सभी धर्मों के अनुयायी शामिल हैं। हमारे सदस्यों में हिन्दू, सिक्ख, मुसलमान ईसाई, यहूदी, पारसी, जैन इत्यादि हैं। सन्त किसी विशेष धर्म के नहीं होते। परमात्मा की प्राप्ति के लिये सभी काल में, सभी देशों और सभी जाति के लोगों के लिये यह एक-मात्र और एक समान मार्ग है। यह मार्ग मनुष्य निर्मित नहीं, परमात्मा-निर्मित है और इसलिये यह समय और परिवर्तन के प्रभाव से परे है।

सन्त सब देशों में, सब युगों में आते रहे हैं। जिस देश में वे रहते हैं उसके रिवाज, जलवायु विशेष परिस्थितियों के अनुसार या जिस समय वे आते हैं, उस काल के अनुसार, उनके जीवन का ढंग भिन्न हो सकता है, किन्तु उनके उपदेश सदा एक-से होते हैं। वे न तो ...ी नये धर्म, सम्प्रदाय या समाज को बनाते हैं और न ही वे किसी धर्म-ग्रन्थ अथवा मत पर ज़ोर देते हैं। वे अपना उपदेश सरल बोलचाल की भाषा में देते हैं और अपने अनुयायियों को सलाह देते हैं कि जिस धर्म और समाज में वे पैदा हुए हैं, उसमें बने रहें। वे कहते हैं कि धर्म-परिवर्तन से परमात्मा नहीं मिलता।

सन्तमत की शिक्षा है कि आत्मा उस आनन्द और शक्ति (प्रभु) के सागर की एक बूंद है, जिससे वह आज से बहुत समय पहले अलग हुई थी। परमात्मा के इस वियोग के कारण मनुष्य जाति को अनेक यातनायें और तकलीफें भुगतनी पड़ती हैं। जब तक आत्मा वापस अपने निज-धाम पहुँच कर परमात्मा से नहीं मिलती, उसकी तकलीफें और यातनाएँ खतम नहीं हो सकतीं। परमात्मा के पास पहुँचने के लिये हमें कहीं बाहर उसकी तलाश नहीं करनी है। पवित्र बाइबिल में भी हमारे शरीर को 'जीवित प्रभु का मन्दिर' कहा गया है। नौ द्वारों के इस

मन्दिर में परमात्मा का वास है। कभी भी, किसी ने भी उसे बाहर प्राप्त नहीं किया है। सब सन्त-महात्मा इस बात पर ज़ोर देते हैं कि 'परमात्मा का राज्य तुम्हारे अन्दर है'। यह सच है कि परमात्मा सब जगह है, किन्तु जब तक उसे हमें अपने अन्तर में नहीं देख लेते तब तक उसे बाहर कहीं नहीं देख सकते। हमें सिर्फ किसी ऐसे व्यक्ति की आवश्यकता है जो इस मन्दिर में प्रवेश पाने के 'मार्ग' से परिचित हो, और हमें मालिक के उस धाम तक ले जा सके जहाँ हम मालिक से आमने-सामने मिल सकें और अन्त में उस आनन्द के सागर में लीन हो सकें। ऐसे सतगुरु अथवा परमात्मा के पुत्र संसार में सदा रहते हैं। संसार किसी जीवित 'क्राइस्ट' या मसीह के बिना कभी नहीं रहा है।

(२०९)

पहले तो मैं आपको यह बतलाना चाहूंगा कि अपने अन्तर के अनुभव औरों को बताना सत्संगी के लिये कभी हितकर नहीं होता। यह ऐसी दौलत है जिसे सत्संगी को अपने भीतर गुप्त रखना चाहिये और जिसे सतगुरु के अतिरिक्त और किसी को नहीं बताना चाहिये।

मैं यह भी बता दूं कि सुमिरन-भजन के दौरान सत्संगी को दिखने वाले अनुभव तथा दृश्य हमेशा सच्चे नहीं होते। शुरू शुरू में वे अधिकतर अपने मन का फैलाव ही हुआ करते हैं। सच्चे दृश्य और अनुभव सुमिरन के सामने टिके रहते हैं; परन्तु काल की ओर से प्रकट होनेवाले दृश्य और अनुभव सत्संगी द्वारा गुरु का ध्यान और सुमिरन शुरू करते ही एकदम गायब हो जाते हैं। सतगुरु का ज्योतिर्मय स्वरूप आप की सहायता के लिये सदा आपके अन्तर में रहता है।

(२१०)

सुमिरन के समय जो चेहरे आपको दिखायी देते हैं, उनका कोई आध्यात्मिक महत्व नहीं है। असंख्य जन्मों की अगिनत छाप मन पर पड़ी हैं और ये कभी-कभी सोते समय स्वप्न में अथवा भजन में उभर आती हैं। इन्हें हम अपने वर्तमान जीवन के साथ नहीं जोड़ सकते, क्योंकि ये पिछले जन्मों की ऐसी छाप है, जिन्हें हम अपने स

हैं। एक सत्संगी के लिये इनका कोई मूल्य अथवा महत्व नहीं है। पिछले जन्मों के मज़बूत और गहरे बन्धन कभी-कभी इस प्रकार के स्वरूप हमारे सन्मुख प्रस्तुत करते हैं। सत्संगी के लिये महत्व का कोई स्वरूप है तो वह एक मात्र सतगुरु का स्वरूप है, और उसको भी असली मानकर स्वीकार करने से पहले परख लेना चाहिये। स्वरूप की असलियत की परख सुमिरन है। कभी कभी काल सतगुरु के स्वरूप की नकल कर लेता है, किन्तु सुमिरन की कसौटी पर वह नहीं टिक सकता।

भजन-सुमिरन के दौरान जो स्वरूप या दृश्य आप देखें, उनके प्रति कोई लगाव न रखें। उन्हें आने और जाने दें, लेकिन पूरे समय आप अपनी एकाग्रता को तीसरे तिल पर जमाये रखें। यदि आप इन स्वरूपों में रुचि लेंगे या उनके पीछे अपने ध्यान को दौड़ायेंगे तो मन एकाग्रता के इस केन्द्र को छोड़ देगा। ये स्वरूप अथवा दृश्य कितने ही आकर्षक और सुन्दर क्यों न हों, आप तीसरे तिल से कभी न हटें। उनकी ओर ज़रा भी ध्यान न दें। इनके बारे में सोच-विचार करने और इन्हें देखते रहने में मन को बहुत सुख मिलेगा, किन्तु इस इच्छा पर रोक लगानी होगी और पूरे समय ध्यान को पांच पवित्र नामों में लगाये रखना होगा। लगन और भक्ति के साथ अपना भजन-सुमिरन रोज़ चालू रखें, परमात्मा आप पर अपनी दया बरसायेगा।

(२११)

शुरू-शुरू में पाँच पवित्र नामों का सुमिरन करना शब्द सुनने से ज्यादा ज़रूरी है। जब तक तीसरे तिल पर मन बिलकुल एकाग्र न हो जाये और शरीर सुन्न न हो जाये, तब तक अभ्यासी को केवल सुमिरन पर ही ज़ोर देना चाहिये। असल ध्वनि या शब्द वहाँ से चालू होता है, जहाँ आप सतगुरु के दिव्य स्वरूप से मिलते हैं। शरीर की समस्त चेतना को तीसरे तिल तक सिमटाने के लिये एक-मात्र उपाय सुमिरन है। एकाग्रता को तीसरे तिल पर टिकाये रखने

के लिये सतगुरु के स्वरूप के ध्यान की आवश्यकता होती है। इसके बाद शब्द प्रकट होता है।

भजन-सुमिरन के लिये निश्चित ढाई घण्टों में से दो घण्टे आप को नामों के सुमिरन में और आधा घण्टा शब्द को सुनने में लगाना चाहिये। सुमिरन के समय शब्द की ओर ध्यान नहीं देना चाहिये, क्योंकि इससे एकाग्रता भंग होगी।

(२१२)

डेरे आने के आपके विचार की मैं सराहना करता हूं, किन्तु अपनी वर्तमान स्थिति में आप इस यात्रा से कोई लाभ नहीं उठा सकेंगे। डेरे में केवल वे ही कुछ लाभ उठा सकते हैं, जो मार्ग के पहले से ही जानकार हैं और जिन्होंने कुछ भजन-सुमिरन किया है। तब वे यहाँ होने वाली चर्चाओं तथा सत्संगों को समझ सकेंगे और उनसे पूरा लाभ उठा सकेंगे। अन्यथा यह आपके लिये केवल एक सामाजिक सम्मेलन ही रहेगा।

इसलिये आपको मेरी सलाह है कि आप सन्तमत के साहित्य का भरपूर अध्ययन करें, सन्तों के सन्देश को पूरी तरह समझ लें और जब इस मार्ग को अपनाने का फैसला कर लें, तब नाम के लिये निवेदन करें। नामदान के समय दी जाने वाली हिदायतों के अनुसार कुछ आध्यात्मिक अभ्यास करने और परमात्मा के इस महान वरदान के मूल्य और महत्व को महसूस करने के बाद आप डेरे में आने के बारे में सोच सकते हैं। उस समय आप यहाँ ठहरने से आनन्द प्राप्त कर सकेंगे और ज़्यादा लाभ उठा सकेंगे।

(२१३)

यह अच्छा है कि आपने सन्तमत की पुस्तकों का अध्ययन शुरू कर दिया है। इससे आपको उपदेशों को पूरी तरह समझने में सहायता मिलेगी, जो कि मार्ग पर प्रगति के लिये आवश्यक है। एक बार जब मन और बुद्धि पूरी तरह सन्तुष्ट हो जायें कि यह मार्ग सही है, तब उस प्रेम, भक्ति और श्रद्धा का विकास होता है, जो हमें

आध्यात्मिक यात्रा पर आगे बढ़ाता है।

आप आँख के केन्द्र पर ख़याल जमा कर 'राधास्वामी' का जाप कर सकते हैं, किन्तु केवल पुस्तकों में दी गयी हिदायतों के आधार पर अन्तर में सुनाई पड़ने वाली किसी ध्वनि को ध्यान से सुनना उचित नहीं है। यथोचित ढंग से नामदान मिलने तक इस पर ध्यान नहीं देना चाहिये। किसी ऐसे आसन पर जो आपको सबसे ज़्यादा आराम देह प्रतीत हो, बैठने की कोशिश करें, जिसका बाद में भजन-सुमिरन करते समय उपयोग किया जा सके।

(२१४)

किसी के मन में यह भावना बिलकुल नहीं आनी चाहिये कि उसने एक प्रतिनिधि के द्वारा नामदान प्राप्त किया है। इसलिये स्वयं सतगुरु से नामदान लेने वाले व्यक्तियों को मिलने वाले लाभ की तुलना में वह कुछ नुकसान में रहेगा। इन दोनों में कोई भी अन्तर नहीं है। ज़बानी हिदायत देने के लिये प्रतिनिधि सतगुरु के ऐजेन्ट के रूप में काम करता है, किन्तु जिज्ञासु को हमेशा स्वयं सतगुरु ही नाम प्रदान करता है, चाहे यह काम वह स्वयं करे अथवा अपने प्रतिनिधि के द्वारा कराये।

(२१५)

आपको भोजन के प्रश्न पर इतनी बारीकी से छानबीन करने की आवश्यकता नहीं। अलग-अलग तरह से पकाये गये अथवा अलग-अलग अवसर पर खाये गये भोजन का शरीर पर अलग-अलग प्रभाव पड़ता है। ज़्यादा मसालेदार भोजन तथा बहुत ज़्यादा पके, बासी या अध-पके भोजन स्वास्थ्य के लिये हानिप्रद माने जाते हैं। कुछ चीज़ों को कच्चा (बिना पकाये) खाना लाभप्रद होता है जब कि कुछ अन्य को कच्चा खाना लाभप्रद नहीं होता। इस बारे में कोई निश्चित नियम नहीं बनाया जा सकता। हमें वह भोजन करना चाहिये जो शक्तिवर्धक हो, जो सरलता से हज़म हो सके, और जो उत्तेजक न हो। आपका शरीर जिसे सह सके और हज़म कर सके,

वैसा सादा भोजन ग्रहण करें, और ज़रूरत से ज्यादा खाने से बचें क्योंकि यह स्वास्थ्य के लिये भी हानिकारक होता है।

मन और उसकी इच्छाओं को वश में करना और तीसरे तिल पर उसे एकाग्र करना भजन-सुमिरन का मुख्य प्रयोजन है। इसके लिये श्रद्धा और भक्ति के साथ रोज़ नियमपूर्वक ढाई घण्टे अभ्यास करने की आवश्यकता है।

(२१६)

कृपया याद रखें कि यह दुनिया एक भट्टी है जिसकी ज्वाला मन को शुद्ध करती है और इस तरह आत्मा पर लगे मैल को भस्म कर डालती है। आत्मा अपने आप में तो शुद्ध है, मगर अपनी वर्तमान स्थिति में मन और उसकी वासनाओं के मैल का उस पर आवरण या गिलाफ़ चढ़ा हुआ है। हमारी भलाई के लिये और इस मैल को भस्म करने के लिये परमात्मा संकट और कष्ट भेजता है। हमें अपने सन्तापों और व्यथाओं के प्रति यही दृष्टिकोण अपनाना चाहिये, और यह ध्यान रखते हुए कि ये कष्ट हमारे पुराने जन्मों के कर्मों के कारण हैं, हमें परमात्मा से सांत्वना और शान्ति के लिये प्रार्थना करनी चाहिये। यद्यपि कष्ट झेलना कोई कभी भी पसन्द नहीं करता, किन्तु यह सोचकर कि उसकी दया से हमारे कर्मों का इतना विशाल बोझ इस तरह हलका हो रहा है, हमें प्रसन्नता और राहत का अनुभव करना चाहिये।

(२१७)

कृपया याद रखें कि हमारा मन ही हमारा एक-मात्र शत्रु है, और हमें गुमराह करने के लिये माया और भ्रम के कई तरह के जाल रचा करता है। हमें श्रद्धा और भक्ति के साथ भजन करके इस शक्ति से लड़ना है। चिन्ता न करें। सतगुरु एक बार जिस आत्मा की ज़िम्मेदारी ले लेते हैं, उसे वापस धुरधाम पहुंचा कर ही छोड़ते हैं। केवल समय का सवाल है। यह इस बात पर निर्भर करता है कि हम कितनी जल्दी अपने कर्मों के बोझ को उतार कर वापस निज-घर पहुँचने के लिये मुक्त हो सकते हैं।

(२१८)

अपने परिवार को प्रसन्न और सन्तुष्ट रखने के लिये आप गिरजा-घर जा सकते हैं और जब तक वहाँ रहें, सुमिरन करते रहें। इन बाहरी समारोहों और इसी तरह की औपचारिकताओं में शामिल होने के लिये सन्तमत आपको नहीं रोकता, बशर्ते कि अपने सतगुरु और सन्तमत के उसूलों पर आपका विश्वास दृढ़ बना रहे।

(२१९)

जानवरों के बालों (फ़र) से बने वस्त्र, जूतों, बटनों इत्यादि के बारे में आपने पूछा है। लेकिन ज़िन्दगी में इतनी ज़्यादा बाल की खाल निकालने से गुज़ारा नहीं हो सकता। अगर हम इस प्रकार सोचने लगें तो हमें नंगे पाँव चलना पड़ेगा। यदि आपने सन्तमत के साहित्य का अध्ययन किया होता, विशेषकर परमार्थी पत्र, भाग २ और सन्त संवाद, भाग १, तो आप यह जान पाते कि पहनने के कपड़ों के बारे में कोई प्रतिबन्ध नहीं है।

हमें जानवरों, पक्षियों, मछलियों या कीड़ों को अपनी इच्छाओं की पूर्ति के लिये, अथवा आनन्द और शिकार के लिये नहीं मारना चाहिये। कभी-कभी हमें खतरनाक और ज़हरीले प्राणियों को जब वे मानव-जीवन के लिये खतरा बन जाते हैं, मारना पड़ता है, किन्तु केवल मज़ा लेने और शिकार के लिये अथवा भोजन के लिये उन्हें मारना दूसरी बात है, और सन्तमत में ऐसी हत्या की कोई माफ़ी नहीं है। हमारे घरों, खेतों या उन स्थानों को जहाँ लोग एकत्रित होते हैं या ठहराये जाते हैं, सफ़ाई और स्वास्थ्य के लिये कीड़े-मकौड़े तथा अन्य जीवाणुओं से मुक्त रखना पड़ता है, क्योंकि उनकी उप-स्थिति मनुष्य-जीवन के लिए खतरनाक है।

प्रार्थना के विषय में आपके प्रश्न के बारे में यह कहना है कि सत्संगी के लिए प्रार्थना करने का सर्वश्रेष्ठ तरीका प्रेम और भक्ति के साथ नियमित समय पर सुमिरन और भजन करना और दिन भर जब भी मन खाली रहे सुमिरन करते रहना है। परमात्मा हमारे

अन्तर में है। हम क्या चाहते हैं, इसे वह पहले से ही जानता है। वह हमें ऐसी कोई वस्तु प्रदान करने वाला नहीं है जो हमारी भलाई के लिये न हो। इसके अतिरिक्त, हमारा प्रारब्ध पहले से नियत हो चुका है, और हमें वही मिलेगा जो हमारे भाग्य में है। इसलिये, सब से अच्छी प्रार्थना अपने सतगुरु में पूरी श्रद्धा रखना और उसकी मौज में अपने आपको पूरी तरह समर्पित कर देना है।

(२२०)

सत्संगी को नामदान के समय लिये गये पवित्र वादों को कभी भी नहीं तोड़ना चाहिये। परमात्मा को प्राप्त करने के लिये यदि कोई इतना छोटा-सा त्याग भी न कर सके, तो परमात्मा के प्रति प्यार और भक्ति की सारी बातें अर्थहीन है।

(२२१)

मैं सन्तमत के बारे में आपकी रुचि की सराहना करता हूँ जिन का, आपके अनुसार, आप पिछले दो वर्षों से अध्ययन कर रहे हैं। इस तथा-कथित अध्ययन का परिणाम एक अवैध शिशु के रूप में प्रकट हुआ, यह जानकर आश्चर्य हुआ। किसी भी सभ्य पुरुष अथवा महिला में अच्छा नैतिक चरित्र होना ज़रूरी है। यदि यही नहीं है, तो बाकी क्या रहा? सन्तमत को इस तरह लापरवाही के साथ नहीं लेना चाहिये। इसमें जीने के एक तरीके की आवश्यकता होती है, जिसके अनुसार जीवन को सदाचार, नेक चरित्र, संयम और अत्यन्त स्वच्छ नैतिक चरित्र के आधार पर ढालना पड़ता है।

इस हालत में कृपया नामदान की बात तक न सोचें, बल्कि सन्तमत के सिद्धान्तों का अध्ययन करने में तथा उनको समझने की कोशिश में अधिक समय दें, और यह देखें कि क्या आप एक सत्संगी शिष्य के लिये आवश्यक शुद्ध जीवन बिता सकेंगे? नामदान को ऐसी वस्तु नहीं समझनी चाहिये कि कौतूहलवश लेकर बाद में छोड़ दिया जाये। परमात्मा को प्राप्त करने के लिये कठोर परिश्रम, दृढ़ संकल्प और बड़े त्याग की आवश्यकता है। मनुष्य को इन्द्रिय-सुखों

मन को हटाकर उसे अन्तर में होने वाली धुनों के साथ जोड़ कर, एक प्रकार से जीते-जी मरना पड़ता है।

मुझे मालूम है कि यह इतना सरल नहीं है और धीरे-धीरे आयेगा किन्तु आपके दो वर्षों तक किये गये सन्तमत के 'अध्ययन' का परिणाम कुछ निराशाप्रद ही हुआ है। मैं यह सब आपको निरुत्साहित करने के लिये नहीं कह रहा हूँ। यदि हम सच्चे हृदय से पश्चात्ताप करें और अपनी भूल को फिर से न करने के लिये ईमानदारी से कोशिश करें, तो परमात्मा के राज्य में सबके लिये माफ़ी है। सन्त-मत के साहित्य के अध्ययन के लिये अधिक समय दें, सत्संग में जाया करें और नामदान के लिये जल्दी न करें। सब से पहिले आपको यह यक़ीन हो जाना चाहिये कि आप शाकाहारी भोजन और एक नेकी-पूर्ण, स्वच्छ जीवन बिताने के सन्तमत के ऊंचे सिद्धान्तों के अनुसार अपना जीवन ढाल सकेंगे।

(२२२)

विदेशियों के लिये अपनायी गयी रीति, जिसके अनुसार नामदान चाहने वाले के लिये दो समर्थकों और प्रतिनिधि की सिफ़ारिश चाहिये, केवल काम करने के तरीके की बात है। नाम देने के लिये सतगुरु को किसी सिफ़ारिश की आवश्यकता नहीं। अपनी सिफ़ारिशों में ईमान-दार और सच्चा होने के अतिरिक्त किसी प्रतिनिधि और आवेदक के समर्थकों का इस मामले में कोई उत्तरदायित्व नहीं होता। जिनके भाग्य में इस मार्ग में आना नियत होता है, सतगुरु उनका शुरू से ही मार्ग-दर्शन करते रहते हैं। धीरे-धीरे वे सन्तमत के प्रति आकर्षित होते जाते हैं और इस बात का उन्हें पता भी नहीं चलता। पूरे समय उनकी बागडोर सतगुरु के हाथों में रहती है, जो उन्हें धीरे-धीरे नाम-दान के समीप लाते रहते हैं।

(२२३)

नामदान के समय स्वयं आवेदकों के अतिरिक्त कम से कम सत्संगियों का मौजूद रहना अच्छा है। नाम लेने वाले व्यक्तियों के

लिये नामदान उनकी निजी सम्पत्ति होती है, और यद्यपि नामदान के समय सत्संगियों के सिवाय अन्य कोई उपस्थित नहीं रहते, फिर भी इसे सार्वजनिक मामला नहीं बनाना चाहिये। नाम प्राप्त करने वाले नये व्यक्तियों के अतिरिक्त उपस्थित रहने वालों की संख्या जितनी ही छोटी होगी, नये सत्संगियों के लिये उतना ही अच्छा होगा। इस से उस अवसर की पवित्रता बढ़ती है। नये आने वालों के जीवन में यह एक महत्वपूर्ण घटना है।

नामदान के अवसर पर दर्शकों की संख्या सीमित करने की मेरी हिदायत केवल एक के लिये ही नहीं, बल्कि मेरे सभी प्रतिनिधियों के लिये है। यदि कोई सत्संगी नामदान के सम्बन्ध में दी गयी टिप्पणियों को पढ़ने का अभिलाषी हो तो वह प्रतिनिधि से तय करके पढ़ सकता है। मुझे आशा है कि आप मेरे दृष्टिकोण को समझेंगे और पसन्द करेंगे। ये हिदायतें मार्ग में नये आने वालों के हित में हैं।

(२२४)

कृपया याद रखें कि यदि कोई सांसारिक और आर्थिक चिन्ताओं से मुक्त न हो तो भजन-सुमिरन भी सम्भव नहीं हो सकता। एक उचित जीविका के लिए हम सब को एक सम्मानप्रद व्यवसाय या काम की आवश्यकता होती है, और इसके लिए हमें अपने आपको छोटी उम्र से ही तैयार करना पड़ता है। स्थायी कार्य या धंधे के अभाव में चित्त को परेशानी और चिन्ता से वह मुक्ति नहीं मिलेगी जो भजन-सुमिरन के लिये बहुत ज़रूरी है।

यह सदा याद रखना चाहिये कि परमात्मा की प्राप्ति के लिये कोई छोटा या जल्दी पहुँचाने वाला मार्ग नहीं है, और आत्मा को परमात्मा तक वापस पहुँचाने के लिये भजन-सुमिरन से बचा नहीं जा सकता। जब भी आप उसके पास वापस जाना चाहेंगे, भजन करना ही पड़ेगा। इस अभ्यास के बिना कोई आत्मा इस दुनिया से छुटकारा नहीं पा सकती। आत्मा को अपने पास लाने के लिये यह परमात्मा का बनाया हुआ अपना मार्ग है। मालिक

दया का सहारा लेकर जिज्ञासु को ऐसा करना ही होगा। मालिक की दया तो सदा रहती है, किन्तु हम अपना हृदय उसे ग्रहण करने के लिये नहीं खोलते। अधिक भजन-सुमिरन न कर सकने के लिये बहाने बनाना या खेद प्रकट करना सरल है; किन्तु कमर कस कर हमें मन के साथ पूरी लड़ाई लड़नी है, इसके विना हम कोई प्रगति नहीं कर सकते।

(२२५)

सारा संसार कर्म के कानून में बंधा हुआ है। इस सृष्टि में कहीं भी, किसी के साथ भी, जो कुछ होता है, वह कर्म के अनुसार ही होता है। मन एक अत्यन्त प्रबल शक्ति है, और वे सब बातें जिन्हें लोग अतीन्द्रिय दृश्य कहते हैं मन की चालाकियां, कल्पनाएँ और चालें हैं।

जिसे आप कर्म का विधाता कहते हैं यह सारा संसार उसी के वश में है। केवल पूरे सतगुरु तथा सन्त, जो अकाल पुरुष प्रभु के प्रिय पुत्र होते हैं, इस बन्धन से परे हैं। सतगुरु सदा समर्थ हैं, और हर तरह के कर्मों को वश में कर सकते हैं, किन्तु परमपिता की इच्छा के अनुसार ही वे ऐसा करते हैं। वाकी सारी सृष्टि कर्मों के कानून के अधीन है।

(२२६)

सन्तमत में सामूहिक या इकट्ठे होकर भजन-सुमिरन को ठीक नहीं माना जाता। हमें अपने मन को पूरी तरह अडोल तथा तमाम विचारों और इच्छाओं से मुक्त करना है, ताकि समस्त चेतना को तीसरे तिल पर एकाग्र किया जा सके। सामूहिक अभ्यास में व्यक्ति अपने आसपास के लोगों के प्रति सदा सजग रहता है, और इसलिये भजन-सुमिरन में पूरी एकाग्रता नहीं होने पाती। भजन-सुमिरन के लिये पूर्ण शान्ति और स्थिरता बहुत ज़रूरी है, जो सामूहिक अभ्यास में प्राप्त नहीं हो सकती, क्योंकि वहां कुछ न कुछ हलचल और बाधा हमेशा रहती है।

यदि आप सन्तों की शिक्षा का अच्छी तरह् अध्ययन करेंगे, और उसे ठीक से समझेंगे, तो आपको पता लगेगा कि अपने ध्येय की प्राप्ति के लिये सामूहिक अभ्यास उचित नहीं है। हमारे मन में सदा नये-नये लुभाने वाले विचार उठते रहते हैं, क्योंकि मन की प्रवृत्ति और आदत ही ऐसी है, ताकि हम उसे स्थिर करके तीसरे तिल पर ठहरने के लिये विवश न कर सकें। मन के जाल में न फँसें, सदा अपनी रक्षा के लिये सावधान रहें। सन्तमत के उपदेश बहुत सरल हैं और मुख्य बात तो मार्ग पर ठीक उसी तरह चलना है जैसा कि नामदान के समय आपको बताया गया है।

(२२७)

मुझे आपका पत्र मिला जिसमें आपने अपनी रुचि की किसी सम्पत्ति के बारे लिखा है। इस दिशा में आपके प्रयासों की मैं प्रशंसा करता हूँ, किन्तु मैं सत्संग को किसी भी तरह के व्यापार, व्यवसाय या सम्पत्ति के लेन-देन में नहीं उलझाना चाहता। ऐसी बातें बाद में बेकार की परेशानियां या जटिलतायें पैदा कर देती हैं, और मन को सांसारिक बातों की ओर मोड़ती हैं जिसमें काफ़ी समय बर्बाद होता है।

हमारा ध्येय मन को भजन-सुमिरन में लगाना है और इस ध्येय को हमें हमेशा अपने सामने रखना है। पहले ही ऐसी अनेक बातें है, जिनमें हम उलझे हुए हैं और हमें सत्संग को, जहां तक हो सके, ऐसी बातों से दूर रखना चाहिये।

कृपया अपना समय भजन-सुमिरन में नियमपूर्वक लगायें, यही सबसे जरूरी बात है। सत्संग के लिये कोई सम्पत्ति लेना न तो उचित है, न इसकी कोई आवश्यकता है।

(२२८)

कृपया याद रखें कि सच्चा विश्वास भजन-सुमिरन से आता है। प्रेम और भक्ति के साथ जितना अधिक भजन करेंगे उतना ही अधिक विश्वास आपको मिलेगा। मन सदैव तरह-तरह की शंक[illegible] और

प्रश्न उठाता रहता है। इस पर अंकुश और नियंत्रण रखना होगा। असल में सारी मेहनत मन को वश में करके उसे स्थिर करने के लिये की जाती है।

(२२९)

जीवन में उतार-चढ़ाव हमेशा आते ही रहते हैं। कोई भी वस्तु या अवस्था कभी एक-सी नहीं रहती। परमात्मा में पूरा विश्वास रखते हुए हमें धैर्य और साहस के साथ परीक्षा की इन घड़ियों का सामना करना चाहिये। हमारा प्रारब्ध हमारे पिछले कर्मों के आधार पर पहले से निश्चित है, और हर हालत में हमें इसे भुगतना है। हमारा कर्त्तव्य है कि अपनी कठिनाइयों पर विजय पाने और अपनी समस्याओं को हल करने की कोशिश करें। इस संसार में बरतने के लिये जो समझदारी और विवेक परमात्मा ने दिया है, उसका हमें उपयोग करना चाहिये। हमारा काम तो कोशिश करना है, परन्तु उसका फल हमारे हाथ में नहीं है। कभी-कभी जब हमारी कोशिश सफल नहीं होती, तो हमें अपनी कठिनाइयों के साथ जीने की कला सीखनी पड़ती है। यह हमारे लिये कसौटी की घड़ी है, और हमें अपना मानसिक संतुलन नहीं खोना चाहिये; किन्तु यह कहना चाहिये और पक्का विश्वास रखना चाहिये कि 'परमात्मा की यही मौज है' और हमें इसे पूरी दीनता के साथ स्वीकार करना चाहिये'। कौन जानता है कि परिस्थितियां इससे भी कहीं खराब हो सकती थीं ? इसलिये प्रभु के प्रति हमारी कृतज्ञता की भावनाओं में कभी कमी नहीं आनी चाहिये। हमारे लिये सबसे अच्छा और उचित क्या है, इसे केवल वही जानता है, और हमें चाहिये कि हम उसकी मौज में रहें।

(२३०)

आपके पत्र में लिखा समाचार वास्तव में दुखपूर्ण है। इससे पहले आपने सन्तमत के उपदेशों में रुचि दिखाई थी। अब परमात्मा की प्राप्ति के इस मार्ग के लिये अपने आप को तैयार करने के बदले

आपने मांस, मादक पेय, नशीली दवायें आदि लेना शुरू कर दिया। यह सन्तमत के शिष्य बनने के लिये कोई तैयारी नहीं है। यदि इस मार्ग में आने से पहले ही आप न लेने योग्य अथवा वर्जित वस्तुओं के खाने-पीने के मामले में अपने मन को वश में नही करते हैं बल्कि साथ ही आपने नशीले पदार्थों की भी आदत डाल ली है तो आप प्रभु की दया-मेहर कैसे प्राप्त कर सकेंगे, और आगे आने वाले सैकड़ों सन्देहों और आकर्षणों के आक्रमणों का कैसे सामना कर सकेंगे? यदि परमात्मा को प्राप्त करने में आपकी सच्ची रुचि है, तो सन्तमत के अनुसार जीवन व्यतीत करने के लिये आपको कमर कस कर, संकल्प के साथ, ईमानदारी-पूर्वक कोशिश करनी पड़ेगी। ऐसा करना तो दूर रहा आपने तो ऐसी कोई भी चीज नहीं छोड़ी है, जिसे सन्तमत के अनुसार बहुत बड़ा पाप समझा जाता है।

सन्तमत के अनुसार जीवन कैसे बिताया जाता है, इसे समझने की कोशिश करने के लिये आपको यहां आने की कोई जरूरत नहीं। आपके जीवन के क्रम को बदलने के लिये यहां कोई जादुई शक्तियां नहीं हैं। अपने खुद के वातावरण में ही अपनी दृढ इच्छा-शक्ति और संकल्प के द्वारा आपको खुद ही अपने आपको बदलना होगा। आप को स्थान नहीं, अपने मन को बदलना होगा। सन्तमत की पुस्तकों का अध्ययन करें और यह समझने की कोशिश करें कि सन्तमत वास्तव में क्या है, और एक शिष्य को क्या करना चाहिये। यदि सन्तो की शिक्षा में आपको वास्तविक रुचि है तो उसके ऊँचे उद्देश्यों के अनुसार अपना जीवन बिताने की कोशिश करें। कोई दूसरा व्यक्ति इसमें आपकी मदद नहीं कर सकता। यदि आप अपनी मुक्ति के लिये कुछ करने को इच्छुक हैं, तो आपको अपने जीवन का तरीका खुद ही बदलना होगा।

आपक जीने का ढंग, सांसारिक और भौतिक दृष्टि से भी कोई अच्छा भविष्य नही दिखाता। आपको एक भला और स्वच्छ जीवन बिताने की कोशिश करनी ही चाहिये, तथा समस्त प्रलो

अनुचित वस्तुओं से दूर रहने की कोशिश करनी चाहिये। किसी प्रकार से हताश और निराश होने की ज़रूरत नहीं। जहां चाह है, वहां राह है। यदि आप ऐसा करने का दृढ़ निश्चय कर लेंगे, तो अवश्य कर सकेंगे।

(२३१)

आपको यह समझ लेना चाहिये कि आपके वर्तमान दुःखों का कारण मोह ही है। जीवन के सारे दुःखों का कारण है दुनियां के लोगों और पदार्थों के प्रति हमारा मोह। जहाँ मोह नहीं है, वहां दुःख भी नहीं है। यह मोह किसी व्यक्ति, स्थान, वस्तु या किसी अपूर्ण इच्छा के प्रति हो सकता है। इन व्यक्तियों या वस्तुओं के प्रति हमारा मोह जितना अधिक होगा, अन्त में दुःख भी उतने ही अधिक होंगे। इसीलिये सन्तों का उपदेश है कि इस संसार के लोगों और पदार्थों के साथ कम से कम लगाव रखें और अन्तर में गूंजने वाली परमात्मा की धुन के साथ जुड़ें। इस मधुर दिव्य संगीत के साथ जितना अधिक लगाव होगा उतना ही अधिक हम उन सब से अलग हो सकेंगे जो हमें यहां रोकते और बाँधकर रखते हैं।

इसका यह अर्थ नहीं कि हमें पारिवारिक जीवन को छोड़ कर एकान्तवासी बन जाना चाहिये। हमें दुनिया में रहना है, पर फिर भी दुनिया का नहीं होना है। हमें यह हमेशा याद रखना है कि जीवन के रंग-मंच पर हम सब केवल एक्टर हैं जो प्रभु द्वारा सौंपी गयी भूमिका अदा कर रहे हैं। हमें चाहिये कि जो पार्ट हमें दिया गया है उसे स्वीकार करें, अपनी पूरी योग्यता के साथ उसे खेलें और जब वह समाप्त हो जाये, तो उसे भूल जायें। अभिनेता सुख या दुःख महसूस नहीं करता, क्योंकि वह जानता है कि यह एक अभिनय मात्र है। हमारा असली जीवन इस जीवन के बाद आयेगा। यहाँ सब कुछ छलावा है, असत्य है क्योंकि यह हमेशा रहने वाला नहीं है।

आपने मनुष्य के प्रेम को तो देख ही लिया है। अब मालिक के प्रेम का अनुभव करें और देखें कि वह आपके साथ कैसा व्यवहार

करता है। इस पुरुष के साथ आपका जितना प्यार है, यदि उसका आधा प्यार भी आपने परमात्मा के साथ किया होता तो आप को कितना आनन्द मिला होता।

भावनाओं के आगे इतना अधिक न झुकें। उन्हें वश में रखें। अपनी शान्ति और समता फिर से प्राप्त करें और एक सामान्य जीवन बिताने की कोशिश करें। याद रखें कि हम सबका अपना-अपना भाग्य है, जिसे हम अपने साथ लाये हैं, और इसे कोई बदल नहीं सकता। हमने जो बोया था, उसे ही काट रहे हैं, और हम कितना ही रोयें इससे और अधिक दुःखी होने के अलावा कोई फ़रक पड़ने वाला नहीं है। परमात्मा की मौज में रहना सीखें। हमारा वर्तमान जन्म हमारे पिछले जन्मों के हमारे अपने कर्मों के फलस्वरूप है, और इसके लिये हम किसी दूसरे को दोष नहीं दे सकते। यदि हम अपने आपको उस की मौज में छोड़ दें, तो वह भी हमारी रक्षा करने आता है और हमें अपने मन के विरुद्ध युद्ध करने के लिये और धीरज के साथ ज़िंदगी का सामना करने के लिये शक्ति और साहस प्रदान करता है।

इस गहरे प्रेम को परमात्मा की ओर मोड़ दें। भजन-सुमिरन करती रहें, और इस प्रकार परमात्मा के लिये प्रेम और भक्ति पैदा करें और देखें कि वह किस प्रकार आप पर बख्शिश करता है। इस जीवन का और यहाँ जो कुछ हम देखते हैं उसका कोई मूल्य नहीं है। यह सब सपना है—एक बुरा सपना। असली जीवन तो उस पार हमारी राह देख रहा है। हमें यहाँ के अपने जीवन को उस जीवन के लिये कुछ तैयारी करने के उपयोग में लाना चाहिये ताकि, कम से कम, वहाँ हम सुख और आनन्द पा सकें। भजन और सुमिरन आपको वह मानसिक शान्ति, वह स्थिरता और समता प्रदान करेगा, जिसकी आपको इस समय बहुत जरूरत है। हमारे सामने जीवन में जब कोई समस्या उठ खड़ी हो, तो उसे सुलझाने के लिये हमें अपनी पूरी कोशिश करनी चाहिये और परिणाम को भाग्य पर छोड़ देना चाहिये। भाग्य कुछ मिले, उसे प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार करना चाहिये।

आपकी वर्तमान मानसिक स्थिति में आपको सहायता पहुँचाने के लिये मैंने इतने विस्तार से लिखा है। यदि आप मेरी सलाह मानेंगी तो आपको बहुत शान्ति मिलेगी।

(२३२)

सन्तमत में भय के लिये कोई स्थान नहीं है। हम परमात्मा की याद, उसके नाम का अभ्यास और उसकी भक्ति भय के कारण नहीं, बल्कि प्रेम के कारण करते हैं। प्रेम और भक्ति का शब्दों में वर्णन नहीं किया जा सकता और न ये किसी मशीन से विकसित किये जा सकते हैं। ये नामदान के समय बताई गई विधि से भजन करके पैदा किये जा सकते हैं और इनका अनुभव अन्तर में होता है।

(२३३)

आप अपने देश की राजनैतिक हलचलों के कारण बहुत परेशान नज़र आते हैं। मैं आपसे कहना चाहूँगा कि संसार कभी भी स्वर्ग नहीं बना है और न कभी बनेगा ही। इस संसार की घटनाओं को हम अपनी सीमित दृष्टि से देखते हैं, इसलिये हमें लगता है कि संसार में बहुत अन्याय हो रहा है। लेकिन सच तो यह है कि हर जीव अपने पिछले जन्मों के या इसी जन्म के अपने खुद के कर्मों का पुरस्कार या दण्ड प्राप्त करते हुए सुख-दुःख भोग रहा है। स्रष्टा बिना कारण के किसी को न तो पुरस्कार देता है और न दण्ड। 'जैसा बोओगे, वैसा काटोगे'—यह इस संसार का एक ऐसा नियम है जिसमें कोई फेर-बदल नहीं हो सकता। इसलिये कोई इसे बदल नहीं सकता। इस विधान को देखते हुए किसको दोषी ठहराया जाये ?

इसके अलावा यह संसार रहने लायक सुख का स्थान कब रहा है ? संसार का पिछला इतिहास पढ़ें तो आप पायेंगे कि यहाँ मार-काट और ख़ून-ख़राबा सदा से चला आ रहा है, यहाँ तक कि जिसे हम शान्ति-काल कहते हैं उसमें भी हमें मानसिक तथा शारीरिक बीमारियों, निर्दयता, हत्या तथा अन्य अपराधों के रूप में कितने दुःखी दिखाई देते हैं। केवल इसी लिये सन्त हमें इस 'भय के समुद्र'

को हमेशा के लिये त्यागने और जन्म-मरण के चक्कर से मुक्त होने की सलाह देते हैं। अनन्त आनन्द के अपने धाम में वापस जाने के लिये वे हमें केवल चाबी ही नहीं देते, बल्कि वे उस सुख के धाम तक पहुँचने में हमारी सहायता और मार्ग-दर्शन भी करते हैं, जहाँ से इस दुनिया में हमें वापस आने की जरूरत नहीं।

हर बात उसी तरह हो रही है, जिस तरह कि परमात्मा चाहता है। उसकी आज्ञा के बिना एक पत्ता भी नहीं हिल सकता। कुदरत की धारा या चाल को कोई रोक नहीं सकता। फिर, कुछ थोड़े से लोग, चाहे उनके उद्देश्य कितने ही भले क्यों न हों, पूरे वेग से बहने वाली इस धारा को कैसे पलट सकते हैं ? अच्छा तो यह होगा कि इन बातों को इसी तरह छोड़ दें, और इन्हें अपने कुदरती ढंग से चलने दें। सन्त सांसारिक मामलों में कभी दख़ल नहीं देते। ये सब बातें प्रभु की योजना के अनुसार होती रहती हैं। सन्त तो हमें यही समझाते हैं कि हम सामान्य जीवन बिताते हुए और अपने सारे सांसारिक कर्तव्यों को निभाते हुए, इन सब से ऊपर उठें और भजन-सुमिरन के द्वारा सांसारिक परेशानियों से छुटकारा पा लें।

प्रेम और भक्ति के साथ अपना भजन-सुमिरन करते रहें, और इस संसार की घटनाओं के बारे में सोच-सोच कर अपने मन को उन में न उलझने दें। इससे कोई लाभ नहीं होगा। चाहे आपके उद्देश्य कितने ही भले क्यों न हों, यदि आप इनमें उलझेंगे तो इस से और तो कुछ न होगा, केवल आपकी आध्यात्मिक प्रगति में बाधा पड़ेगी।

(२३४)

जीव-विज्ञान के अपने अध्ययन के दौरान जीव-हत्या करने सम्बन्धित आपकी समस्या को मैं पूरी तरह समझता हूँ। कृपया याद रखें कि इस संसार में हम प्रति क्षण जीव-हत्या कर रहे हैं। सांस लेते समय भी हम लाखों जीवाणुओं के प्राण लेते हैं। यही काम हम चलते समय करते हैं और अनजाने ही छोटे प्राणियों को पैरों तले कुचल देते हैं। जब हम पानी पीते हैं, तब भी अनजाने में अनेक

सूक्ष्म जीवों की जान ले लेते हैं जो पानी में रहते हैं और दिखायी नहीं देते। सारा वातावरण करोड़ों आत्माओं से भरा पड़ा है और जीव-हत्या किये वगैर हम जी ही नहीं सकते।

किन्तु इस तरह की गई हत्याओं में, जो कि स्वाभाविक तौर पर अनजाने में हो जाती हैं, और उन हत्याओं में, जो केवल शिकार, मनो-रंजन अथवा अपने भोजन के लिये जानवरों, चिड़ियों, मछलियों आदि को मारने में की जाती है, अन्तर है। मनुष्य के हित में किये जाने वाले अपने अन्वेषण या खोज के दौरान में जो जीव मारे जाते हैं वे आनन्द अथवा भोजन के लिये नहीं मारे जाते। सारा अन्तर यही है।

जैसा मैंने अभी ऊपर बताया है, जीव-हत्या तो हम हर समय कर रहे हैं। सन्तों का उपदेश है कि हमें ऐसी वस्तुओं के आधार पर जीना चाहिये जिनसे कर्मों का बोझ हलके से हलका हो, और इस प्रकार हम जन्म-मरण के इस संसार से अपने आप को मुक्त कर सकें। बोझ जितना ज़्यादा होता है, उससे छुटकारा पाने में उतना ही अधिक समय लगता है। इसलिये यदि हम कर्मों के बोझ को अधिक बढ़ाते रहेंगे तो निश्चय ही उनसे छुटकारा नहीं पा सकेंगे।

इस दृष्टि से जीव-विज्ञान के अध्ययन को आप जारी रख सकते हैं, किन्तु अपने हृदय में उदारता, दया, कोमलता और सहानुभूति के झरने को सूखने न दें। इसमें सन्देह नहीं कि तमाम हत्यायें पाप हैं। फिर भी, हमारे दृष्टिकोण और हत्या की जाने वाले प्राणी की श्रेणी के कारण सारा अन्तर पड़ता है। अपने भोजन के लिये हत्या करना उचित नहीं है, क्योंकि परमात्मा ने हमें ऐसे पोषक भोजन प्रदान किये हैं, जिनसे मांसाहारी भोजन की तुलना में कर्मों का बोझ बहुत हल्का रहता है। मांसाहारी भोजन के विषैले परिणाम भी होते हैं, जो शुद्ध शाकाहारी भोजन और फलाहार में नहीं होते। शिकार और मनो-रंजन के लिये जान लेना भी उचित नहीं है।

(२३५)

दूसरों के कल्याण के बारे में चिन्तित न हों। उनकी चिन्ता

परमात्मा पर छोड़ दें। जैसा परमात्मा ठीक समझेगा, करेगा। आपका मुख्य ध्येय अपनी खुद की आध्यात्मिक प्रगति के लिये कठिन परिश्रम होना चाहिये। जब हमें खुद मदद की जरूरत है, तब हम दूसरों की सहायता कैसे कर सकेंगे ? जिसे खुद तैरना न आता हो, वह पानी में कूद कर डूबते हुए आदमी को कैसे बचा सकता है ?

(२३६)

यह बड़े अफ़सोस की बात है कि आप सन्तमत के नियमों को इतनी आसानी से और इतनी जल्दी भूल गये कि बीयर पीने की एक मामूली इच्छा के शिकार हो गये, जिसकी वजह से आपको हवालात में रहना पड़ा। एक भले आदमी के लिये और खासकर सत्संगी के लिये, ऐसी हरकत शर्मनाक है। यदि आप ऐसे साधारण से प्रलोभन का सामना न कर सके तो जीवन में इससे बड़े और जबरदस्त प्रलोभनों के आने पर आप क्या करेंगे ? आपको अधिक दृढ़ता और इच्छा-शक्ति से काम लेना चाहिये था।

प्रश्न मेरे क्षमा करने का नहीं है। आपका भजन-सुमिरन, आपका पश्चात्ताप और भविष्य में ऐसा न करने का दृढ़ निश्चय ही आपको प्रभु से क्षमा दिला सकेगा। यदि हम अपने पापों के लिये सच्चे मन से पश्चात्ताप करें, और उन पापों को फिर से न करने का ईमानदारी के साथ प्रयत्न करें और पहले से ज्यादा भक्ति और दीनता के साथ भजन-सुमिरन करें तो परमात्मा करुणा करके हम पर दया की वर्षा करेगा। मार्ग से भटक कर आप अपनी ही प्रगति में देरी पैदा करते हैं, और अपने हितों को खुद नुकसान पहुँचाते हैं। कृपया सावधानी रखें कि भविष्य में ऐसी बात न होने पाये। अपना भजन-सुमिरन रोज, नियमपूर्वक प्रेम और भक्ति के साथ करते रहें।

(२३७)

सन्तमत में आपकी रुचि की मैं कद्र करता हूँ, लेकिन यह उचित नहीं कि जो कोई इस विज्ञान में रुचि नहीं लेता, उस पर क्रोध आये। हमें अपना विश्वास और राय दूसरों पर थोपने

अधिकार है ? हर किसी को अपनी रुचि के अनुसार श्रद्धा, भावना या विश्वास रखने का अधिकार है। आपके क्रोध में अहं और गर्व की गंध आती है। इसके विपरीत, सन्तमत के उपदेशों से तो हममें नम्रता आनी चाहिये।

जहां तक काम-वासना का सवाल है, कृपया याद रखें कि आत्मा को सबसे नीचे स्तर पर खींच लाने के लिये काल के 'शस्त्रागार में यह सबसे शक्तिशाली हथियार है। नाम और काम (शब्द अथवा दिव्य धुन और काम) एक स्थान पर नहीं रह सकते। जहां नाम हमें ऊपर उठाता है, निर्मल करता है और हमारे पापों को धोता है, वहीं काम हमें पशुओं की निम्नतर सतह पर ले आता है और हमारे कर्मों के बोझ को और भी बढ़ाता है। प्रकाश और अंधकार एक साथ नहीं रह सकते। नेक और पवित्र बातों का चिन्तन करके, मन को वासना-पूर्ण विचारों के नुकसानदेह परिणाम जताकर, दृढ़ इच्छा-शक्ति द्वारा अपने को मज़बूत बना कर, काम-वासना को निकाल फेंकें।

(२३८)

काम और वासनाएँ आध्यात्मिक प्रगति के अत्यन्त शक्तिशाली शत्रु हैं। सन्तमत काम की सहज प्राकृतिक प्रवृत्ति की निन्दा नहीं करता, किन्तु विवाहित जीवन के दायरे में रहते हुए उचित सीमा में इसके उपयोग की राय देता है। काम की नैसर्गिक प्रवृत्ति हमें केवल इन्द्रिय-सुखों में लिप्त रहने के लिये नहीं दी गई है। इसका प्रयोजन केवल वंश-वृद्धि करना है। इस सहज प्रवृत्ति का बेलगाम उपयोग शारीरिक एवं आध्यात्मिक विकास के लिये अत्यन्त हानिकारक है।

अपने विचार स्वच्छ रखें, भली संगति में रहें, अच्छी पुस्तकें पढ़ें, परमात्मा को सदा याद रखें और उससे दया-मेहर के लिये प्रार्थना करें। अपने मन से साफ़-साफ़ और दृढ़तापूर्वक कह दें कि आप उसे ऐसी नीच भावनाओं और वासनाओं में नहीं फंसने देंगे। ये कुछ ऐसे उपाय हैं जिन्हें मैं एक स्वच्छ जीवन के लिये सुझा सकता हूं। मन की वृत्ति को मोड़ कर एक नेक रुख अपनायें। आप अपनी इच्छा के अनुसार

जैसी चाहें अच्छी-बुरी आदतें डाल सकते हैं। मन हमेशा भोगों की ओर जाना चाहता है, किन्तु थोड़े से संकल्प और प्रयास के द्वारा हम इसके रुख को दूसरी ओर मोड़ सकते हैं।

(२३९)

पालतू पशुओं को मांस तथा मांस से बनी चीजें खिलाना उचित नहीं है। इसे जहां तक हो टालना चाहिये। यदि आप ऐसा कर सकें तो अच्छा और उत्तम होगा।

कैपसूलों में डली दवाओं को ग्रहण करने में कोई हानि नहीं है। जीवन में हमें इतना बाल की खाल निकालने वाला नहीं होना चाहिये, कहीं न कहीं कोई सीमा तो बांधनी ही होगी। खाने-पीने की वर्जित वस्तुओं को लेना और दूसरों को देना एक गलत बात है।

(२४०)

कृपया याद रखें कि किसी आत्मा को सन्तमत के मार्ग में लाना केवल परमात्मा के ही हाथ में है। उसकी दया के बिना कोई उसके समीप नहीं आ सकता। हम अपने मित्रों तथा प्रियजनों को मार्ग में लाने के लिये चाहे कितने ही उत्सुक हों, हमें उसकी मौज को ही मंजूर करना होगा। चिन्ता न करें, बल्कि यह सब उसके हाथों में सौंप दें। सबसे अच्छा जानकार वही है। हमारी दृष्टि सीमित है। यदि सन्तमत के प्रति किसी की सच्ची रुचि है तो ऐसे जिज्ञासुओं को हमें हर प्रकार की मदद देनी चाहिये, लेकिन जिनकी इसमें रुचि नहीं उन पर कुछ भी थोपना नहीं चाहिये।

(२४१)

छोटे-छोटे मतभेदों को लेकर पारिवारिक शान्ति या मेल-जोल को बिगाड़ना अच्छा नहीं है। विवाह को सफल बनाने के लिये पति और पत्नी दोनों वचन-बद्ध हैं और वे थोड़ी होशियारी, सहयोग और स्नेह के द्वारा ऐसा कर सकते हैं। मतभेद पैदा होने पर अच्छा तो यह होगा कि किसी उपयुक्त समय पर दोनों एक साथ बैठकर सारी बातों पर शान्तिपूर्वक दिल खोलकर स्पष्ट चर्चा कर लें और

सन्तोषपूर्ण हल निकाल लें। पारिवारिक बन्धन इतने महत्वहीन नहीं माने जाने चाहियें कि छोटी-छोटी बातों पर एक-दूसरे से नफ़रत करने लगें। कोई दो व्यक्ति एक समान नहीं सोचते, किन्तु इसका अर्थ यह नहीं कि वे जीवन में एक साथ रह न सकें। विवाह एक महत्वपूर्ण सम्बन्ध है। विवाह अपने आप स्वयं सफल नहीं हुआ करता, बल्कि पति और पत्नी दोनों को इसे सफल बनाना पड़ता है।

जल्दी में तलाक की बात न सोचें। जब समझौते की कोई दूसरी सम्भावना न रहे तब, आवश्यक होने पर ही, यह आखिरी कदम उठाना चाहिये। जीवन में प्रेम और मेल-जोल पर मैं अधिक ज़ोर देता हूँ, और आपको भी मेरी सलाह है कि एक-दूसरे के विचारों को समझने की कोशिश करें और समस्याओं का सन्तोषजनक समाधान निकाल लें।

(२४२)

कभी-कभी भावनाओं में आकर हम कुछ ऐसी बातें कर बैठते हैं जिनके लिये बाद में पछताना पड़ता है। आपके लिये सबसे अच्छा यही होगा कि आप कोई दूसरा काम ढूंढ लें। आख़िर गुज़ारे के लिये कुछ न कुछ करना ही पड़ता है। सन्तों ने जुआ खेलने की इजाज़त नहीं दी है। दूसरों की पूंजी हड़पने के इस प्रयास से लोभ बढ़ता है, और हमारे कर्मों के बोझ में वृद्धि होती है। जिसके भाग्य में जितना बदा है वह उससे एक पाई भी ज़्यादा या कम नहीं पा सकता। जुआ जैसे ख़तरनाक और अनिश्चित तरीके से कब किसने अपनी समस्यायें हल की हैं? इन्सान के पास जो कुछ है, जुए में वह उसे भी खो सकता है। जुए से अनेक जीवन बर्बाद हुए हैं। ऐसे धन से सुख नहीं मिलता। कड़ी मेहनत से कमाये गये धन से शान्ति, सफलता और सन्तोष की भावना आती है।

मेरी सलाह है कि आप ईमानदारी का कोई स्थायी व्यवसाय ढूंढें और उस पर कायम रहें। कभी-कभी अनेक असुविधाओं के साथ साथ अन्याय और भेदभावपूर्ण व्यवहार को सहन करते हुए भी हमें

अपने अफ़सरों के हुक्म के अनुसार कार्य करना पड़ता है। जीवन ऐसा ही है और हमें इसे स्वीकार करना चाहिये। याद रखें, आपका प्रारब्ध पहले से ही तय हो चुका है और आप उसे बदल नहीं सकते। ईमानदारीपूर्वक जो कुछ अच्छे से अच्छा आप कर सकते हैं करें, और प्रभु से मार्ग-दर्शन और दया के लिये प्रार्थना करें। हिम्मत न हारें। प्रभु सर्व-शक्तिमान हैं।

(२४३)

अपने पति के बारे में कृपया यह याद रखें कि प्रत्येक व्यक्ति का स्वभाव उसके कर्मों के अनुसार होता है। नियति बदली नहीं जा सकती। पति और पत्नी का सम्बन्ध प्रेम का सम्बन्ध होता है। प्रेम त्याग तथा समर्पण चाहता है। अपने पति को अपना पूरा प्रेम दें और उन पर प्रेम की वर्षा कर उनके स्नेह के क्षणों का लाभ उठायें। प्रेम कभी-कभी चमत्कार कर देता है। कभी-कभी अनुभव से बड़ी शिक्षा मिलती है। अनुभव लोगों के जीवन में परिवर्तन लाने वाला एक बहुत अच्छा, पर कठोर, शिक्षक है।

उतार-चढ़ाव तो सबके जीवन में आते हैं। इनका सामना हमेशा साहस के साथ करना चाहिये। हमें अपने पिछले कर्मों के फलस्वरूप निश्चित किये गये प्रारब्ध के अनुसार जिन्दगी बसर करनी पड़ती है।

स्पष्ट रूप से विचार न करने की वजह से झगड़ा होता है। झगड़ा तभी होता है जब हम चाहते हैं कि सब बातें हमारे विचार या राय के अनुसार ही हों और जब हम अपने जीवन-साथी के दृष्टिकोण पर ठीक तरह से विचार नहीं करते।

आप अपने पुत्र को खुशी से गिरजाघर ले जा सकती हैं। इसमें कोई हानि नहीं है। यह अच्छा है। इससे उसमें धार्मिक वृत्ति उत्पन्न होगी। बड़े होने पर वह अपने मार्ग का स्वयं चुनाव कर सकेगा।

(२४४)

आप को मनोविज्ञान में दिलचस्पी है, और आप इसका करना चाहते हैं, यह अच्छी बात है। मनोविज्ञान का सम्बन्ध ॰

है, और इसका रूहानी बातों से कोई विशेष वास्ता नहीं है। इससे आपको मन और भौतिक लोकों में उसकी कार्य-प्रणाली के बारे में बहुत कुछ जानकारी अवश्य प्राप्त हो सकेगी।

सन्तमत अपने अनुयाइयों को हिप्नोसिस या सम्मोहन-विद्या जैसी बातों में लिप्त होने की अनुमति नहीं देता। हिप्नोसिस में हम अपनी ज़्यादा सबल इच्छा-शक्ति द्वारा दूसरे व्यक्ति को अपने वश में करके उसके मन को दुर्बल बना देते हैं। अन्त में इसका परिणाम यह होता है कि उस व्यक्ति का मन व उसकी बुद्धि दुर्बल हो जाती है, और उसका आत्म-विश्वास भी बहुत घट जाता है। इस विद्या का अभ्यास करने वाले व्यक्ति की मानसिक व आत्मिक शक्ति भी कम हो जाती है। सन्तमत सम्मोहन-विद्या को उचित नहीं मानता।

(२४५)

पश्चिम में लोग मांसाहारी भोजन के इतने आदी हो चुके हैं कि वे शाकाहारी भोजन को पूरी खुराक नहीं मानते। यह बात सच नहीं है। स्वस्थ जीवन के लिये सभी आवश्यक पदार्थ शाकाहारी भोजन में मौजूद होते हैं। यह भोजन भी इतना ही पौष्टिक है, जितना कि मांसाहारी भोजन। इसके अलावा मांसाहारी भोजन का असर ज़हरीला होता है, जबकि शाकाहारी भोजन का नहीं होता। स्वस्थ रहने या बीमारी के बाद स्वास्थ्य को ठीक करने के लिये मांसाहारी भोजन की बिलकुल ज़रूरत नहीं है।

(२४६)

चमड़े से चीज़ें बनाने या ऐसी चीज़ों की मुरम्मत का काम करने में कोई हानि नहीं। ऐसा करके आप किसी जीव की हत्या नहीं करते। जहाँ तक शराब के गोदाम में काम करने का प्रश्न है, शराब पीने वालों के आसपास होने और उनकी संगति के कारण आप में भी शराब पीने की इच्छा पैदा हो सकती है जो किसी दुर्बलता के क्षण में शराब न पीने के प्रण से गिरा सकती है। संगति का हम पर बहुत प्रभाव पड़ता है। अगर आप महसूस करते हैं कि आपकी इच्छा-शक्ति

दृढ़ है और आप शराब पीने के लालच को रोक सकते है, तो इस गोदाम में काम करने में कोई हर्ज नहीं है।

अपना भजन-सुमिरन बिना नागा करते रहें और अपने मन को परमात्मा में लगाये रखें। इच्छा-शक्ति को मजबूत रखें और सन्तमत के सिद्धान्तों से कभी भी न गिरें।

(२४७)

जो जीवन हम यहाँ बिता रहे हैं, वह अल्पकालीन व नाशवान है, जब कि इसके बाद आने वाला जीवन सच्चा, मूल्यवान और महत्वपूर्ण है। इसलिये हमें भजन-सुमिरन का धन इकट्ठा करना चाहिये। यह नित्य व स्थायी धन है जो हमारे साथ जायेगा और जिसे पाकर हम आने वाले जीवन में रूहानी दरिद्रता से बचे रहेंगे।

(२४८)

आप किस तरह का अभ्यास कर रहे हैं, यह मैं नहीं जानता। सन्तमत का अभ्यास हमेशा किसी पूर्ण गुरु के मार्ग-दर्शन में किया जाता है, यह केवल पुस्तकें पढ़कर नहीं किया जा सकता। अभी तो आपको सिर्फ़ अपने मन को बाहर से इकट्ठा करके अन्दर दोनों भौंहों के बीच में जमाने की कोशिश करनी चाहिये। कोशिश यह होनी चाहिये कि तवज्जह बाहर न जाये और दोनों भौंहों के बीच अंधेरे में जमी रहे। आप परमात्मा का कोई भी नाम, जिस पर आपकी रुचि व प्रेम हो, दोहरा सकते हैं। मन को अन्दर जमाने और इसे बाहर न जाने देने का अभ्यास बाद में बहुत काम आयेगा। साथ ही आपको सन्त-मत की पुस्तकें पढ़नी चाहियें, तथा उन्हें पूरी तरह समझने की कोशिश करनी चाहिये।

(२४९)

मन को बहुत दृश्य व भावनायें पैदा करने का अवसर न दें। इनका कोई महत्व नहीं है। मन एक बहुत जबरदस्त ताकत है, और बहुत से ऐसे काम कर सकता है जिन्हें हम समझ भी नहीं सकते। मन की इन चालों को महत्व देने के बदले आप इन्हें भुलाकर

सुमिरन पर ज़ोर दें। भजन-सुमिरन के सिवाय और कोई चीज़ महत्वपूर्ण नहीं है। केवल लगनपूर्वक किये गये नाम के अभ्यास में प्राप्त होने वाले अनुभव ही महत्वपूर्ण होते हैं।

(२५०)

आपके वर्तमान जीवन के बारे में पढ़कर मुझे अफ़सोस हुआ। आपको इस स्थिति का सामना करना चाहिये। जो बात गुज़र चुकी है उसके बारे सोच या चिन्ता करने से कोई फ़ायदा नहीं। वर्तमान को संभालने की पूरी कोशिश करें। यह सोचें कि जो कुछ आपके भाग्य के अनुसार होना था, वही हो रहा है और जो लिखा है उससे बचा नहीं जा सकता। इससे आपको कुछ धैर्य और सन्तोष मिलेगा। वर्तमान स्थिति का धैर्य के साथ हंसते हुए सामना करें। व्यर्थ की चिन्ता करने का कोई फ़ायदा नहीं।

(२५१)

बच्चे को गोद लेने या न लेने का निर्णय पति व पत्नी दोनों को मिलकर करना चाहिये। गोद लिए गए बच्चे की देखभाल करना माता और पिता दोनों ही की ज़िम्मेदारी है। अतएव इस बात का निर्णय आप दोनों को ही करना होगा। इस बारे में सावधानी के साथ विचार करके आप जैसा ठीक समझें वैसा करें।

आज के विज्ञान व उद्योग के युग में शहरों के शोर से बचना सम्भव नहीं। जैसे हो सके इसे बरदाश्त करना ही पड़ता है। इस जेट-युग में जीवन अधिक कोलाहलपूर्ण होता जा रहा है। हमें इस शोर की ओर ध्यान न देकर इसके प्रति लापरवाही के भाव पैदा करने की कोशिश करनी चाहिये। कुछ समय के बाद हम इसके आदी हो जाते हैं, और इससे पैदा होने वाला तनाव कम हो जाता है। भजन-सुमिरन को समय दीजिये। शोर के असर को कम करने में सुमिरन बहुत मदद देता है। इससे आप आवश्यक आराम पायेंगे।

(२५२)

पेट में वायु बनने की शिकायत के बारे में किसी चिकित्सक की

राय लें। आपके भोजन में कुछ तत्व ऐसे हैं जो आपको माफ़िक नहीं आते। डाक्टर या आहार का विशेषज्ञ आपकी सहायता कर सकेगा। सही वस्तुओं का उचित रीति से मिश्रण करके लेना ही आपकी समस्या का हल है। कृपया याद रखें कि किसी भी परिस्थिति में अपने भोजन सम्बन्धी नियम का हमें उल्लंघन नहीं करना चाहिये। यह सन्तमत का कठोर नियम है और इसमें कोई छूट नहीं दी जा सकती।

जो दृश्य आपको दिखायी देते हैं, कृपया उनके बारे में परेशान न हों और न ही उन्हें कोई महत्व दें। स्वप्न और अर्द्ध-जाग्रत अवस्था में ऐसी बहुत सी चीज़ें हम देखते हैं, जिनको समझा नहीं जा सकता। हमारे अचेतन मन में ऐसी अनेक बातें और दृश्य दबे पड़े हैं और कभी-कभी ये दृश्य मिलकर ऐसा अनुभव पैदा करते हैं, जिन्हें किसी तरह समझा नहीं जा सकता। इसको भूल जायें और सुमिरन तथा भजन में लगे रहें।

अपने माता-पिता के बारे में अब आप कोई चिन्ता या सोच-विचार न करें। उनका भाग्य ऐसा ही था और वह उन्हें भुगतना पड़ा। हर एक व्यक्ति को अपने कर्मों का भुगतान करना पड़ता है। ये सब पिछले जन्मों के परिणाम हैं और केवल वर्तमान जन्म के आधार पर उन्हें समझाया नहीं जा सकता। मृत्यु का समय, स्थान और वह किस ढंग से होगी, ये सब बातें निश्चित है, और कोई चीज उन्हें बदल नहीं सकतीं। यह सोचना व्यर्थ है कि यदि ऐसा या वैसा किया गया होता तो मृत्यु टल सकती थी। ऐसा हो नहीं सकता और जब अन्त आता है तो उसे स्वीकार करना ही पड़ता है।

(२५३)

सपनों पर हमारा नियंत्रण या वश नहीं है इसलिये हम उन्हें अधिक महत्व नहीं दे सकते। वे अनेक बातों पर निर्भर करते हैं जैसे, इस जीवन में हमारी संगति और भावनायें, इस संसार में हमारे विचार और जो मोह के बंधन हम एकत्रित करते हैं, और पिछले जन्मों में

दबी आ रही हमारे मन में पड़ी हुई कुछ गहरी छाप। अधिकांश बातों में हम इनका अपने आज के जीवन से सम्बन्ध नहीं जोड़ पाते।

सन्तमत में केवल वे ही अनुभव महत्व के हैं, जिन्हें हम अपने भजन-सुमिरन में प्राप्त करते हैं। सुमिरन के द्वारा जब तक नेत्रों के नीचे का शरीर सुन्न नहीं हो जाता, तब तक अन्तर में कोई वास्तविक आध्यात्मिक प्रगति शुरू नहीं होती। इस प्रगति का पहला कदम है सुमिरन के द्वारा अपनी समस्त चेतनता को पैर के तलवों से समेट कर तीसरे तिल पर पहुँचाना। सारे प्रयास इसी ओर लगाने चाहिये।

सन्तमत में विश्वास का बहुत महत्व है। सच तो यह है कि जीवन में हम जिस बात पर विश्वास नहीं कर सकेंगे तो उसे पूरा करने की हम क्या आशा कर सकते हैं? विश्वास ही वह बुनियाद है जिस पर पूरे आध्यात्मिक महल को खड़ा किया जाता है। जब एक बार अध्ययन और छान-बीन के वाद सन्तमत में आने का निश्चय कर लिया, तो अब क्यों आपका विश्वास डगमगा कर आपका साथ छोड़ रहा है? अगर आप रूहानी प्रगति चाहते हैं तो आपको मन की इस वृत्ति का सामना करना तथा अडिग विश्वास पैदा करना होगा।

केवल सुमिरन और भजन ही ऐसी चीज़ें हैं जो अन्त में हमें परमात्मा की उस सुरीली आवाज़ के साथ जोड़ सकती हैं। हमारे अन्तर में गूंज रही इस ध्वनि या आवाज़ के बिना परमात्मा से मिलाप प्राप्त करने का कोई सवाल ही पैदा नहीं होता। मन के व्यवहार की परवाह किये बिना, सुमिरन और भजन को नियमित रूप से रोज़ समय दें। मन को वश में करके उसे अन्तर्मुख करने में बहुत समय लगता है। यह जीवन भर का संघर्ष है। हमें यह नहीं सोचना चाहिये कि जब मन ही ठीक से काम नहीं करता तो भजन करने का क्या फायदा? यदि मन के ठीक होने का इन्तिज़ार करते रहेंगे तो हम भजन कर ही नहीं पायेंगे। वास्तव में भजन ही मन को वश में ला सकेगा।

सन्तमत बहस और तर्क का नहीं, अमल का मार्ग है। प्रश्न

करने और शंकायें उठाने में मन कभी नहीं थकता। मन से कह दें कि काफ़ी बहस और तर्क हो चुके हैं, अब कुछ अमल करना होगा। जीवन इतना थोड़ा है कि इसे हम व्यर्थ के वाद-विवाद में नष्ट नहीं कर सकते। अन्तर में जायें तथा अपनी आत्मा को ऊपर ले जायें, वहाँ तमाम प्रश्नों के उत्तर मिल जायेंगे। पूरे दिन अपने मन में सुमिरन करते रहने की कोशिश करें। सुमिरन में प्रवल शक्ति है और इसी के द्वारा हम सतगुरु के उस प्रकाशमान स्वरूप तक पहुँच सकेंगे, जहाँ से सच्ची धुन का सुनाई देना शुरू होगा।

(२५४)

इस तरह के निराशा उत्पन्न करने वाले विचारों की चिन्ता न करें। सर में दर्द, पीठ में पीड़ा तथा इस प्रकार की बातों का भजन-सुमिरन से कोई सम्वन्ध नहीं है। ये शारीरिक वातें हैं और इनका किसी अच्छे डाक्टर से इलाज कराना चाहिये।

अतीन्द्रिय शक्तियों या आत्माओं के प्रभाव तथा इस तरह की बातों को अपने मन से निकाल फेंकें। बीते हुए समय के बारे में तथा ऐसे व्यक्तियों के बारे में, जो संसार छोड़ कर जा चुके हैं, हमेशा चिन्ता करते रहने से क्या फ़ायदा है? वे अब न तो कोई नुकसान पहुँचा सकते हैं और न ही आपके आज के जीवन पर कोई प्रभाव डाल सकते हैं। ऐसे विचारों, अर्थहीन उदासी तथा भय में डूबे रहना कभी अच्छा नहीं होता। निडरता, साहस और प्रसन्न चित्त के साथ जीवन का सामना करें। कोई भी आपका नुकसान नहीं कर सकता। अपने विचारों को भजन में लगाये रखें। शक्ति, प्रसन्नता और आनन्द इसी में हैं। अन्तर में प्रवेश करने से न डरें। असल में सारे भय बाहर इस संसार में ही हैं, अन्दर तो केवल प्रकाश और आनन्द है।

बाहर न भटकने दें। अपने ख़याल को बाहर की दुनिया से पूरी तरह समेट कर तीसरे तिल पर एकाग्र करने का यह अभ्यास सन्तमत के उपदेशों पर चलने के लिये बड़ी अच्छी तैयारी साबित होगा। शाकाहारी भोजन पर दृढ़ रहते हुए और सब प्रकार की बुरी संगति से बचते हुए सन्तमत के सिद्धान्तों के अनुसार रहने की कोशिश करें। संगति का हमारे जीवन पर बहुत प्रभाव पड़ता है।

(२५६)

एक ही आसन में बड़ी देर तक बैठने से शुरू-शुरू में शरीर के निचले अंगों में कुछ दर्द ज़रूर महसूस होता है। इस दर्द को सहने की कोशिश करें। यह धीरे-धीरे मिट जायेगा। यदि यह दर्द कभी असहनीय हो जाये तो आप आसन बदल सकते हैं। धीरे-धीरे शरीर के निचले अंग सुन्न हो जायेंगे और सारी चेतनता तीसरे तिल पर आ जायेगी। सिमटाव की इस क्रिया में डरने की कोई बात नहीं है। शिष्य को कोई शारीरिक नुकसान नहीं हो सकता। शिष्य की रहनुमाई और सुरक्षा के लिये सतगुरु सदैव उसके साथ रहते हैं।

(२५७)

यदि हम यातनाओं के इस संसार से सदा के लिये मुक्त होना चाहते हैं, तो हमें अपने मन को वश में लाना होगा और इसकी तृष्णाओं और प्रलोभनों पर रोक लगानी होगी। हम ख़ुद को तो धोखा दे सकते हैं किन्तु उसको धोखा कैसे दे सकते हैं जो कि हमारे अन्दर ही बैठा है और जो कुछ हम कर व सोच रहे हैं उसे देख रहा है। मन केवल हमें भटकाने के लिये ही है, और यदि हम हमेशा उसकी बात सुनते रहेंगे, तो वह हमें कभी भजन-सुमिरन नहीं करने देगा।

(२५८)

जिनको नाम मिलना निश्चित है, ऐसी आत्माओं के बारे में चिन्ता न करें। ऐसी आत्माएँ कौन सी हैं, यह तो केवल वह परमपिता ही जानता है, और वही इस बात का प्रबन्ध करेगा कि उनकी सतगुरु से भेंट हो और सतगुरु के द्वारा उनकी सँभाल हो। जब तक

रों की सहायता कर सकने के लायक नहीं हो जाते, तब तक
तरों की कोई सहायता नहीं कर सकते ।

(२५९)

न तो कोई व्यक्ति हमारा भला या बुरा कर सकता है, और न
कोई हमारा अपमान या सम्मान कर सकता है । सतगुरु अन्दर से
खींचते रहते हैं, और हमारे कर्मों के अनुसार हमारे प्रति लोगों
व्यवहार कराते रहते हैं । कभी-कभी पिछले जन्मों के और कभी
सी जन्म के हमारे कर्मों के फलस्वरूप लोग हमारे साथ अपमान या
मपूर्ण व्यवहार करते हैं । इसलिये आपके प्रति औरों के जो व्यवहार
हों, उन से दुखी न हों ।

किसी व्यक्ति को कभी आदर्श न मानें । सब एक ही नाव में सवार
असमर्थ जिज्ञासु है । कोई आशा न करें ताकि निराश न होना पड़े ।
निराशा आती है हमारे मन को सब तरफ़ से हटा कर अन्तर की ओर
मोड़ने के लिये । अन्तर में ही सम्पूर्ण शान्ति और आनन्द का स्रोत है ।

मनुष्यों के बजाय परमात्मा की ओर मुड़ें । मालिक से प्यार करें
और जो सही हो वही करें । लोगों के व्यवहार या रुख को लेकर सुखी
और दुखी न हों । अपना भजन-सुमिरन बिना नागा करते रहें, और
प्रतिदिन कुछ समय सन्तमत के साहित्य के अध्ययन में भी लगायें ।

(२६०)

कम खाने का अर्थ शरीर को भूखे मारना नहीं है । हमारे लिये
शरीर की जरूरतों को पूरा करना और स्वास्थ्य को अच्छा रखन
ज़रूरी है ताकि भजन-सुमिरन किया जा सके । न तो हमें शरी
की देखभाल में अति करनी चाहिये और न ज़रूरत से ज़्यादा ख
चाहिये । हमें जीवित रहने के लिये खाना है, न कि खाने के
जीवित रहना है ।

प्रेम और लगन के साथ किये गये हमारे भजन का जब
होने लगता है, तो हमारी सारी कमजोरियाँ धीरे-धीरे दूर हो
हैं । इन कमजोरियों में ईर्ष्या, आलस्य, अहंकार, लोभ,

(२६१)

भजन-सुमिरन के बारे में कोई विशेष बात बच्चों को नहीं बतानी चाहिये। यह सतगुरु का कर्तव्य है, जो वे नाम-दान के समय करते हैं। ऐसे छोटे बच्चों में आप केवल प्यार और धार्मिक बातों के प्रति लगाव की सामान्य भावना उत्पन्न करें, और उनके जीवन को सही दिशा में ढालें। उन्हें एक स्वच्छ और नेक जीवन बिताने की शिक्षा दें; उन्हें ऐसा मार्ग-दर्शन दें जिससे उनमें अच्छी आदतें पड़ें। बड़े होने पर सन्तमत को अपनाने के बारे में उन्हें अपना निर्णय स्वयं लेने दें। सन्तमत तथा उसकी शिक्षा और महत्व को समझने के लिये वे अभी बहुत छोटे हैं।

(२६२)

चिकित्सा के नये नये तरीके रोज़ निकल रहे हैं। बिजली और चुम्बक की लहरों की मदद से डाक्टरी इलाज और चीर फाड़ करने की विधि और यह ईथरिक सर्जरी भी उन्हीं में से एक प्रतीत होती है। अगर लोगों को ऐसी चिकित्सा से लाभ मिलता हो, तो उनको इस विधि से इलाज करने वालों के पास भेज सकते हैं। इसमें आप अपना कोई नुकसान नहीं कर रहे हैं। किन्तु आपको अपनी ऐसी चिकित्सा नहीं करानी चाहिये, क्योंकि इसकी आपको कोई आवश्यकता नहीं है।

(२६३)

ऐसा प्रतीत होता है कि आपके शरीर में कम्पन किसी बीमारी के कारण होता है, आप किसी डाक्टर की राय लें। भजन-सुमिरन के दौरान में शरीर में कम्पन होने का कोई कारण नहीं है। जब तीसरे तिल पर आत्मा और मन एकाग्र होने लगते हैं, तब हाथ-पैर और शरीर के नीचे के अंग सुन्न होने लगते हैं और चेतनता ऊपर आने लगती है। सुमिरन पर अधिक ध्यान दें। एकाग्रता बढ़ेगी तो पहले ज्योति दिखाई देगी, उसके बाद तारे, सूर्य और चन्द्रमा दिखाई देंगे। इसके बाद सतगुरु का दिव्य स्वरूप है, जो आप से मिलने की राह देख रहा है। अपनी चिन्ताओं में ही न घिरे रहें। इसमें सन्देह

नहीं कि आपकी प्रिय-पत्नी की मृत्यु के कारण बच्चों के प्रति आपकी जवाबदारी बढ़ गई है, पर ये तो दुनिया के खेल हैं और हमें साहस और अडोल मन के साथ इनका सामना करना चाहिये। ऐसी सेवा और परोपकार भी व्यर्थ है जो हमारे अहंकार को बढ़ाते हैं। दूसरों की सेवा करने और उन्हें सहायता पहुँचाने से हमारे मन में नम्रता और दया की भावना पैदा होनी चाहिये। अधिक भजन करके हमें पहले अपने आप की सहायता करने की कोशिश करनी चाहिये ताकि हमें अपनी समस्याओं को समता-भाव के साथ सुलझाने का बल प्राप्त हो।

सतगुरु पर पूरा विश्वास रखें। सन्तमत में असफलता नाम की कोई चीज़ नहीं है। देर अबेर आप अपने निज-धाम अवश्य पहुँचेंगे। केवल समय का सवाल है। आपकी सहायता करने तथा आपके मार्ग-दर्शन के लिये सतगुरु सदा आपके साथ हैं।

(२६४)

आप 'राधास्वामी' शब्द का जाप कर सकते हैं, परन्तु जब तक नाम न मिले तब तक धुन को सुनने की कोशिश न करें।

पिछले जन्म में आपको कोई सतगुरु मिले थे या नहीं, इसे जानने से कोई लाभ नही होगा। उससे इस जन्म पर किसी प्रकार का असर नहीं पड़ेगा।

(२६५)

नशीली वस्तु के सेवन से आपको जो अनुभव हुए, उनके बारे में आप न तो चिन्ता करें और न ही उनको लेकर सोच-विचार करते रहें। इससे आपको निश्चय हो गया होगा कि सतगुरु की दया और सहायता के बिना अन्तर में प्रवेश करने में बहुत जोखिम है, और कभी-कभी ऐसा नुकसान पहुँच सकता है जिसकी पूर्ति नहीं हो सकती। अब आपको यह विश्वास भी हो गया है कि नशीली दवायें सतगुरु का स्थान नहीं ले सकतीं, बल्कि वे हर प्रकार से भारी रुकावटें ही होती हैं।

कृपया भजन-सुमिरन का आसरा लें, और बाकी सब बातों से अपना मुंह मोड़ लें। परमात्मा का मिलाप ऐसी सस्ती चीज़ नहीं है, जो नशा करने से प्राप्त हो सके। मन को पूरी तरह से अनुशासन और वश में रखना होगा। पांचों विकारों को वश में करना होगा। समस्त दुर्बलताओं और शंकाओं को पराजित करने के बाद ही दिव्य-ज्योति की एक झलक दिखाई दे सकेगी। नशीली वस्तुओं से इच्छा-शक्ति कमज़ोर होती है, जबकि उसे इतना मज़बूत होना चाहिये कि उसके इशारे से आप पर्वत तक को हिला सकें।

नाम के सुमिरन के बावजूद जो अदृश्य नहीं हुआ, वह परमात्मा नहीं था बल्कि आपके अन्दर की बुराइयों और दुर्बलताओं का मूर्तिमान रूप था। मन को धीरे-धीरे अनुशासन में लाकर, सन्तमत को समझ कर और लम्बे समय तक लगातार भज़न-सुमिरन करके उस पर विजय प्राप्त करना है। जो व्यक्ति स्थिर होकर कुछ घण्टों तक भी अभ्यास में न बैठ सके और वासनाओं तथा मन की नाना प्रकार की लहरों में डोल जाये, उसे परमात्मा के दर्शन कैसे हो सकते हैं? उस वरदान को प्राप्त करने के लिये समस्त वासनाओं का नष्ट होना ज़रूरी है।

निद्रा और आराम के लिये दवा (ट्रेंक्वलाइज़र्स) आप चिकित्सक की राय से ले सकते हैं।

प्रेम, विश्वास और लगन के साथ अपना भजन-सुमिरन चालू रखें। कृपया याद रखें कि इस संसार में, और इसके बाद भी, समस्त सच्ची शान्ति और आनन्द का एक-मात्र स्रोत यही है।

(२६६)

नाम लेने से पहले भजन करना उचित नहीं, क्योंकि जिस विधि से इसे करना है, वह महत्वपूर्ण है और वह केवल नामदान के समय ही बताई जाती है। अपनी आँखों पर दबाव न डालें, इससे आप उन्हें नुकसान पहुँचा सकते हैं। किसी भी प्रकार के ध्यान के लिये सही

मार्ग-दर्शन आवश्यक है। शिष्य को केवल बाहर ही नहीं, बल्कि भीतर भी सहायता की आवश्यकता पड़ती है।

आप कोई अच्छा सा धन्धा चुन लें, स्वच्छ, स्वस्थ और सदगुणी जीवन व्यतीत करें, आहार के नियमों का पालन करें और सन्तमत के साहित्य का अध्ययन करें। नाम प्राप्त करने के लिये जल्दी न करें। जो कदम आप उठाना चाहते हैं, उसके प्रति विश्वास पैदा करें और इस बात का निश्चय कर लें कि आप सन्तमत के सिद्धान्तों के मुताबिक रह सकेंगे या नहीं?

(२६७)

यदि आप डेरे नहीं आ सकते तो कोई हर्ज नहीं। अपनी आत्मिक प्रगति के लिये डेरे आना जरूरी नहीं है। आप जहाँ कहीं भी रहें, परमात्मा सदैव आपके साथ हैं और भजन-सुमिरन के लिये सब स्थान अच्छे हैं। अन्तर में सतगुरु के दिव्य-स्वरूप को प्रकट करने की कोशिश करें, और फिर जब-जब आप चाहेंगे उन्हें अपने सामने पायेंगे। यह सब प्रेम और विश्वास के द्वारा आता है। अपने भजन में नित्य, बिना नागा लगे रहें।

आप अपने अन्दर जिस प्रेम और लगन का अनुभव करते हैं, उसे बाहर प्रकट करने के बजाय भीतर हज़म करने की कोशिश करें। ये बातें भीतर ही विकसित होती हैं और जितना हम उन्हें भीतर हज़म करेंगे, उतनी ही वे पनपेंगी। इस भक्ति को भजन-सुमिरन में बदल दें, तब आप देखेंगे कि परमात्मा आप पर कितनी दया बरसाते हैं।

(२६८)

सारी सृष्टि की रचना पांच तत्व—पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश—से की गयी है। वनस्पति जाति में जल तत्व प्रधान है और बाकी तत्व बराए नाम हैं। इस सृष्टि के कण-कण में प्रभु का अंश है, जिसे हम आत्मा कहते हैं, और जो उसे जीवन प्रदान करता है। वह शक्ति, वह दिव्य सुरीली ध्वनि, जब किसी अन्दर

से खींच ली जाती है, तब उसे मृत्यु कहते हैं। सन्तमत के साहित्य का सावधानीपूर्वक अध्ययन करें और सन्तों की शिक्षा को अधिक पूर्णता के साथ अच्छी तरह समझने की कोशिश करें।

मन और आत्मा के बीच की दूरी को कम करने का कोई प्रश्न नहीं है। आत्मा तो पहले से मन के साथ एक ऐसी गाँठ से वँधी है जो खोली नहीं जा सकती, और मन जहां जहां जाता है आत्मा भी उसके साथ घूमती रहती है। वह अपनी समस्त शक्ति और ताकत खो चुकी है, और मन का गुलाम वन गयी है। हमारी कोशिश आत्मा को मन से अलग करने और इस गांठ को खोलने की होनी चाहिये, ताकि आत्मा मन से पूरी तरह आज़ाद हो सके। मन के अपने मूल में पहुँच कर ब्रह्मांडी मन में लीन होने पर ही यह गांठ खुल सकेगी। केवल तभी आत्मा वापस परमात्मा के पास पहुँचने के लिये आज़ाद हो सकेगी।

(२६९)

अपने अन्तर में शब्द के साथ सम्पर्क साधने की युक्ति किसी जीवित पूर्ण महात्मा से प्राप्त होती है। गुजरे हुए या पिछले सन्त और गुरु, जो अब इस संसार में नहीं हैं, आज हमारी सहायता नहीं कर सकते। पूरा अध्ययन करके तथा समझ कर अपनी शंकाएं दूर कर लें, क्योंकि सन्तों के उपदेश के बारे में जब तक किसी को पूरी तरह यकीन नहीं हो जाता, तब तक ऊपरी मन और अधूरी भक्ति के साथ उनका पालन करने में कोई फायदा नहीं।

सन्तमत हमें धर्म परिवर्तन करने की शिक्षा नहीं देता क्योंकि जिस अर्थ में आजकल 'धर्म' को समझा जाता है, उस अर्थ में सन्तमत कोई धर्म नहीं है। मनुष्य किसी भी समाज या पंथ में रह सकता है, और यदि वह सामाजिक बन्धनों की वजह से अपने धर्म की बाहरमुखी क्रियाओं, कर्मकाण्ड या रीति-रिवाजों को छोड़ने में असमर्थ है तो लोकाचार के लिये उनमें भाग लेते हुए वह सन्तमत को अपना सकता है। परन्तु जहां तक मनुष्य की आन्तरिक आस्था और श्रद्धा

की, उसकी सच्ची लगन और भक्ति की बात है, एक समय में दो नावों में बैठने का सवाल ही पैदा नहीं होता। जब तक उसे इस मार्ग में दृढ़ विश्वास नहीं है, उसकी आध्यात्मिक प्रगति किसी भी तरह सम्भव नहीं हो सकती।

यदि आपको सचमुच सन्तमत में रुचि है तो इसका सभी पहलुओं से अध्ययन करें और इस बात का स्वयं पता लगायें कि यह हमें क्या दे सकता है और हमसे क्या चाहता है? यह उस रूहानी मार्ग का संकेत करता है जिसे परमात्मा ने स्वयं प्रत्येक मनुष्य के अन्दर रखा है। यह मनुष्य द्वारा निर्मित मार्ग नहीं है और *इसमें कोई परिवर्तन या फेर-बदल नहीं किया जा सकता। यह सृष्टि* के आदि से चला आ रहा है और सदैव ऐसा ही बना रहेगा।

जहां तक मि. केसी की भविष्यवाणियों का सवाल है, सन्तमत ऐसी बातों को कोई महत्व नहीं देता। परमात्मा ने काल को यह सृष्टि सौंप दी है, और उसके शासन में इस संसार में जो बातें घट रही हैं, उनसे सन्तमत का न तो कोई सरोकार है और न वह उनमें दखल ही देता है। संसार का शासन करने के लिए काल के अपने कानून हैं, और इन कानूनों में सन्त कोई विघ्न नहीं डालते। उनका मिशन या ध्येय इस संसार को सुधारने अथवा इसे एक स्वर्ग में बदलने का नहीं है। ऐसा कभी नहीं किया जा सकता, और संसार सदा इसी तरह चलता रहेगा। सन्त हमें उस मार्ग पर चलने का उपदेश देते हैं जो एक दिन हमें इस सृष्टि से छुटकारा दिला देगा। यदि किसी देश के कुछ भागों का पतन अथवा प्राकृतिक शक्तियों द्वारा नाश होना बदा है, तो इसे कौन रोक सकता है, और कोई भाग कर कहां जा सकता है? हर एक की मृत्यु का समय निश्चित है। यदि कोई पाताल में अथवा सात समुद्रों के नीचे भी अपने आप को छिपा ले तो भी समय आने पर मृत्यु अपने शिकार को ढूंढ लेगी। सन्तों की शिक्षा उस मार्ग पर चलने की है, जिस पर हमें [illegible]

बाद जाना होगा और यदि अपने जीवन काल में ही ऐसा कर लेते हैं, तो मृत्यु का सारा भय गायब हो जाता है। मृत्यु पर विजय प्राप्त हो जाती है। होनहार होकर ही रहेगा और जो नहीं होना है, वह कभी नहीं होगा। कर्म का विधान—'जैसा बोओगे, वैसा काटोगे' अपना काम कठोरतापूर्वक कर रहा है और हमने पहले जो बोया है, उसे ही काट रहे हैं। जब हम अपने अन्तर में परमात्मा की आवाज़ को सुनते हैं तब कर्मों का यह कठोर सिलसिला टूटता है, और हम अपने धाम में पहुँचने के लिए मुक्त हो जाते हैं।

अपने पिछले पत्र में आपने शाकाहारी भोजन और मदिरा-पान का प्रश्न उठाया था। यदि आप सन्तमत के साहित्य को, जो कि आप के देश में आसानी से प्राप्त हो सकता है, ध्यान से पढ़ेंगे तो आप पाएंगे कि उनमें खाने और पीने के विषयों को बहुत अच्छी तरह समझाया गया है। इन विषयों पर पुस्तकें मौजूद हैं, और इनको पत्रों में विस्तारपूर्वक नहीं समझाया जा सकता। यदि सन्तमत के बारे में आप सचमुच कुछ जानने के लिए उत्सुक हैं, तो खुले मन से इन पुस्तकों को पढ़ें और यदि सम्भव हो तो अपने नगर अथवा राज्य में होने वाले सत्संगों में जायें। कितनी ही चर्चा या बहस क्यों न की जाये, इनसे किसी शिक्षा के मूल सिद्धान्तों को बदला नहीं जा सकता; या तो उसको स्वीकार करना पड़ता है या अस्वीकार।

आपने हिटलर का उदाहरण देकर कहा है कि शाकाहारी होते हुए भी वह इतिहास का इतना निर्दयी व्यक्ति हुआ है। लेकिन यह कौन कहता है कि समस्त शाकाहारी सन्त हैं और तमाम माँसाहारी दुष्ट? आपने इस विषय पर सन्तमत के उपदेशों को न तो पढ़ा है, न समझा है और अपने विचारों के अनुसार चीज़ों को समझने की कोशिश कर रहे हैं। यह ठीक नहीं है। हमारे भोजन का केवल हमारे मन पर ही नहीं, बल्कि आत्मा पर भी बहुत प्रभाव पड़ता है। इसका विवरण आपको सन्तमत के साहित्य में मिलेगा।

मेरी सलाह है कि जो समय आप लम्बे पत्रों के लिखने में लगा रहे हैं उसे सन्त-मत के साहित्य के अध्ययन में लगायें। खुले मन से अध्ययन कर लेने के बाद भी यदि कोई शंका रहे तो आप स्पष्टीकरण के लिये मुझे लिखें। मुझे आशा है कि उपलब्ध पुस्तकों से अथवा आपके नजदीक होने वाले सत्संग से आपको अपने अधिकांश प्रश्नों के उत्तर मिल जायेंगे।

(२७०)

मुझे आपकी कला और आपकी आत्मा के बीच किसी द्वंद या विरोध का कोई कारण दिखाई नहीं देता। हर इन्सान का कार्य-क्षेत्र बिल्कुल अलग है। इस संसार की सारी कला केवल मनुष्य के मन की उत्पत्ति है जब कि आत्मा परमात्मा का विशुद्ध अंश है और इस स्थूल जगत की वस्तु नहीं है। आत्मा की हमेशा यह इच्छा रहती है कि अन्दर जाकर अपने मूल स्थान में पहुँच जाये, जो मन और माया के देश से परे है। इसके विपरीत, मन की पूरी कोशिश होती है कि मनुष्य कला, व्यवसाय आदि की सांसारिक चीज़ों की रचना में ही लीन रहे। परन्तु आत्मा की कामना अन्तर में, तीसरे तिल से ऊपर के लोकों को देखने की होती है।

जिस द्वंद को आप महसूस करते हैं वह आपके मन की उपज है। उसे भूल जायें, और यदि चित्रकला आपको अच्छी लगती है तो खुशी से उसमें लगे रहें। आत्मा तो परम आनन्द और सुख के सागर की एक बूंद है, उसमें कोई द्वंद या संघर्ष नही है। संघर्ष तो मन में ही होता है, जो कभी किसी वस्तु से सन्तुष्ट नहीं होता। परमात्मा को प्राप्त करने के लिये हमें इसी मन को शांत करके स्थिर करना पड़ता है, ताकि आत्मा अपनी बेड़ियों से मुक्त हो जाये। जब आत्मा मन की पकड़ से छूट जाती है तब वह वापिस शाँति और आनन्द के अनन्त धाम में पहुँचने के लिये तैयार हो जाती है।

(२७१)

आपको मेरी सलाह है कि डेरे की यात्रा में समय और धन लगाने

के बदले अपनी रोज़ी कमाते हुए रूहानी अभ्यास करने तथा सन्तमत के साहित्य को पढ़ने में अधिक से अधिक समय लगायें। जब आप इस अभ्यास में कुछ प्रगति कर लेंगे तब यहां आने से आपको ज़्यादा फ़ायदा होगा।

(२७२)

जहाँ तक ध्यान का सवाल है, सत्संगी को उसी गुरु का ध्यान करना चाहिये जिसने उसे शब्द के साथ जोड़ा है, क्योंकि शब्द ही सारी सृष्टि का बनाने वाला है और शब्द ही सतगुरु का असली स्वरूप है। यह शब्द ही है जो अन्त में आत्मा को ऊपर आनन्द और सुख के लोक में खींच कर ले जायेगा।

(२७३)

जिज्ञासुओं तथा अन्य व्यक्तियों को सन्तमत समझाने के लिये आप इस सामग्री का उपयोग कर सकते हैं। किन्तु हमारी कोशिशें हमेशा रचनात्मक होनी चाहियें। सत्संग में ऐसी कोई बात नहीं कही जानी चाहिये जिससे दूसरों की भावना को ठेस पहुँचे। दूसरों की श्रद्धा और पूजा-विधियों की कोई आलोचना नहीं होनी चाहिये। सन्त-मत के गुणों तथा सामान्य उपदेशों को समझाने के बाद लोगों को अपनी राय ख़ुद बनाने के लिये छोड़ देना चाहिये।

हमें अपने विचारों और विश्वासों को दूसरों पर थोप कर किसी प्रकार की अप्रसन्नता पैदा नहीं करनी चाहिये। सन्तमत को खुद अपने ही गुणों के सहारे खड़े होना है। यह नम्रता और दीनता का मार्ग है, और सत्संगियों की बातचीत में यह गुण झलकने चाहियें। लोग कहीं यह न सोचने लगें कि सत्संगी कोई अलग ही लोग होते हैं जो अपने आप को औरों से श्रेष्ठ या ऊँचा समझते हैं। सन्तमत के सिद्धान्त इतने सरल और स्पष्ट हैं कि यदि हम इन बातों को याद रखेंगे तो औरों को ये उपदेश समझाने में भूल नहीं होगी।

(२७४)

परेशान न हों। संसार के प्रति और भजन के प्रति अपने कर्तव्य

का पालन करते रहें। हमने कितनी प्रगति की है इसकी जांच करना हमारा काम नहीं। इसे केवल परमात्मा जानता है। अपनी सीमित बुद्धि से अपने आपको देख सकने में असमर्थ होने के कारण हम इस बात का कोई अनुमान या अंदाज़ा नहीं लगा सकते कि परमात्मा हमारे लिये निरन्तर क्या कर रहा है और किस प्रकार वह हमें इस लायक बना रहा है कि हम उसके महल में प्रवेश पा सकें। हमारा कर्तव्य है कि हम प्रेम और लगन से अपना भजन-सुमिरन रोज़ करते रहें। बाकी वह मालिक खुद करेगा।

(२७५)

विवाह करने की इच्छा बिलकुल स्वाभाविक है और सन्तमत की दृष्टि से इसमें कोई बुराई नही है। सभी सन्त गृहस्थ-जीवन पसन्द करते हैं। गृहस्थ-जीवन में व्यक्ति की अनेक प्राकृतिक इच्छाओं की तृप्ति हो जाती है, और उनका दमन नहीं करना पड़ता। स्वाभाविक प्रवृत्तियों के दमन से प्रतिक्रिया उत्पन्न होती है, जो शान्ति-पूर्ण जीवन में बाधक हो सकती है। किन्तु पहले इस बात का निर्णय कर लें कि जिसको विवाह के लिये आपने चुना है उसके साथ आप सुखी रह सकेंगे और आप दोनों का जीवन पूरे सद्भाव, प्रेम और स्नेह से गुज़र सकेगा। विवाह के समय जो यह प्रण लिया जाता है कि 'जीवन-भर हम अलग नहीं होंगे', उसे वैवाहिक जीवन में भूलना नहीं चाहिये।

सफल विवाह का मतलब है अपने स्वयं के लिये जितना जीना, उतना ही दूसरे व्यक्ति के लिये भी जीना। इसके लिये त्याग और एक दूसरे को समझने की तथा 'जीयो और जीने दो' और 'क्षमा करो व भूल जाओ' की भावनाओं की आवश्यकता है। याद रखें कि सुखी परिवार बनाने की जवाबदारी दोनों साथियों की है। जीवन में आप जो कुछ भी करें, यह हमेशा याद रखें कि दुनिया के किसी भी काम के लिये भजन-सुमिरन का बलिदान नहीं किया जाना चाहिये। भजन-सुमिरन की पूंजी अविनाशी और स्थायी है और यह अपनी

सम्पत्ति है, जब कि संसार की हरएक वस्तु नाशवान और अस्थायी है।

(२७६)

भूमि के अन्दर कितनी गहराई में जल तथा खनिज है, इसका अनुमान लगाने का काम आध्यात्मिक प्रगति के लिये अहितकर नहीं हो सकता। इसे केवल एक रोज़गार के रूप में किया जाता है। हमें मनुष्य-जीवन के असली उद्देश्य को हमेशा याद रखना चाहिये।

(२७७)

सन्तमत में शीघ्र ही दीक्षित होने की आपकी तीव्र इच्छा को मैं पूरी तरह समझता हूँ। किन्तु, जैसी कि पहले भी सलाह दी जा चुकी है, किसी को इस बारे में जल्दी नहीं करनी चाहिये। हमें सदा ऐसा लगता है कि अब हमारी कोई शंका बाकी नहीं रही और कोई प्रश्न पूछने को नहीं बचे हैं, लेकिन जब भजन-सुमिरन करने का समय आता है तब मन और बुद्धि अनेक प्रकार की सैंकड़ों समस्यायें खड़ी करनी शुरू कर देते हैं और इस तरह मन को शांत और स्थिर होकर एकाग्र नहीं होने देते। जब आप सन्तमत की पुस्तकों को ध्यान से पढ़ते हैं, तो मन ऐसे प्रश्न पूछने लगता है जिनका उसे अभी उत्तर मिल जाना चाहिये, क्योंकि जब तक सन्तमत के उपदेशों में हमारा विश्वास पूर्ण और अडिग नहीं हो जाता, तब तक इस मार्ग में किसी प्रकार की प्रगति नहीं हो सकती। इसलिये सन्तमत के साहित्य का बहुत सावधानीपूर्वक अधिक अध्ययन करना और मन व बुद्धि को हर प्रकार से सन्तुष्ट करना बहुत ज़रूरी है।

यह सलाह आपको निराश करने के लिये नहीं दी जा रही है, यह आपके हित में है। सन्तमत का अध्ययन करने में और सन्तों की शिक्षा को समझने का प्रयास करने में जो समय लगता है, वह उस समय का सदुपयोग ही है। किसी प्रकार से हताश न हों, बल्कि इस सलाह को मानें और जब आपको विश्वास हो जाये कि आपकी तैयारी

पूरी हो चुकी है, और आपके मन और बुद्धि इस बात में पूरी तरह सन्तुष्ट हो जायें कि यह मार्ग, जिस पर आप चलना चाहते हैं, सही है तो आप दूसरा कदम उठाने का विचार कर सकते हैं।

(२७८)

आपने अपने जिस पालतू जानवर को खो दिया है, उसके बारे में न सोचें। ऐसे मोह भजन-सुमिरन में कभी सहायक नहीं होते, बल्कि ख़याल को नीचे की ओर खींचते है। अपने मोह के कारण ही, चाहे वह किसी प्रकार का क्यों न हो, हमें बार-बार इस संसार में जन्म लेना पड़ता है।

(२७९)

जहां तक माला फेरने का सवाल है, मैं सलाह दूंगा कि आप अपना सुमिरन माला के बिना करें। मनकों की या अन्य किसी चीज की माला का उपयोग करने से सुमिरन की पूरी क्रिया यंत्रवत हो जाती है और मन या तो बाहर भटकता रहता है या केवल हाथ तथा मनकों के बारे में सोचता रहता है। एकाग्रता तब कठिन हो जाती है और मन को माला का उपयोग करने की आदत पड़ जाती है। अच्छा तो यही होगा कि आप सुमिरन के लिये किसी भी तरह के बाहरी तरीके का उपयोग न करें। आपको जो विधि बताई गई है, उसके अनुसार तीसरे तिल पर ध्यान को स्थिर रखते हुए, सुमिरन करें।

(२८०)

अपने विवाहित जीवन-साथी के सिवाय और किसी के साथ शारीरिक सम्बन्ध रखना सन्तमत में महान पाप माना जाता है और संसार के कानूनों के भी विरुद्ध है। ऐसे प्रलोभनों के आगे न झुकें। ऐसी हीन वासनाओं के उठने पर सतगुरु की शरण लें। वही आपका मज़बूत किला है। फौरन सुमिरन एकाग्रतापूर्ण सुमिरन शुरू कर दें। यह खराब विचारों की ओर से हटाकर मन अच्छी बातों की ओर ले जायेगा। यदि हमारा हृदय काम-वासना तथा अन्य दूषित विचारों से भरा रहेगा तो सचखण्ड पहुँचने की आशा करना तो दूर

भी आध्यात्मिक प्रगति करना सम्भव नहीं होगा। जब तक हम सोने की तरह शुद्ध और हर प्रकार की मलिनताओं और अपवित्रताओं से रहित न होंगे, तब तक शब्द, वह प्रभु की दिव्य धुन, हमें नहीं अपनायेगी। परमात्मा ऐसे हृदय में कभी प्रकट नहीं हो सकता जो उनके बैठने योग्य पवित्र और निर्मल नहीं है।

परेशान या उदास न हों। ये मानव दुर्बलताएं सब में हैं, और इनसे छुटकारा पाने के लिए कोशिश करनी पड़ती है। जैसे-जैसे मन आन्तरिक आनन्द का रस लेने लगेगा, धीरे-धीरे ये कमज़ोरियां दूर होने लगेंगी। तब मन इन्द्रियों के सुखों से अलग होकर आन्तरिक आनन्द से जुड़ जायेगा। भजन-सुमिरन ही एकमात्र उपाय है जिसके द्वारा हम अपना सुधार कर सकते हैं, और अपने ध्येय को प्राप्त कर सकते हैं। भजन-सुमिरन से बुरी वासनाओं पर लगाम लगेगी और सदगुण आने लगेंगे। जब मालिक आपके साथ है तो धुरधाम से, जिसे एक दिन आप अवश्य प्राप्त करेंगे, आपको कोई दूर नहीं रख सकता। परन्तु आपको अपने कर्तव्य का पालन ईमानदारी और सच्चे हृदय से करना चाहिये। प्रेम और लगन के साथ रोज़, नियमित रूप से भजन-सुमिरन अवश्य ही करना चाहिए।

(२८१)

सन्तों के इस मार्ग में निराश होने का कोई कारण नहीं है। हम सब आगे बढ़ने की कोशिश में लगी आत्माएँ हैं और हम सभी अपने-अपने कर्मों का बोझ ढो रहे हैं। परमात्मा ने आपको इस मार्ग पर ला दिया है, और अन्दर जाने का रास्ता आपको दिखा दिया है, यह इस बात का काफ़ी सबूत है कि वह आपको वापस अपनाने के लिए तैयार है। अब सिर्फ समय का ही सवाल है। हम सबको पहले अपने कर्मों का हिसाब चुकता करना है, अपने बोझ को उतारना है और इसके बाद परमात्मा के पास पहुँचना है। जब एक ओर आप अपने पापों के बारे में सोचते हैं, तो दूसरी ओर आपको परमात्मा की उस अनन्त दया और करुणा के बारे में भी सोचना चाहिये, जो सदा

मौजूद है। प्रेम और लगन के साथ रोज़ अपने कर्तव्य का पालन करें, भजन-सुमिरन करते रहें और अपने विचार मालिक की ओर लगा कर रखें। बाकी सब उस पर छोड़ दें। वह अपने कर्तव्य से नहीं चूकेगा।

(२८२)

आपने अपने पति के बारे में जो कुछ लिखा, उसे पढ़कर मुझे दुःख हुआ। लोगों की निजी बातों में, और विशेष कर पति-पत्नी से सम्बन्धित मामलों में आम तौर पर मैं दख़ल नहीं देता। यदि कुछ मतभेद हों तो दोनों पक्षों को आपस में स्नेह और सदभाव के साथ उन्हें दूर कर लेना चाहिए। केवल एक बात जो मैं कह सकता हूं, वह यह है कि जहां तक सम्भव हो पारिवारिक एकता में दरार नहीं पड़नी चाहिए। कई बार दोष दोनों तरफ़ का होता है। आप एक हाथ से ताली नहीं बजा सकते। हरएक साथी को शान्तिपूर्वक अपने अन्दर झांक कर देखना चाहिए कि झगड़े की जड़ कहां है।

हमें दूसरे की दुर्बलताओं के प्रति उदारतापूर्ण विचार भी रखने चाहिए। सब मनुष्य भीषण विषमताओं का सामना करने की कोशिश कर रहे हैं। कभी-कभी मन में आन्तरिक पीड़ा उठती है, कभी पिछले कर्म इतने भारी हो जाते हैं और अनेक ऐसी बातें हो जाती हैं, कि उनके सामने मनुष्य बिलकुल असहाय हो जाता है। मेरा भाव आपके पति की दुर्बलताओं को उचित ठहराने का नहीं है, मैं तो केवल यही कहना चाहता हूँ कि हमें दूसरों के बारे में निर्णय करने में कठोर नहीं होना चाहिए। सहानुभूतिपूर्ण और क्षमाशील रहने का यत्न करें। मौके को प्रेम तथा युक्ति के साथ निपटा लें और परिस्थिति को किसी तरह और बिगाड़ने की कोशिश न करें। अपने मन को परमात्मा में लगाए रखें, और उसकी दया-मेहर के लिए प्रार्थना करें। अपने भजन-सुमिरन के प्रति लापरवाही न बरतें, क्योंकि यही आपको शान्ति और शक्ति प्रदान करेगा। जीवन की समस्याएँ या उलझनें कभी समाप्त नहीं होतीं। उनसे ऊपर उठने की कोशिश करें और जिस अन्तिम

लक्ष्य की प्राप्ति आपको करनी है, उसका ख़याल रखें। वहीं आपको सच्चा आनन्द और सुख मिलेगा।

(२८३)

आपके अनुभव बड़े अर्थपूर्ण हैं, पर यह हमेशा याद रखें कि अन्तर में अपने सतगुरु के सिवाय किसी दूसरे स्वरूप या आत्मा पर आपको न तो कोई ध्यान देना चाहिये और न ही उसका मार्गदर्शन स्वीकार करना चाहिये। अन्य समस्त स्वरूपों या आवाज़ों की ओर ध्यान न दें और सुमिरन पर अधिक ज़ोर दें। कभी-कभी मन हमारा ही रूप धार कर हमारे सामने आ जाता है। उस की ओर कोई ध्यान नहीं देना चाहिये। अपना पूरा ध्यान तीसरे तिल पर एकाग्र रख कर सुमिरन करते रहें और अन्तर में दिखाई देने वाले स्वरूपों या दृश्यों पर कोई ध्यान न दें। मन काल का एक शक्तिशाली शस्त्र है, और सत्संगियों को ठगने के लिये अपनी इच्छानुसार कोई भी रूप धारण कर सकने की उसमें शक्ति है। आपने अपने सतगुरु को देखा है, उन के स्वरूप को पहचानते हैं और उसके असल होने न होने की कसौटी आपको मालूम है। आपको चाहिये कि उस स्वरूप के सिवाय और किसी का ध्यान न करें। प्रेम, लगन और नम्रता के साथ अपना भजन करते रहें, और आप धोखा नहीं खा सकेंगे। मैं आपसे बहुत प्रसन्न हूँ।

(२८४)

जीवन की समस्याओं के बारे में चिन्तित न हों। ये हमेशा बनी रहेंगी। जीवन की अच्छी और बुरी, दोनों ही वस्तुएँ हमें इस सृष्टि से बाँधे रखती हैं। हमें मन को ऐसा बना लेना चाहिये कि संसार के सारे काम हम केवल कर्तव्य समझ कर करते रहें। सबसे ज़रूरी काम अपनी आत्मा को अन्तर में शब्द के साथ जोड़ना है। हमारे सारे प्रयत्न इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिये होने चाहिये।

(२८५)

आपने अपने भजन-सुमिरन के बारे में जो लिखा है, उसे पढ़कर मुझे ख़ुशी हुई। अन्तर में आप जो कुछ देखें या सुनें, उसकी ओर

अपने मन में लगाव न रखते हुए कृपया अपना अभ्यास जारी रखें। ध्यान को पूरी तरह तीसरे तिल पर स्थिर रखते हुए सुमिरन में उस समय तक लगे रहें, जब तक अन्तर में आपको आकाश दिखायी न दे। उसके बाद सूर्य और चन्द्र के मण्डलों को पार करके वहाँ पहुँचें, जहाँ सतगुरु का दिव्य शब्द स्वरूप आपकी प्रतीक्षा कर रहा है। इस स्वरूप को प्रकट करना शिष्य का प्रथम लक्ष्य है, और यह सुमिरन और ध्यान के द्वारा होता है। जिन अनुभवों का वर्णन आपने किया है, वे बहुत सुखद और अर्थपूर्ण हैं। प्रेम और भक्तिपूर्वक अपना अभ्यास करते रहें।

(२८६)

सतगुरु के चेहरे और नेत्र की मानसिक छवि बनाने और जैसा आपने उन्हें पिछली बार देखा था उसी तरह उन्हें देखने की कोशिशों में स्वाभाविक तौर पर आपका ध्यान तीसरे तिल से हट जायेगा। आप का मन सतगुरु का चित्र बनाने में लग जायेगा और सुमिरन से ध्यान हट जायेगा। इससे सुमिरन यंत्रवत हो जायेगा और आप तीसरे तिल से हट जायेंगे। अपने मन को सतगुरु के स्वरूप या नेत्र के ऐसे चित्र बनाने में न लगायें। यदि आप इस प्रयास के बिना सतगुरु के स्वरूप की कल्पना नहीं कर सकते, तो बेहतर होगा कि इसे आप छोड़ दें और तीसरे तिल पर एकाग्रता रख कर अंधकार में देखते हुए सुमिरन करने की कोशिश करें।

सुमिरन के सिवाय मन को किसी अन्य काम में नहीं लगाना चाहिये। तीसरे तिल पर ध्यान जमा कर सचेत होकर सुमिरन करना चाहिये। जब एकाग्रता बढ़ती है और जब चेतनता शरीर के निचले भागों से सिमट कर तीसरे तिल के पार चली जाती है, तब सतगुरु का शब्द-स्वरूप स्वयं ही प्रकट हो जाता है।

तीसरे तिल पर [illegible] को जमाये रखने में ध्यान सहायक होता है। परन्तु इस [illegible] समय मन यदि दूसरी बातों में लग जाये और सुमिरन [illegible] से ध्यान हट जाये, तो अच्छा

लक्ष्य की प्राप्ति आपको करनी है, उसका ख़याल रखें। वहीं आपको सच्चा आनन्द और सुख मिलेगा।

(२८३)

आपके अनुभव बड़े अर्थपूर्ण हैं, पर यह हमेशा याद रखें कि अन्तर में अपने सतगुरु के सिवाय किसी दूसरे स्वरूप या आत्मा पर आपको न तो कोई ध्यान देना चाहिये और न ही उसका मार्गदर्शन स्वीकार करना चाहिये। अन्य समस्त स्वरूपों या आवाज़ों की ओर ध्यान न दें और सुमिरन पर अधिक ज़ोर दें। कभी-कभी मन हमारा ही रूप धार कर हमारे सामने आ जाता है। उस की ओर कोई ध्यान नहीं देना चाहिये। अपना पूरा ध्यान तीसरे तिल पर एकाग्र रख कर करते रहें और अन्तर में दिखाई देने वाले स्वरूपों या दृश्यों कोई ध्यान न दें। मन काल का एक शक्तिशाली शस्त्र है, और सत्संगियों को ठगने के लिये अपनी इच्छानुसार कोई भी रूप धारण कर सकने की उसमें शक्ति है। आपने अपने सतगुरु को देखा है, उन के स्वरूप को पहचानते हैं और उसके असल होने न होने की कसौटी भी आपको मालूम है। आपको चाहिये कि उस स्वरूप के सिवाय और किसी का ध्यान न करें। प्रेम, लगन और नम्रता के साथ अपना भजन करते रहें, और आप धोखा नहीं खा सकेंगे। मैं आपसे बहुत प्रसन्न हूँ।

(२८४)

जीवन की समस्याओं के बारे में चिन्तित न हों। ये हमेशा बनी रहेंगी। जीवन की अच्छी और बुरी, दोनों ही वस्तुएँ हमें इस सृष्टि से बाँधे रखती हैं। हमें मन को ऐसा बना लेना चाहिये कि संसार के सारे काम हम केवल कर्तव्य समझ कर करते रहें। सबसे ज़रूरी काम अपनी आत्मा को अन्तर में शब्द के साथ जोड़ना है। हमारे सारे प्रयत्न इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिये होने चाहियें।

(२८५)

आपने अपने भजन-सुमिरन के बारे में जो लिखा है, उसे पढ़कर मुझे ख़ुशी हुई। अन्तर में आप जो कुछ देखें या सुनें, उसकी ओर

अपने मन में लगाव न रखते हुए कृपया अपना अभ्यास जारी रखें। ध्यान को पूरी तरह तीसरे तिल पर स्थिर रखते हुए सुमिरन में उस समय तक लगे रहें, जब तक अन्तर में आपको आकाश दिखायी न दे। उसके बाद सूर्य और चन्द्र के मण्डलों को पार करके वहाँ पहुँचें, जहाँ सतगुरु का दिव्य शब्द स्वरूप आपकी प्रतीक्षा कर रहा है। इस स्वरूप को प्रकट करना शिष्य का प्रथम लक्ष्य है, और यह सुमिरन और ध्यान के द्वारा होता है। जिन अनुभवों का वर्णन आपने किया है, वे बहुत सुखद और अर्थपूर्ण हैं। प्रेम और भक्तिपूर्वक अपना अभ्यास करते रहें।

(२८६)

सतगुरु के चेहरे और नेत्र की मानसिक छवि बनाने और जैसा आपने उन्हें पिछली बार देखा था उसी तरह उन्हें देखने की कोशिशों में स्वाभाविक तौर पर आपका ध्यान तीसरे तिल से हट जायेगा। आप का मन सतगुरु का चित्र बनाने में लग जायेगा और सुमिरन से ध्यान हट जायेगा। इससे सुमिरन यंत्रवत हो जायेगा और आप तीसरे तिल से हट जायेंगे। अपने मन को सतगुरु के स्वरूप या नेत्र के ऐसे चित्र बनाने में न लगायें। यदि आप इस प्रयास के बिना सतगुरु के स्वरूप की कल्पना नहीं कर सकते, तो बेहतर होगा कि इसे आप छोड़ दें और तीसरे तिल पर एकाग्रता रख कर अंधकार में देखते हुए सुमिरन करने की कोशिश करें।

सुमिरन के सिवाय मन को किसी अन्य काम में नहीं लगाना चाहिये। तीसरे तिल पर ध्यान जमा कर सचेत होकर सुमिरन करना चाहिये। जब एकाग्रता बढ़ती है और जब चेतनता शरीर के निचले भागों से सिमट कर तीसरे तिल के पार चली जाती है, तब सतगुरु का शब्द-स्वरूप स्वयं ही प्रकट हो जाता है।

तीसरे तिल पर एकाग्रता को जमाये रखने में ध्यान सहायक होता है। परन्तु इस ध्यान के समय मन यदि दूसरी बातों में लग जाये और सुमिरन तथा तीसरे तिल से ध्यान हट जाये, तो अ-

यह होगा कि उस समय ध्यान करना बन्द कर दें और सुमिरन पर ही ज़ोर दें। ख़ास चीज़ सुमिरन है जो कि चेतनता को शरीर के निचले भागों से समेट कर तीसरे तिल और उसके पार ले जाता है।

(२८७)

आप लोगों में से कुछ को सुमिरन के समय नामों का उच्चारण करने में जो कठिनाई महसूस होती है, उसे मैं अच्छी तरह समझता हूँ। शुरू में आप उन्हें धीरे-धीरे दोहरायें ताकि आप उन्हें उचित गति तथा सही रीति से दोहराने में कुशल हो जायें। नाम दोहराने की गति या उनका उच्चारण इतने महत्वपूर्ण नहीं हैं जितनी कि मन की एकाग्रता। जब आप कुछ समय तक प्रतिदिन, और यदि सम्भव हो तो हर समय, धीरे-धीरे नामों का जप करने लगेंगे तो आपको पता लगेगा कि यह सुमिरन अपने आप होने लगा है और बातचीत या कामकाज करते समय भी चल रहा है। यहाँ तक कि आपकी निद्रावस्था में भी यह अपने आप चलता रहेगा।

(२८८)

आपने जो अनेक पत्र मुझे लिखे हैं, वे मुझे मिले हैं। आप के प्रेम और भक्ति की मैं बहुत सराहना करता हूँ, पर जैसा कि एक पत्र में पहले ही समझाया जा चुका है, सन्तमत में इस प्रेम और भक्ति को हमें अपने अन्तर में ही हज़म करना चाहिये। आपका समुचा तन-मन इस भक्ति से तर-बतर हो जाना चाहिये, फिर जब हृदय भरा रहता है तो शब्द नहीं निकलते। जब हम इस निधि को अपने अन्दर ही रखने की कोशिश करते हैं, और इसे अपने रक्त और हड्डियों में समा लेते हैं, तब परमात्मा हम पर अपनी दया और मेहर की और अधिक वर्षा करता है। इसके विपरीत, अगर हम भावना के जोश में—बोलकर अथवा लिखकर—इसे खर्च कर डालते हैं, तो परमात्मा इस दात को और देना पसन्द नहीं करता।

भक्ति को बाहर, बोल कर प्रकट करने में मन बहुत प्रसन्न होता है, क्योंकि इससे मन को एक ऐसा काम मिल जाता है जो उसे बहुत

पसन्द है। इस तरह मन बाहरी संसार में लगा रहता है, वह और भी अधिक उत्तेजित, सक्रिय तथा चंचल हो जाता है और यही वह चाहता है। इसके विपरीत, हमें इसे अन्तरमुख करना है, तीसरे तिल पर स्थिर और अडोल रखना है। कृपया याद रखें कि सन्तमत में भजन-सुमिरन के जितना और किसी वस्तु का महत्व नहीं है। केवल ये ही वस्तुएँ हैं जिनकी हमें आवश्यकता है और जो अन्त में हमारी मदद करेंगी।

यह सब लिखने का उद्देश्य पत्र लिखने से आपको रोकना नहीं है; अगर जरूरी बात हो तो आप अवश्य लिख सकते हैं। मैं केवल यह चाहता हूँ कि प्रेम और भक्ति की दात को अपने भीतर अच्छी तरह सँभाल कर रखें और इसको एक फिजूलखर्च की तरह उड़ा न दें। प्रतिदिन भजन-सुमिरन में और अधिक समय लगायें और देखेंगे कि इससे कितना आनन्द मिलता है।

(२८९)

शब्द को सुनते समय, बाँयीं ओर से आने वाली आवाज़ पर बिलकुल ध्यान न दें। यदि बाँयी ओर से आने वाली आवाज़ तेज़ हो और बंद न होती हो तो कभी-कभी सिर्फ बायें कान पर अंगूठे के दबाव को कम करने से वह दूर हो जाती है। यदि इस पर भी वह आवाज़ बन्द न हो तो बायें कान पर से अंगूठा हटा लें। यदि इसके बाद भी वह आवाज़ कायम रहे तो कुछ समय के लिए शब्द का सुनना बन्द कर दें और उसके बदले सुमिरन पर बल दें। थोड़ी देर के लिए शब्द को सुनना बन्द करना भी बाँयीं ओर की आवाज़ को बन्द करने में सहायक होता है। इस सम्बन्ध में चिन्तित न हों। तीसरे तिल पर एकाग्रता रखकर सुमिरन को अधिक ज़ोर दें।

(२९०)

आप दूसरे व्यक्ति की आँखों से अपने अन्तर में कुछ भी नहीं देख सकते। आप के भीतर क्या है, इसे देखने के लिए आपको अपनी

आन्तरिक आँख खोलनी होगी। मन के व्यर्थ बहकावों में न आयें, क्योंकि इससे केवल आपकी प्रगति में रुकावट ही होगी।

(२९१)

माता-पिता और बच्चों का एक दूसरे के प्रति कुछ कर्तव्य होता है। यदि माता-पिता बिना किसी कठिनाई के आपकी सहायता कर सकते तो ऐसा करने में उन्हें खुशी ही होती। यदि वे आपको कोई आर्थिक सहायता पहुँचाने की स्थिति में न हों, तो आप उन्हें कोई तकलीफ देना पसन्द नहीं करेंगे। उस दशा में यह आपका कर्तव्य हो जाता है कि जो कुछ उधार लिया है, उसे उन्हें वापस अदा कर दें ताकि उन्हें किसी प्रकार की परेशानी का सामना न करना पड़े। इस बारे में परिस्थितियों के सभी पहलुओं पर विचार करने के बाद आप उचित निर्णय ले सकते हैं। जब आप "उधार" लफ़्ज़ का प्रयोग करते हैं तो इसका मतलब है कि आप यह पैसा वापस करना चाहते हैं।

आत्मा सचखण्ड में पहुँचने के बाद परमात्मा का अंग बन जाती है और जब वह इस पृथ्वी पर वापस आती है, तो कर्मों के चक्र में नहीं उलझती। ऐसा व्यक्ति कर्म नहीं करता, क्योंकि तब वह कर्मों का स्वामी हो जाता है, और कर्मों का दास नहीं रहता, जैसा कि वह अभी है। मन और माया के दायरे से पार जाने के बाद ही हम अहंकार से ऊपर उठ सकेंगे।

(२९२)

काम-वासना और प्रेम अलग-अलग बातें हैं। प्रेम एक श्रेष्ठ और ऊँची पवित्र भावना है। पुरुष और नारी के बीच विवाह की व्यवस्था का ध्येय वंश-वृद्धि करना और काम की प्राकृतिक प्रवृत्ति की सन्तुष्टि करना है। यह इसलिए नहीं कि स्वास्थ्य तथा सभ्यता के सब नियमों को एक तरफ़ रखकर कोई अपनी पाशविक प्रवृत्तियों को तृप्त करने में अनियंत्रित ढंग से लगा रहे।

केवल इन्द्रियों की भोग-विलास की इच्छाओं की तृप्ति में आवश्यकता से अधिक लगे रहना ही काम-वासना है और यह एक पाप

है। प्रेम, शरीर की आवश्यकताओं की पूर्ति का नाम नहीं, यह दो व्यक्तियों के मन और आत्मा का मिलन है। काम आपको नीचे की ओर खींचता है और आपके विचारों को निचले केन्द्रों में ले जाता है, जब कि हमें अपना ध्यान शरीर के ऊँचे केन्द्रों में, विशेषकर तीसरे तिल पर ले जाना है। प्रेम में, बिना किसी प्रतिफल या बदले में कुछ पाने की इच्छा के हम प्रियतम को अपना सर्वस्व समर्पित करने की कामना करते हैं। परमात्मा को प्रेम कहा जाता है, जिसे हम बदले में कुछ भी पाने की आशा के बिना ही अपना सर्वस्व दे देना चाहते हैं।

(२९३)

आपने जो लिखा है उसे सावधानीपूर्वक पढ़कर मैं इस नतीजे पर पहुंचा हूं कि आपको जीवन के प्रति एक सहज और सरल रुख अपनाने की आवश्यकता है। आप अब नाम प्राप्त कर चुके हैं और जिस मार्ग से अन्तर में जाना है वह आपको बताया जा चुका है, इसलिये आपको चाहिये कि 'ज़ेन[1] गुरुओं' तथा अन्य गुरुओं की चिन्ता में न पड़ें। ग्रह-समूहों के कार्यों तथा इनके प्रभावों के झंझट में हम क्यों पड़ें? संसार में इन बातों में पड़ने वालों का कोई अन्त नहीं है। इनकी चर्चा में पड़कर हम अपने मन को और अधिक उलझा देंगे। सन्तमत में तो हमें अपने ख़याल को अपने आस-पास के वातावरण और स्थूल जगत से हटाकर पूरी तरह तीसरे तिल पर एकाग्र करना है। यदि हमारा मन ऐसे प्रश्न और शंकायें उठाता रहेगा तो, एकाग्र होने के बदले, वह इस संसार में अपनी जड़ें और फैलायेगा और बाहरी दुनिया पर इसकी पकड़ और मजबूत होती जायेगी।

भोजनालय इत्यादि में हुए आपके अन्य अनुभवों का भी कोई खास महत्व नहीं है। ऐसे प्रश्नों से, जो आपके किसी काम के नहीं है, कृपया अपने मन में उलझन पैदा न करें। ये केवल मन के भुलावे हैं। आपको बताये गये आन्तरिक मार्ग में आप जैसे-जैसे आगे बढ़ेंगे, वैसे

१. जापानी पद्धति के अनुसार ध्यान करने की विधि सिखाने वाले।

ही ये तमाम सन्देह और भय मिट जायेंगे और आपको परम आनन्द और शान्ति का अनुभव होगा।

आपको यह बताना ज़रूरी है कि आन्तरिक मार्ग में प्रगति के लिये मनुष्य का चरित्र बेदाग़ होना जरूरी है, और काम-वासना और सब ओछे विचारों से दूर रहना चाहिये। काम-वासना में फँसे रहना और प्रभु के दर्शन करना, ये दोनों बातें एक साथ नहीं हो सकतीं।

चित्रकला जैसे सांसारिक कार्यों में भी एकाग्रता और मानसिक शान्ति आवश्यक है। अगर आप मानसिक रूप से उत्तेजित और अशान्त हैं तो एक अच्छा चित्र कैसे बना सकते हैं ? चित्रकला का मतलब है कि सौन्दर्य का बोध और उसका संतुलन, और यह तभी संभव है जब कि आपके मन में उच्च विचार और भव्य भावनाएँ हों।

(२९४)

सच्चे सत्संगी की जीवन-प्रणाली में सभी-निरोधक वस्तुओं के उपयोग का प्रश्न ही नहीं उठता। आवश्यक संख्या में बच्चे हो जाने के बाद एक सत्संगी के लिये काम में उलझना कोई मानी नहीं रखता। पर यह पति और पत्नी दोनों की आपसी सहमति पर निर्भर करता है। मैं आपके पति के साथ आपके सम्बन्धों में दख़ल नहीं देना चाहता। पारिवारिक मेल में किसी भी दशा में दरार नहीं पड़नी चाहिये।

(२९५)

आप उस महिला के बारे में पूछ रहे हैं, जिसे हुज़ूर महाराजजी (महाराज सावनसिंहजी) ने नामदान के लिए स्वीकार कर लिया था, पर जिसने उनका या उनके उत्तराधिकारी सरदार बहादुर जी, दोनों में से किसी का भी दर्शन नहीं किया, और जिसे बाद में पाँच पवित्र नाम सरदार बहादुर जी ने प्रदान किये। वर्तमान गुरु ने, जिनके दर्शन वह कर चुकी है, उसे शब्द प्रदान किया। वह यदि मौजूदा सतगुरु के स्वरूप का ध्यान करती है तो कोई हरज नहीं, क्योंकि आखिर सब गुरु एक ही हैं, और उनका असली स्वरूप शब्द ही है। जब अन्तर में गुरु के दर्शन प्राप्त करने की स्थिति आयेगी, तब जीवित सतगुरु का

स्वरूप उनके अपने सतगुरु के स्वरूप में लीन हो जायेगा। यह बात आप उसे समझा सकते हैं।

(२९६)

सतगुरु को स्वप्न में देखना अच्छा है, किन्तु हमें जाग्रत अवस्था में अपने अन्तर में उनके दर्शन करने का प्रयास करना चाहिये।

हताश न हों। काम-वासना काल की एक चाल है। यह उसका एक ज़बरदस्त हथियार है। इससे सावधान रहें।

(२९७)

सत्संगी की मृत्यु के समय कमरे में केवल नाम प्राप्त किये हुए लोगों को ही रहना चाहिये; परन्तु इस सलाह का पालन केवल वहीं तक करना चाहिये जहाँ तक कि सम्भव हो। किसी परिवार में यदि कोई सत्संगी न हो, तो कुछ नहीं किया जा सकता। मतलब केवल यह है कि अन्तिम क्षण में मरने वाले व्यक्ति को यह याद दिलाना चाहिए कि वह शब्द और सतगुरु के बारे में सोचे तथा सांसारिक वस्तुओं या बातों का सोच-विचार न करे। मरने वाले व्यक्ति को इस तरह सत्संगी काफी सहायता पहुँचा सकते हैं। मरने वाले व्यक्ति के अन्तिम विचार अत्यन्त महत्वपूर्ण होते हैं। अगर मृत्यु के समय वह इस संसार के पदार्थों और शक्लों के बारे में सोचता रहेगा तो सम्भव है कि इन लगावों के कारण उसे वापस जन्म लेना पड़े। इसके विपरीत, यदि वह शब्द और सतगुरु का चिन्तन करेगा तो वह उसी दिशा में जायेगा। ग़ैर-सत्संगी इस संसार की वस्तुओं की बात करेंगे और इस प्रकार वे उसके ध्यान को अन्तर में शब्द की ओर जाने देने के बदले बाहर की ओर खींचेंगे।

पर इस बारे में परेशान न हों। अगर हम मन में लगातार सुमिरन करते रहें और सतगुरु तथा शब्द की याद बनाये रखें तो स्वाभाविक ही हमारे अन्तिम क्षणों में ये ही विचार हमारे मन में सब से आगे रहेंगे। इसीलिए रोज़ भजन-सुमिरन करते रहना आवश्यक है।

(२९८)

जहाँ तक पहरावे या वेश-भूषा का सवाल है, मैं दाढ़ी या मूछों के विरुद्ध नहीं हूँ। मेरी राय में किसी को अपना वेश तथा रूप ऐसा नहीं बनाना चाहिए जिससे वह असाधारण अथवा औरों से अलग कुछ विशेष दिखाई दे। ऐसा न हो कि दूसरों को उसके बारे में तिरस्कारपूर्वक बातें करने के लिए एक बहाना मिल जाए, और लोग या तो खड़े होकर उसे घूर कर देखें या नापसंदगी से अपना मुंह फेर लें। अपने मनमौजी रूप अथवा पहरावे के कारण बहुत ज़्यादा ध्यानाकर्षक होना न तो उचित है और न शोभनीय।

मनुष्य को अच्छी पोशाक पहनना चाहिए और लोगों के सामने ठीक रूप में आना चाहिए। बेशक, स्वच्छता तो ज़रूरी है ही। संसार में हरएक सभ्य व्यक्ति के लिए यह बहुत ज़रूरी है। सन्तमत में पहरावे तथा रूप के सम्बन्ध में कोई विशेष या अलग नियम नहीं हैं, लेकिन सामान्य शालीनता के ख़याल से यह ज़रूरी है कि मनुष्य इस ढंग से रहे कि किसी भी समाज में कहीं भी उसे तिरस्कार या नापसन्दगी का पात्र न बनना पड़े।

(२९९)

'प्रसाद' आशीर्वाद से भरा है और श्रद्धा तथा भक्ति के साथ इसको लेने से लाभ होता है। इसका महत्व या प्रभाव इसे लेने वाले के रुख पर निर्भर करता है। यह हमें सतगुरु तथा उसकी कृपा की याद दिलाता है। यह हमें सतगुरु की याद दिलाता है, इसलिए इससे मिलने वाले अप्रत्यक्ष लाभ अथवा ऐसे लाभ जिनका हमें पता नहीं चलता, भी अनेक हैं।

(३००)

सतगुरु क्या-क्या करते हैं, और नाम देते समय उनसे कोई गलती हो जाती है या नहीं, इन सब बातों की आप चिन्ता न करें। इन चीज़ों से आपको परेशान नहीं होना चाहिए। यह तो कुछ लोगों का मार्ग से भटक जाने के लिए एक बहाना मात्र है। ऐसे लोग जो काम

मना हैं, उन्हें तो करते हैं और जवाबदारी सतगुरु पर थोपते हैं। सतगुरु के पास केवल चुनी हुई आत्माएँ ही आती हैं, और गलती करने का सवाल ही नहीं उठता। ऐसे विचारों से अपने मन को भ्रमों में न उलझायें और गलत काम करने के लिये कोई बहाना ढूंढने की कोशिश न करें। अपने अन्दर प्यार और भक्ति जाग्रत करें, जो भजन-सुमिरन से प्राप्त हो सकेंगे।

(३०१)

आपकी भेजी सामग्री को मैंने ध्यानपूर्वक पढ़ा। इसमें उठाये गए प्रश्न के बारे में मैं केवल यही कहना चाहता हूं कि सन्तमत में भोजन तथा औषधि की ऐसी सब चीजें मना हैं जिनमें मांस, अण्डे आदि पदार्थ किसी भी रूप में मिलाये गये हों। इनका उपयोग नहीं करना चाहिए। इन चीजों को लेने से कर्मों का बहुत भारी बोझ उठाना पड़ता है। इसलिए सामिष या मांसाहारी भोजन तथा मदिरा-पान की सन्त कभी इजाजत नहीं देते।

यह केवल एक भ्रम है कि एक विशेष प्रकार की दवा लिए बिना हम स्वस्थ नहीं हो सकते, क्योंकि सन्तमत की दृष्टि से हमारा सम्पूर्ण जीवन—छोटी से छोटी बात तक—हमारे जन्म लेने के पूर्व ही निश्चित हो चुका है। यह प्रारब्ध या भाग्य बदला नहीं जा सकता और सबको इसे भुगतना पड़ता है। बीमारियों में दवाइयां तो केवल मन के सन्तोष के लिए ली जाती हैं। यह समझना कि एक विशेष औषधि के सिवाय कोई और दवा कारगर नहीं होगी, हमेशा सही नहीं होता। फिर, आत्मा के कल्याण का प्रश्न भी तो है, जिसे शरीर के कल्याण की बनिस्बत सन्त कहीं अधिक महत्व देते हैं। इसलिए आपको मेरी सलाह है कि ऐसी औषधियों को न लें।

(३०२)

आपके प्रेम और लगन की मैं सराहना करता हूं। कृपया याद रखें कि सतगुरु अपने प्रत्येक शिष्य के साथ हमेशा रहते हैं। यदि आप अपने अन्दर में उसे प्रकट कर लें, तो वह हमेशा आपके सामने रहेगा

और आपसे बातचीत करेगा। भजन-सुमिरन ही महत्वपूर्ण है, और इसे आप हर जगह कर सकते हैं। भजन-सुमिरन, प्रेम, भक्ति और विश्वास के सिवाय और कोई चीज़ काम नहीं आती। आप डेरे में नहीं हैं और यहां नहीं आ सकते, इस बात को लेकर दुःखी न हों। जहाँ तक भजन सुमिरन का सम्बन्ध है, इससे कोई अन्तर नहीं पड़ता।

(३०३)

कृपया याद रखें कि आप जहाँ कहीं भी हों परमात्मा सदैव आपके साथ है। उसे भूलना नहीं चाहिये। हमें उसके प्रति अपने कर्तव्यों का पालन हमेशा एक-चित्त होकर लगन के साथ करना चाहिये, और जीवन में किसी भी वस्तु से प्रभावित होकर हमें इस महत्वपूर्ण कार्य से विचलित नहीं होना चाहिए।

(३०४)

जीवन में हमें जिन आज़माइशों और तकलीफ़ों का सामना करना पड़ता है, उनके कारण हमें कभी दुःखी या हताश नहीं होना चाहिए। वे हमारे इस जीवन के अंग हैं और हमें परमात्मा पर विश्वास रखते हुए साहस के साथ उनका सामना करना चाहिए। सभी मानसिक और शारीरिक बीमारियों में चिकित्सक की सलाह के अनुसार काम करना हमारा कर्तव्य है। जो भी अच्छा से अच्छा हम कर सकें, करना चाहिए, और बाकी सब परमात्मा पर छोड़ देना चाहिए। कोशिश करना हमारा कर्तव्य है, परन्तु नतीजा उसके हाथ में है।

चिन्ता न करें क्योंकि चिन्ता से कोई फ़ायदा नहीं होगा और जैसा होने वाला है, उसमें कोई परिवर्तन भी न होगा। वास्तव में चिन्ता स्थिति को ज़्यादा खराब कर देती है। परमात्मा में विश्वास रखते हुए हमें जीवन में हर चीज़ का ठण्डे और शांत मन से सामना करना चाहिए। इससे हमें मानसिक स्थिरता मिलेगी जो हमारे स्वास्थ्य के लिए बहुत ज़रूरी है। अपनी मानसिक स्थिरता को कभी न बिगड़ने दें। परमात्मा में विश्वास रखते हुए तनाव-रहित जीवन व्यतीत करें।

(३०५)

कृपया इस बात की चिन्ता न करें कि अगर सब लोग शाकाहारी हो जायें तो संसार का क्या होगा । सारा संसार शाकाहारी होने वाला नहीं है । मालिक यह नहीं चाहता कि हर व्यक्ति उनके पास वापस पहुंच जाए । ऐसे-ऐसे ख़याली सवालों को लेकर फ़िज़ूल परेशान न हों । पशु, पक्षी आदि की रचना मनुष्य की ख़ुराक के लिए नहीं की गयी है । परमात्मा की सृष्टि की योजना में उनका अपना अलग प्रयोजन है ।

जहाँ तक काम-वासना का प्रश्न है, यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि हम अपनी सच्चरित्रता में ढीले हो रहे हैं और जीवन के तमाम नैतिक मूल्य गिरते जा रहे हैं । काम का उद्देश्य वंश-वृद्धि है, न कि पाशविक वासनाओं की तृप्ति । विवाह एक पवित्र वस्तु है । उसकी पवित्रता आपके कथित 'विवाह के पूर्व के सम्बन्धों' के द्वारा नहीं बिगड़नी चाहिए । ये काम के अनुभव, शरीर और आत्मा दोनों के लिए अच्छे नहीं हैं । अपने विचार जीवन की अच्छी और ऊँची बातों की ओर मोड़ें ।

(३०६)

नामदान के समय जो आपको पाँच देवताओं के नाम बताए गए हैं, उनके प्रति एक सूफ़ी मार्ग में शिक्षित मुसलमान होने के नाते आप को जो एतराज है उसे मैं समझता हूं । जिज्ञासुओं को मैं हमेशा यह सलाह देता हूं कि नाम के लिए लिखने से पहले वे सत्संग को अच्छी तरह पढ़ और समझ लिया करें । अगर आपने ऐसा किया होता तो आज यह कठिनाई पैदा नहीं होती ।

सन्तों का मार्ग, राधास्वामी शिक्षा, अथवा सुरत-शब्द योग, जैसा कि हम इस विज्ञान को कहते हैं, इस बात में विश्वास नहीं करता कि परमात्मा एक से अधिक है । बाइबिल में कहा गया है, "शुरू में शब्द था और शब्द परमात्मा के साथ था और शब्द परमात्मा था । वही शुरू में परमात्मा के साथ था । सब वस्तुओं का निर्माण उसके (द्वारा) हुआ, और जो भी वस्तु बनी, उसके बिना नहीं बनी ।"

शब्द को आप दिव्य मधुर ध्वनि, सुनाई देन वाली जीवनधारा, अनहद शब्द, कलामे-इलाही, निदाए-आसमानी, इस्मे-आज़म, कुन, लोगास, टाओ या कोई अन्य नाम दे दें। इस शब्द ने ही सारी सृष्टि की तथा उस स्वरूप की रचना की है जिसमें सृष्टि के निर्माण के बाद सब से पहले परमात्मा खुद प्रकट हुआ। परमात्मा सारी सृष्टि में रम रहा है। वह इस दिव्य ध्वनि के रूप में जगत के कण-कण में व्याप्त या मौजूद है, और यही ध्वनि हर मनुष्य के अन्दर, आँखों के उस केन्द्र या 'तीसरे तिल' में गूंज रही है, जिसे फ़ारस के सूफी सन्त 'नुक्ताए-सुवैदा' कहते हैं।

मालिक, खुदा, रब्ब, परमपिता, परमात्मा — चाहे जो भी नाम आप उसे दें — वह ताकत है जो यहां, वहाँ, सब जगह मौजूद है। वह पूर्ण है, और सोच-विचार या अन्दाज़ के परे है, अपने आप में रमा हुआ, अजन्मा, सर्वशक्तिमान और एक ही है। कोई दूसरा नहीं है और न किसी दूसरे के लिये कोई गुंजाइश ही है। वह समस्त तुलनाओं से परे है और किसी भी तरह से किसी से जुड़ा हुआ नहीं है। वह एक और अनेक के भेद की सीमा से बाहर है। वह सब तरह से लाबयान या वर्णन से परे और सिफ़तों या गुणों की हद से ऊपर है। मौलाना रूम का कथन है, 'उसका कोई नाम नहीं ; उसे जिस नाम से भी पुकारो, वह जवाब देता है।' जितनी चीज़ों की हम कल्पना कर सकते हैं, उन सब से परे होते हुए भी वह उनमें से हरएक में मौजूद है, और सबके साथ है। वह स्वयं ही सर्वेसर्वा है। उसके सिवाय कुछ है ही नहीं। वह परम शक्तिमान परमात्मा है, जिसकी सन्त चर्चा और वंदना करते हैं। आपका ख़याल दुरुस्त नहीं है, उसके विपरीत सन्तमत अनेक परमात्माओं में विश्वास नहीं करता। सन्त-मत केवल एक परमात्मा को मानता है।

सुमिरन के लिए जो पाँच नाम आपको दिए गए हैं, वे कोई अलग-अलग परमात्माओं के नाम नहीं हैं। इसे इस तरह समझने की कोशिश करें : आप के पास एक विशाल देश है, जो अलग-अलग प्रान्तों या

राज्यों में बँटा हुआ है । पूरे देश का शासन एक बादशाह चला रहा है जिसने विभिन्न राज्यों में उन की देख-रेख करने के लिए अपने राज्यपाल अथवा उच्च राज्याधिकारी नियुक्त कर रखे है । ये सब राज्यपाल अपनी शक्ति और अधिकार उसी एक बादशाह से प्राप्त करते हैं, जो पूरे देश का शासन चला रहा है और जो अन्तिम तथा एकमात्र मालिक है । वही सर्वेसर्वा है और राज्यपाल अपने सौंपे हुए क्षेत्रों में उसकी आज्ञा का पालन-मात्र करते हैं । अपने रूहानी सफ़र में अन्दर हमें ऐसी अनेक मंज़िलों से गुज़रना पड़ता है । हर मंज़िल का शासन परमात्मा से अधिकार प्राप्त एक राज्यपाल या अधिकारी के द्वारा चलाया जाता है । इस स्थूल जगत की व्यवस्था भी काल द्वारा की जाती है। वह भी उस परमपिता के हुक्म से ही कार्य करता है । बाइबिल का भी कथन है, "मेरे पिता के घर में अनेक महल हैं।" एक रहस्यवादी सन्त का कहना है, "आपके भीतर इतने विशाल समुद्र और मैदान है कि उनके बारे में कल्पना भी नहीं की जा सकती । यह संसार अन्दर के विशाल सागर में एक बूंद के बराबर है । हर मंजिल का अपना अलग आकाश है और एक मंजिल से दूसरी में चढ़ने के लिये सीढ़ियाँ हैं ।"

जिन प्रदेशों से हमें गुजरना है उनके राज्यपालों अथवा शासकों के नामों का सुमिरन करने के पीछे यह भावना है कि हम उनसे परिचित हो जायें, और जब हम अपनी आन्तरिक आध्यात्मिक यात्रा के दौरान उनसे मिलें तो वे हमें पहचान लें । जब हम उनके नाम का सुमिरन करते हैं, तब वे अपने देश से बहुत आराम और सुगमता के साथ गुजरने में हमारी सहायता करते हैं । जैसा कि आप सोच रहे हैं, ये पाँच नाम पाँच ऐसे देवताओं के नाम नहीं हैं जिन पर सन्तों की आस्था है, किन्तु ये हमारे रास्ते में आने वाले क्षेत्रों के राज्यपाल अथवा अधिकारी हैं । जैसा ऊपर समझाया जा चुका है, परमात्मा एक और केवल एक ही है । उसका कोई शरीक या साझीदार

सुरत-शब्द-योग, शब्द या सुलतान-उल-अज़कार (सब सुमिरनों का राजा) का अभ्यास करने के लिये चार बातें बहुत ज़रूरी हैं :

१. सतगुरु (मुर्शिदे-कामिल)

२. सुमिरन (जप या ज़िक्र)

३. ध्यान (तस्सवुर)

४. भजन (अन्तर में दिव्य-ध्वनि को सुनना)।

पहली अवस्था सुमिरन है जिसके द्वारा आँखों से नीचे के शरीर की समस्त चेतनता को समेटकर तीसरे तिल पर लाना है। इसके बाद है अन्तर में उस ध्वनि के साथ जुड़ना जो मन और आत्मा को खींच कर ऊपर के मण्डलों में ले जाती है। मन दूसरी मंज़िल पर, जिसे मुकामे-अल्लाहू कहते हैं, सदा के लिये छूट जाता है और आत्मा पाँचवीं मंज़िल (मुकामे-हक़) में समा जाती है।

मैंने आपकी ही पृष्ठभूमि के अनुसार सारी बातें विस्तारपूर्वक समझाने की कोशिश की है, और मुझे आशा है कि जिन विषयों को आपने उठाया था उनके बारे में अब आपका कोई सन्देह बाकी नहीं रहा होगा। नामदान के समय बताये गये तरीके से प्रेम और भक्ति के साथ अब आप अपना भजन-सुमिरन कृपया नित्य किया करें।

(३०७)

अभ्यास के समय शरीर में होने वाली कँपकपी से कृपया परेशान न हों। ऐसा कभी-कभी उन सत्संगियों के साथ होता है जो इस जन्म में या किसी पिछले जन्म में निचले चक्रों से सम्बन्धित कुछ योगिक क्रियाएँ किया करते थे। एकाग्रता के पक जाने पर यह अपने-आप मिट जायेगी। यह केवल 'प्राणों' की क्रिया है जो धीरे-धीरे अपने आप समाप्त हो जायेगी। चलते-फिरते, प्रतीक्षा करते, खाते तथा स्नान आदि करते समय हमेशा अपने मन को सुमिरन में लगाये रखने की कोशिश करें।

अपना भजन-सुमिरन नियमित रूप से अवश्य करते रहें। आप

जानते ही हैं कि शान्ति, सुख, प्रेम और शक्ति का सच्चा स्रोत यही है, और इसी की हमें इस लोक तथा परलोक में आवश्यकता है।

(३०८)

मुझे यह सुनकर अफ़सोस हुआ कि अपने नए व्यवस्थापक के नीचे जिन प्रतिबंधों में आप को काम करना पड़ रहा है, उससे आप प्रसन्न नहीं हैं। कृपया याद रखें कि कोई भी अपमान, चाहे वह कितना ही बड़ा क्यों न हो, एक सच्चे मनुष्य को नीचे नहीं गिरा सकता, जब तक कि वह ख़ुद अपने आप को नीचा न समझे। आप तत्परता और ईमानदारी के साथ अपने कर्तव्य का पालन करते रहें। जब तक आप को कोई इतना ही अच्छा दूसरा काम न मिले, इसे न छोड़ें। मैं वहां की परिस्थितियों से परिचित नहीं हूँ, लेकिन आप वहां मौके पर हैं, अपना निर्णय स्वय कर सकते हैं। इस बारे में हर दृष्टि से विचार करने के बाद जैसा आपको उचित प्रतीत हो, वसा करें।

(३०९)

शरीर से चेतनता का जब सिमटाव होता है, तब हमेशा थोड़ी तकलीफ होती है, पर इससे किसी को परेशान नहीं होना चाहिये। जब कष्ट असहनीय हो जाय, तो आप या तो आसन बदल लें या थोड़ा सा टहल लें और फिर से भजन में बैठ जायें। इसमें सन्देह नहीं कि ऐसा करने से चेतनता वापिस शरीर के निचले अंगों में आ जायेगी, परन्तु धीरे-धीरे हर बार आप पहले से अधिक समय तक बैठ सकेंगे और इस तरह यह कष्ट पूरी तरह दूर हो जाएगा।

(३१०)

कबीर के जिन पदों का आपने उल्लेख किया है, उनमें उन्होंने यह उपदेश दिया है कि हम अपने हृदय में प्रेम और भक्ति उत्पन्न करें, क्योंकि प्रेम के बिना जीवन नीरस है। कबीर का मतलब यह नहीं है कि सच्चे प्रेम के बिना किया गया भजन-सुमिरन व्यर्थ जाएगा। भजन-सुमिरन कभी व्यर्थ नहीं जाता, परन्तु प्रेम और भक्ति पूर्ण हृदय के साथ किये गए अभ्यास का अधिक महत्त्व है यह प्रेम और भक्ति भी

भजन-सुमिरन से उत्पन्न होती है। इसलिए हमारे मन की दशा चाहे जैसी भी हो, हमें भजन-सुमिरन में लापरवाही नहीं करनी चाहिए। प्रेम और भक्ति की उत्पत्ति धीरे-धीरे होती है। भजन-सुमिरन में आप जितना अधिक समय देंगे, सतगुरु की उतनी ही अधिक दया आप को प्रेम और भक्ति के रूप में मिलेगी। सतगुरु आपके भीतर हैं और देख रहे हैं कि आप क्या कर रहे हैं। वे किसी की कमाई को अपने पास रोक कर नहीं रखते। सन्तमत निराशाओं अथवा असफलताओं का पथ नहीं है, यह एक हर्ष, सफलता और परमानन्द का मार्ग है।

(३११)

जहाँ तक आपके पिछले जन्म के बारे में आपके विचारों का सवाल है, हमें न तो ऐसी भावनाओं की छानबीन करनी चाहिये और न ही उन पर कोई ध्यान देना चाहिये। इसमें कई खतरे हैं। कभी-कभी पिछले जन्मों के पुराने मोह फिर से जाग उठते हैं, जो हमारे आज के जीवन में हमारी आध्यात्मिक प्रगति के लिये लाभप्रद नहीं हैं। कभी-कभी किसी पिछले जन्म में घटी अप्रिय घटनायें हमें दुःख और क्लेश देना शुरू कर देती हैं, हालांकि इस जन्म में वे कोई अर्थ नहीं रखतीं। भूतकाल के बारे में न सोचें, बल्कि आज और आने वाले कल पर ध्यान दें। इस जीवन का तथा नामदान का लाभ उठायें और जन्म-मरण के चक्र से छुटकारा पाने की कोशिश करें।

(३१२)

पति और पत्नी में से किसी एक की कोशिश से परिवार सुखी नहीं बन सकता, परिवार को सुखी बनाने के लिये कोशिश दोनों की होनी चाहिये। विवाह में काफ़ी त्याग करना पड़ता है। विवाह सफल हो उसके लिये बहुत-सी बातों को भुला देना और बहुत-सी बातों को माफ करना पड़ता है। हमें जीना है केवल अपने लिये ही नहीं, बल्कि दूसरे साथी के लिये भी। इसलिये हमें अपने अहंकार, सुख के साधन और ऐसी अनेक वस्तुओं का त्याग करना पड़ता है,

जिनसे विवाह के पूर्व हमारा लगाव था। विवाह में दोनों साथियों की ओर से आदान-प्रदान की भावना होनी चाहिये।

इस दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति को पैदा करने वाले कारणों को जानने के लिए आपको अपने हृदय को टटोलना होगा। आपका दिल यह बतायेगा कि भूल कहाँ हुई है। अगर हम चाहते हैं कि लोग हमें पसन्द करें तो इस संसार में, केवल विवाह के क्षेत्र में ही नहीं बल्कि जीवन के हर क्षेत्र में, हमें अपनी जटिलता और बुराइयों को दूर कर के दयालु, सौम्य, विनम्र तथा शालीन बनना होगा। अन्यथा संसार हमारी उपेक्षा करेगा, हम से मुख मोड़ लेगा, और हम हताश हो जायेंगे। परेशान न हों, क्योंकि परेशानी से किसी प्रकार का लाभ नहीं होगा। अपनी ओर देखने की कोशिश करें और पता लगायें कि आपसे भूल कहाँ हुई है। और फिर कोशिश करें कि वह गलती दोबारा न हो। अपनी दुर्बलताओं को जानने के लिए इस तरह का अपने आपको समझना बहुत जरूरी है, क्योंकि तभी हम अपने आपको सुधार सकेंगे और उन दुर्बलताओं पर विजय प्राप्त कर सकेंगे।

आपके पत्र में एक संतोषप्रद बात यह है कि भजन-सुमिरन अब आपको पहले से कुछ आसान लगने लगा है, और यह एक बड़ी बात है। भजन-सुमिरन को बाकी सब बातों पर प्राथमिकता या प्रधानता दी जानी चाहिए। अगर हम अपने इस कर्तव्य का पालन ठीक तरह से करेंगे तो बाकी बातों की चिंता नहीं, क्योंकि और सब बातें अपने आप सुधर जायेंगी। निश्चित समय पर नित्य नियमपूर्वक भजन-सुमिरन किया करें। जिस तरह निश्चित समय पर भोजन करने की पड़ी हुई हमारी आदत उस समय के आने पर हमारे अन्दर भोजन करने की इच्छा उत्पन्न कर देती है, उसी तरह भजन-सुमिरन के लिये निर्धारित समय के आने पर मन में खुद ही भजन करने की इच्छा पैदा हो जानी चाहिए, ताकि आप बैठने के लिए विवश या मजबूर हो जायें।

(३१३)

कृपया याद रखें कि किसी जीवित मार्ग-दर्शक के बताये बिना

किसी प्रकार के यौगिक अभ्यास के चक्कर में पड़ना एक भारी जोखिम की बात है, क्योंकि अन्तर में जब कोई बात काबू के बाहर हो जाती है तब शिष्य कष्ट झेलने के सिवाय और कुछ नहीं कर सकता। आन्तरिक शक्तियाँ बहुत प्रबल होती हैं और जब हम बिना उचित मार्ग-दर्शन प्राप्त किये, और बिना हृदय को निर्मल बनाये उन शक्तियों को, और विशेषकर कुण्डलिनी को, जगाते हैं तो ये अभ्यासी के जीवन को तबाह कर देती हैं। इसीलिए सन्तमत जीवित सतगुरु की उपस्थिति पर ज़ोर देता है और योगियों की तीसरे तिल से नीचे की तमाम शक्तियों को कोई महत्व नहीं देता। मनुष्य शरीर के अन्दर की इन निचली शक्तियों के साथ छेड़छाड़ करने से कुछ लाभ होने के बदले हानि ही अधिक होती है।

(३१४)

हमें कोई आध्यात्मिक अनुभव प्राप्त होते हैं या नहीं, इसकी चिन्ता नहीं करनी चाहिए। यह हमारा काम नहीं है। हमारा काम तो उस मालिक की प्रीति और भक्ति प्राप्त करने के लिये भजन-सुमिरन करते रहना है। क्या देना और कब देना, यह उसका काम है, हमारा नहीं। कृपया याद रखें कि भजन में लगाया गया आपका प्रत्येक क्षण आप के खाते में जमा होता है। मालिक के प्रति इस कर्तव्य के पालन में प्रेम और विश्वास के साथ लगे रहें।

(३१५)

जैसा आप सोचते हैं, केवल आप अकेले ही ऐसे सत्संगी नहीं हैं जो इस रूहानी मार्ग पर मेहनत और संघर्ष कर रहे हैं। हर व्यक्ति अपना बोझ ढो रहा है और इस मार्ग में संघर्ष कर रहा है। यह जान कर आपको दिलासा मिलना चाहिए कि आप सही पथ पर हैं और अब आपका हर कदम आपको आपके धाम की ओर ले जा रहा है। अब आपका जीवन अन्धकार में भटकता हुआ उद्देश्यहीन जीवन नहीं रहा। अब आप के पास एक ऐसा उद्देश्य और ऐसा ध्येय है, जिसके लिए आपको सब कुछ न्योछावर करने के लिए तैयार रहना चाहिए।

बेशक मन बहुत चंचल है, लेकिन हमें इसे वश में करना है और इसकी चंचलता पर काबू पाने का एक-मात्र साधन है—सुमिरन। दूसरे किसी अभ्यास का इस पर प्रभाव नहीं पड़ता। अगर एक बार मन को अन्तर में सुमिरन का रस आने लगे और यह शब्द की मीठी धुन का स्वाद ले ले तो यह वश में आ जाता है। यह हो जाए तो समझ लें कि आपने आधी लड़ाई जीत ली है। ज़रूरत है मेहनत तथा और अधिक मेहनत की। कृपया अभ्यास के समय को धीरे-धीरे बढ़ाने की कोशिश करें, और एक दिन का भी नाग़ा न होने दें। नियमितता बहुत ज़रूरी है।

(३१६)

मुझे यह जानकर खुशी हुई कि अपनी गंभीर बीमारी के समय भजन-सुमिरन में आपको ऐसे सुन्दर अनुभव प्राप्त हुए। यह सब आप के प्रेम और भक्ति, और परमात्मा की असीम कृपा का फल है। इस से यह स्पष्ट होता है कि यदि हम अपने कर्तव्य का पालन करते हैं और प्रभु पर पूर्ण विश्वास रखते हैं तो वह भी हमें कभी नहीं छोड़ता। परीक्षा की घड़ियों में उसकी दया-मेहर भी अधिक होती है।

(३१७)

आत्मा और मन के बीच हमेशा युद्ध छिड़ा रहता है क्योंकि आत्मा ऊपर जाना चाहती है और मन नीचे ही इन्द्रियों के सुखों में अटका रहना चाहता है। जब हम मन को वश में करके तीसरे तिल पर स्थिर कर लेंगे, तब यह युद्ध समाप्त होगा। यह हम भजन-सुमिरन के द्वारा कर सकेंगे। प्रेम और भक्ति के साथ रोज़ भजन-सुमिरन करें, मालिक की दया से विजय निश्चित है। किसी भी तरह से उदास या हताश न हों।

(३१८)

जब विवाहित हैं और आपकी पत्नी इतनी मधुर स्वभाव की है, फिर क्यों आप अपने मन को गलत दिशा में भटकने देते हैं? काम-वासना एक ऐसी बुराई है जो इन्सान को पतन की ओर ले जाती है, और जहाँ काम है, वहाँ मालिक के लिए कोई प्रेम और भक्ति नहीं

हो सकती। प्रकाश और अंधकार एक साथ नहीं रह सकते। जब भी ऐसे विचार आयें तो सुमिरन में लग जायें और अपने मन को अन्तर में मालिक की ओर मोड़ दें। अपने मन को सदा किसी उपयोगी काम में लगाए रखें। खाली मन शैतान का औज़ार होता है। सभी प्रकार के अनुचित विचारों से मन को दूर रखने में सुमिरन बहुत सहायक होता है।

(३१९)

कृपया याद रखें कि इस संसार में मनुष्य के पीछे पांच मनोविकार इसलिए लगे हुए हैं, कि वह आवागमन के चक्कर में फँसा रहे। हमें उनसे अच्छी तरह टक्कर लेनी है, और सदैव उन पर विजय प्राप्त करने की कोशिश करनी है। सतगुरु की दया से और भजन-सुमिरन में अपनी मेहनत के द्वारा आप धीरे-धीरे इन पर हावी हो सकेंगे। ये विकार कोई ऐसी चीज़ नहीं है, जिन पर सरलता से और बिना किसी संघर्ष के विजय पायी जा सके। कभी हताश न हों, बल्कि प्रेम और भक्ति से नित्य नियमपूर्वक भजन-सुमिरन को समय दें।

(३२०)

मेरा अपना विचार है कि सभी समस्यायें, और खास कर पति और पत्नी के बीच की समस्यायें, प्रेम और स्नेह के द्वारा सुलझायी जा सकती हैं। अगर आप दोनों अपने अहं को त्याग दें और 'भूल जायें और माफ़ करें' तथा 'जीयें और जीने दें' के सिद्धान्त पर चलें, तो आपके घर में कोई विसंगति या अशान्ति नहीं रहेगी। हम अपने साथी से आशा तो बहुत ज़्यादा करते हैं, लेकिन उसकी भावनाओं की कोई कद्र नहीं करते। इसके फलस्वरूप गम्भीर मतभेद और कलह की उत्पत्ति होती है।

भजन-सुमिरन के लिए पारिवारिक एकता या मेल-जोल बहुत ज़रूरी है और जहाँ तक हो सके इसे बिगड़ने नहीं देना चाहिए। एक दूसरे की भावना को समझने की और जिस ढंग से पति-पत्नी को रहना चाहिये, उस ढंग से प्रेम और एकता के साथ रहने की कोशिश

करें। मन को बेचैन करने वाले विचारों से अपने भजन-सुमिरन को न बिगाड़ें, बल्कि याद रखें कि जीवन में चढ़ाव-उतार आते ही रहते है। अपने ध्यान को तीसरे तिल पर जमायें और देखें कि वहां कैसा आनन्द भरा है।

(३२१)

अपने विवाहित जीवन-साथी के सिवाय किसी दूसरे से काम-सम्बन्ध प्रभु की दृष्टि में एक ऐसा पाप है जिसे माफ़ नहीं किया जा सकता। मैं तो केवल इतना ही सुझाव दे सकता हूं कि अब आप भजन सुमिरन में ज्यादा से ज्यादा समय लगायें, अपराध को दोबारा न करें और प्रभु से उसकी करुणा और दया के लिए प्रार्थना करें। यदि हमारे अन्दर अपने गुनाह के लिए अफ़सोस है और हम उसे नहीं दोहरायेंगे तो प्रभु भी हम पर दया करेगा, लेकिन यदि वह गुनाह बार-बार करते रहेंगे तो उसकी दया-मेहर नहीं पा सकेंगे।

यही कारण है कि सन्तमत सदा गृहस्थी-जीवन को पसन्द करता है, क्योंकि वैवाहिक जीवन में स्त्री-पुरुष की अनेक प्राकृतिक वृत्तियों की सहज ही पूर्ति हो जाती है। इन्द्रियों के किसी भी भोग में अति करना भी बहुत अनुचित है। कर्म और उसके फल का कानून बेरहम और कठोर है। छोटे से छोटे विचारों या कार्यों की हमें कीमत चुकानी पड़ती है, और कर्मों के स्वामी काल का हिसाब चुकाना पड़ता है। जैसा आप बोयेंगे, वैसा आप काटेंगे। तो फिर पहले से ही भारी बोझ को और अधिक भारी क्यों बनाये? अनन्त जन्मों के हमारे पाप पहले से ही हमें दबाए हुए हैं। अब सन्तमत में आने के बाद अपने कर्मों के द्वारा उस बोझ को और भारी बनाने के बदले हमें उसे हलका करने की कोशिश करनी चाहिए।

मैंने ज्यादा इसलिए लिखा है कि कहीं आप वापस धुरधाम पहुँचने की अपनी यात्रा को अधिक लम्बी और अधिक कठिन न बना लें। सन्तमत की शिक्षा पर सावधानीपूर्वक विचार करें और इसके ऊँचे सिद्धान्तों के अनुसार जीने की कोशिश करे।

(३२२)

लोगों की आध्यात्मिक प्रगति में सतगुरु सहायता कर सकते हैं, पर उन सबको संसार में आत्म-निर्भर होकर रहने के लिए अपनी जीविका ईमानदारी के साथ कमानी पड़ेगी। सन्तमत हरएक से यही आशा करता है कि वह अपनी ईमानदारी की कमाई से गुज़ारा करे और दूसरों पर भार न बने। उसे कोई काम ढूंढकर अपनी रोज़ी कमानी चाहिये। यह उसका कर्तव्य है।

(३२३)

इतना उत्तेजित और भावुक होना उचित नहीं। हमें दूसरों को समाज से नाता तोड़ने की सलाह नहीं देनी चाहिये, और न ही ख़ुद ऐसा करना चाहिये। हमें इस संसार में रहना है और समाज, परिवार और अपने देश के प्रति अपने दायित्व या ज़िम्मेदारी को निभाना है। इन सब के साथ ही हमें इन सब बातों से अपने को अलग और अंतर में परमात्मा के साथ अपने को जोड़े रखना है। दोबारा कभी इतने उत्तेजित और भावुक न हों। इससे आपको किसी प्रकार का लाभ नहीं होगा। हमें अपने विचारों को स्थिर और समतोल रखना चाहिये और शांत, सामान्य तथा तनाव रहित जीवन बिताना चाहिए।

(३२४)

नामदान के लिए आपको अपनी पढ़ाई समाप्त करने तक ठहरने की मैंने जो सलाह दी थी, वह आपके अपने हित में थी। आप अभी छोटे हैं और आपको चाहिए कि सन्तमत की पुस्तकों का अध्ययन करके इस मार्ग को पूरी तरह समझें और इस विज्ञान की खोज करें। यह जल्दबाज़ी में अपनाने का मार्ग नहीं है। इस पथ को अपनाने से पहले जिज्ञासु को चाहिये कि अपनी सारी शंकाओं का समाधान कर ले। उसे इस बात का निश्चय हो जाना चाहिये कि इन उपदेशों से उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति होगी और वह इनके अनुसार ज़िन्दगी बसर कर सकेगा। सन्तमत के अध्ययन और खोज में लगाया गया समय व्यर्थ नहीं जाता।

जब तक आपको नाम न मिले तब तक, मेरी राय में, आप अभ्यास न करें। केवल पुस्तकें पढ़कर अथवा सत्संगियों से सुनकर ऐसा करना उचित और सुरक्षित नहीं है। भजन-सुमिरन का भेद या रहस्य केवल सतगुरु (या उनके नियुक्त प्रतिनिधि) के द्वारा ही नाम-दान के समय बताया जाता है और उसके अनुसार किया गया अभ्यास ही काम आता है। कभी-कभी बिना किसी गुरु के मार्ग-दर्शन के अपने आप भजन-सुमिरन करना बहुत हानिप्रद हो सकता है।

(३२५)

आप खुद पूरी तरह से और तटस्थ भाव के साथ अपने हृदय को टटोलने की कोशिश करें और पता लगायें कि आपकी दुर्बलता कहां है जिसके कारण लोग आपको नापसन्द करते हैं। आपके अन्दर कोई ऐसी बात अवश्य होनी चाहिए जिसे लोग पसन्द नहीं करते। उस दोष या दुर्बलता का पता लगाने की कोशिश करें और उसे दूर करने का प्रयास करें। दूसरों के प्रति हमारा व्यवहार मैत्री, परोपकार, सहायता और सहयोग की भावना से पूर्ण होना चाहिये। यदि कोई हमें कुछ हानि पहुँचाये तो हमें बदला लेने की कोशिश करने के बजाय उसकी कमजोरी के लिये उसे क्षमा करने तथा भूल जाने की कोशिश करनी चाहिये।

(३२६)

भिन्न-भिन्न सत्संगियों के बोलने के लहजे या ढंग की वजह से नामों के उच्चारण में थोड़ा-बहुत अन्तर होने से कोई फरक नहीं पड़ता। असली महत्व तो ख़याल को तीसरे तिल पर एकाग्र करके प्रेम और भक्ति के साथ किये गये सुमिरन का है।

अकाल मृत्यु जैसी कोई चीज नहीं होती। मृत्यु का क्षण निश्चित है। आत्म-हत्या भी प्रारब्ध के अनुसार होती है। यह कहना सही नहीं है कि वह अपनी आयु घटा रहा है। वह केवल वैसा ही कर रहा है जैसा किसी पिछले जन्म में किये गये कर्मों के फल-स्वरूप उसके भाग्य में करना बदा था।

(३२७)

आपने अपने पति के बारे में जो लिखा उसे पढ़कर मुझे अफ़सोस हुआ । यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि उन्हें जुआ खेलने की आदत पड़ गई है । यह जीवन में असंतोष का परिणाम है । लोग जल्दी पैसा जुटाने की सोचते हैं, और नतीजा यह होता है कि वे आर्थिक कठिनाइयों में और अधिक फँस जाते हैं । कृपया प्रेम तथा स्नेह के साथ अपने पति को इस आदत की बुराइयां समझाने की कोशिश करें । अगर वे इस आदत को छोड़ दें तो हो सकता है कि कुछ समय तक उन्हें ऐसा करने में असुविधा लगे, परन्तु वे अपनी आर्थिक कठिनाइयों से अपने आपको मुक्त कर सकेंगे । इस आदत को चालू रखकर उन्हें स्थिति को और ज्यादा खराब नहीं करना चाहिये । इसे छोड़ना कठिन नहीं है ; ज़रूरत है दृढ़ निश्चय तथा इच्छा-शक्ति की । जुआ-घर जाने से उन्हें अपने आपको रोकना होगा और इस बात का ख्याल रखना होगा कि वे उस ओर कभी न जायें । धीरे-धीरे इसका मोह मिट जायेगा । जो समय उनका जुआ खेलने का हो, उस समय उन्हें किसी अन्य काम में लग जाना चाहिये । सुमिरन और मालिक से प्रार्थना करने से इस आदत पर विजय पाने में सहायता मिलेगी । प्रेम और भक्ति के साथ परमपिता परमात्मा की दया और सहायता के लिये विनती करें । जहाँ इच्छा है, वहाँ रास्ता भी है । उन्हें चाहिये कि अपने मन को अच्छी तरह समझा दें कि जिस प्रकार अब तक वे उसकी बातों में चलते रहे हैं उस प्रकार अब बिलकुल नहीं चलेंगे ।

(३२८)

नियति या भाग्य एक ऐसी चीज़ है, जो जन्म से पहले ही तय कर दी जाती है । उसकी धारा को बदलना सम्भव नहीं है । यह महसूस करते हुए कि इन तकलीफ़ों के द्वारा हमारे कर्मों का ऋण चुक रहा है और हमारा बोझ हलका हो रहा है और हमें वापस धुरधाम पहुँचने के लिये तैयार किया जा रहा है, एक सत्संगी को अधिक शक्ति और साहस के साथ, अपने प्रारब्ध का सामना करना चाहिये । यह, अपने-आप में,

एक ऐसा प्रसाद है, जो संसार के अनगिनत लोगों को सुलभ नहीं
शायद वे आपसे भी अधिक सहते हों, फिर भी उनके भविष्य में मु
की कोई आशा नहीं है। इसके विपरीत, आपके सामने आपका उज्ज्व
और आशाप्रद भविष्य है। अपनी परिस्थितियों को इसी दृष्टि
स्वीकार करें और हताश न हों। चिन्ता या उदासी कितनी ही ज्याद
क्यों न हो, उससे स्थिति सुधर नहीं सकती।

मुझे यह पढ़कर आश्चर्य हुआ कि आपने आत्म-हत्या करने का प्रयास तक किया। इससे बढ़कर दूसरा कोई पाप नहीं है। क्या ऐसा करके आप कर्मों से किसी तरह छुटकारा पा सकेंगी? वे तमाम कर्म, जिनका हिसाब देना बाकी है और आत्म-हत्या का बहुत भारी बोझ अगले जन्म में आपके साथ जायेंगे। इस न बख्शे जाने वाले पाप के अतिरिक्त बोझ के कारण आपका अगला जन्म और अधिक सन्तापपूर्ण होगा। आत्मघात करने की बात सपने में भी कभी न सोचें। इससे आपको कोई फ़ायदा नहीं होगा।

परमात्मा का ध्यान रखते हुए एक पत्नी और माँ के कर्तव्यों का पालन जितने अच्छे ढंग से आप कर सकती हैं, आपको करना चाहिये। आपको गृहस्थी के कार्य और अपने कर्तव्यों को भली प्रकार पूरा करना चाहिये। जहाँ तक हो सके अपने पारिवारिक जीवन को प्रेममय और सुखी रखने का प्रयत्न करें। पारिवारिक शांति में कभी बाधा न आने दें। परिवार सुखी रखने के लिये सबको कुछ न कुछ त्याग करना ही पड़ता है और ऐसा त्याग करने में किसी सदस्य को झिझकना नहीं चाहिये।

(३२९)

मैंने आपका पत्र ध्यानपूर्वक पढ़ा और किसी आध्यात्मिक मार्ग का अनुगमन करने की आपकी तीव्र इच्छा को देख कर खुशी हुई। आपके समान ही सब को यह संसार अत्यन्त मनोहर, ... आकर्षक प्रतीत होता है, पर इसका दूसरा पहलू भी है। इ... समुद्र, सूर्य, पुष्प, मन्द पवन इत्यादि के साथ ही विपत्ति, दु...

निर्धनता, अन्याय, बीमारी, और जन्म-मरण की यातना आदि भी हैं। जन्म-मरण के दुःखों के कारण ही हम इस संसार से सदा के लिये मुक्त होना चाहते हैं।

मनुष्य की आत्मा इस स्थूल प्रकृति का अंग नहीं है। यह सुख और आनन्द के उस अनन्त सागर की एक बूंद है, जहां से यह करोड़ों युगों पूर्व अलग हुई थी। इसके दुःखों का अन्त तभी होगा जब यह वापस अपने असली घर में पहुँच जायेगी। इसके अतिरिक्त, हर जन्म और मरण के समय हम नया चोला धारण करते हैं या उसे छोड़ते हैं। यह उसी प्रकार होता है जैसे हम रोज़ अनेक पोशाक बदला करते हैं।

बेशक ईसा एक महान पैगम्बर थे, किन्तु हमने उन्हें देखा नहीं है और हमारी सहायता करने के लिये वे आज यहां नहीं हैं। यदि किसी के सामने कोई आध्यात्मिक समस्या पैदा हो तो मार्ग-दर्शन तथा सलाह के लिये उस समस्या को उनके पास ले जाना सम्भव नहीं है। हमें एक जीवित 'क्राईस्ट', एक जीवित मसीहा चाहिये। मेरी सलाह है कि नामदान के लिये लिखने से पहले आप सन्तमत की कुछ पुस्तकों को बहुत सावधानीपूर्वक अच्छी तरह पढ़ लें, और यदि कोई सत्संगी आपके नज़दीक रहता हो तो उसके साथ सन्तमत के सिद्धान्तों पर चर्चा कर लें। जब आपको ऐसा लगे कि आपके मन में किसी प्रकार की कोई शंका बाकी नहीं रही है और आप सन्तमत के सिद्धान्तों को पूर्ण श्रद्धा तथा विश्वास के साथ अपनाने के लिये तैयार हैं, तो आप नाम के लिये लिख सकते हैं।

(३३०)

बाबाजी महाराज ने हुज़ूर महाराज जी (बाबा सावनसिंह जी महाराज) को जो शिक्षा प्रदान की थी, और जिसको आपने अपने पत्र में उद्धृत किया है, उसको अपनाने की आपकी इच्छा की मैं सराहना करता हूँ। पर यह सब इतना सरल नहीं है, जितना कि आप सोचते हैं। आत्म-समर्पण या शरण की वह अवस्था प्राप्त हो जाने पर और कुछ करना बाकी नहीं रहता। यह अपने हौमैं, अपने अहं, मैं और मैं-

मेरी के पूर्ण त्याग की अवस्था है। हमारे तथा परमात्मा के बीच एक मात्र रुकावट हमारा अहं है, और यदि इसे हटा दिया जाए, तो जिस परमात्मा को हम ढूंढ रहे हैं, उससे हमारा मिलाप हो जायेगा।

यह सब इसकी कल्पना करने या इसे कहने-मात्र से प्राप्त नहीं हो सकता। मन की यह वृत्ति बाहरी दुनिया से पूरी तरह मुंह मोड़कर, अन्तर में सतगुरु के चरणों की शरण ग्रहण करने पर प्राप्त होती है। आपकी आकांक्षा बहुत प्रशंसनीय है और प्रत्येक सत्संगी का यही ध्येय होता है और होना भी चाहिये। हमें एक दिन शरण की यह अवस्था प्राप्त करनी ही है और सतगुरु द्वारा दी गई अभ्यास की विधि का यही उद्देश्य है। सुमिरन और भजन के द्वारा हमें अपने मन को शांत करना है, इसे अडोल बनाना है और फिर उसे ऊपर ले जाकर सतगुरु के दिव्य स्वरूप के सामने रख देना है। इस स्थान पर पहुँचने के बाद सत्संगी के अभ्यास का सबसे कठिन भाग समाप्त हो जाता है। यह सब धीरे-धीरे और ठीक समय पर होगा। आपने जो उद्धरण दिये हैं, उनमें बताई गई अनासक्ति को प्राप्त करने के लिये हमें कोशिश करते रहना चाहिये। इस स्थिति को प्राप्त करने के लिये रूहानी अभ्यास, खास कर सुमिरन ही एक-मात्र साधन है। इसलिये जितना अधिक हो सके, सुमिरन पर ज़ोर दें।

(३३१)

अन्दर अंधेरे में मन को स्थिर रखने के लिये ध्यान की आवश्यकता होती है। ध्यान अनिवार्य या लाज़िम नहीं है, तीसरे तिल के खाली अन्धकार में एकाग्रता को कायम रखने के लिये यह केवल एक साधन है। यदि आप ध्यान के बिना भी अंधकार में अपनी एकाग्रता को जमाये रख सकते हैं, तो ध्यान आपके लिये आवश्यक नहीं है। उद्देश्य मन को स्थिर रखना है। यदि ध्यान के समय आपका चित्त सतगुरु के स्थान और रूप की कल्पना करने में ही लगा रहे तो ज्यादा अच्छा यह होगा कि आप तीसरे तिल पर एकाग्रता रखकर केवल सुमिरन ही करते रहें। जब आप ध्यान करें तो सतगुरु के आसपास के स्थान,

वातावरण, उनकी पोशाक या उनके बैठने के ढंग के बारे में न सोचें वल्कि उनके स्वरूप, विशेषकर नेत्रों और मस्तक को अपने अन्दर देखने की कोशिश करें।

(३३२)

एक चीज़ है जिसे हम सभी सन्तमत पर चलने वालों को समझना चाहिये, वह है नम्रता का महत्व। इस मार्ग में दीनता और नम्रता वहुत बड़े गुण हैं, और जव तक हम इन्हें प्राप्त नहीं करते और अपने अहं तथा मान से मुक्त नहीं होते, प्रगति अत्यन्त कठिन है। हमारा अहं या हौमैं हमारे मार्ग में रुकावट है और यह मन को शक्तिशाली और प्रबल बनाता है। नम्रता ही हमें अपने अहं और आत्माभिमान से छुटकारा दिला सकेगी। सब सन्त अपनी वाणी में हमें यही पाठ पढ़ाते हैं। आखिर हमारा महत्व ही क्या है? मालिक द्वारा बनाई गई इस विशाल सृष्टि में एक व्यक्ति विशेष का क्या महत्व है? मनुष्य के अन्तर में इस विश्व जैसे खरबों विश्व मौजूद हैं; इस पिंड में ब्रह्माण्ड ...जूद हैं। हमारे अस्तित्व, किसी भी व्यक्ति के अस्तित्व का कोई मूल्य नहीं है, और हमें अपने आप को बहुत महत्व या वड़ाई नहीं देनी चाहिये। सन्तों का मार्ग, जो कि परमात्मा तक वापस ले जाने वाला मार्ग है, नम्र और दीन व्यक्तियों के लिये है।

इस मार्ग के प्रत्येक शिष्य का भविष्य आशापूर्ण है। जब प्रभु ने हमारे लिये नामदान की व्यवस्था की है, तो इसका अर्थ है कि वह चाहता है कि एक दिन हम उसके पास पहुँच जायें। अगर यह मालिक की इच्छा है तो ऐसी कौन-सी शक्ति है जो हमें ज़्यादा समय तक यहाँ रोक सके? केवल समय की बात है। जब तक हमारे बोझ हलके नहीं होते और हम इतने निर्मल नहीं होते कि प्रभु के सामने खड़े हो सकें केवल तब तक का ही सवाल है। परमात्मा किसी मनुष्य को जो सबसे बड़ी दात या बख़्शिश दे सकता है वह यही है, और इसके लिये हमें उसका कृतज्ञ और अहसानमन्द होना चाहिये। रोज़ भजन-सुमिरन करके और परमात्मा की वाणी या शब्द पूरे ध्यान के

साथ सुन कर हम अपना आभार प्रकट कर सकते हैं। इस संसार से छुटकारा पाने का और कोई उपाय नहीं है। बौद्धिक तर्क, बहस और विवाद हमें कहीं नहीं ले जायेंगे। यह मार्ग करनी का है, कथनी का नहीं।

इस मार्ग में सभी सत्संगी प्रगति करने की कोशिश में लगी आत्माएँ हैं, सबका अपना-अपना बोझ है। 'मैं क्यों असफल हुआ', ऐसा सोचकर रोने के बजाय इन दुर्बलताओं को दूर करने के लिये कदम उठाने चाहियें, और वह कदम है भजन-सुमिरन करना। हमारा मन दूसरे किसी उपाय से निर्मल नहीं हो सकता।

(२२३)

कृपया याद रखें कि पिछले जन्मों के हमारे कर्मों के आधार पर हम सबका प्रारब्ध पहले ही तय हो चुका है, और हर हालत में हमें इसे भुगतना ही होगा। दूसरों के साथ अपनी तुलना करना व्यर्थ है। प्रत्येक व्यक्ति का प्रारब्ध उसके साथ है, और उसे खुद ही उसको भोगना होगा। हमारा शिकायत करना ठीक नहीं है, क्योंकि जो हम बो चुके हैं, उसे ही काट रहे है। अपने जीवन को सफल बनाने के लिये पूरी कोशिश करना हमारा कर्तव्य है, लेकिन अगर कोई बात हमारी आशा और इच्छा के अनुसार नहीं होती तो हमें मालिक की मौज में रहना भी सीखना चाहिये। परेशान होने से, शिकायत करते रहने से और विलाप करने से कोई अन्तर पड़ने वाला नहीं है। इन बातों से तो हम व्यर्थ ही और दुःखी और परेशान होंगे। हमें कभी भी निराश नहीं होना चाहिये, क्योंकि जीवन में सदा परिवर्तन होता रहता है और परिस्थितियाँ हमेशा एक सी नहीं रहतीं। अच्छे और बुरे, दोनों प्रकार के कर्मों के मिश्रण या मेल से हमारा जीवन बना है और जैसे-जैसे समय गुजरता है वैसे ही यह भी जाहिर होता जाता है कि हमारे भाग्य में क्या लिखा है?

(२२४)

आपने सुमिरन के बारे में पूछा है, सो सुमिरन के समय अपनी चेतनता को शरीर के निचले भागों से खींचकर तीसरे तिल तक लाने

की कोशिश न करें। तीसरे तिल पर अपना ख़याल पूरी तरह जमाये रखें और अडोल मन से सुमिरन करते रहें। जैसे-जैसे तीसरे तिल पर आपकी एकाग्रता बढ़ेगी, वैसे ही चेतनता अपने आप शरीर के निचले हिस्सों से सिमट कर आँखों के केन्द्र पर आने लगेगी। आपको ऐसा करने के लिये ज़बरदस्ती कोशिश नहीं करनी चाहिये, क्योंकि तब तीसरे तिल से आपका ध्यान गिर कर शरीर के निचले अंगों में वापस चला जायेगा। सुमिरन करते समय आपको केवल तीसरे तिल पर सुमिरन के प्रति सचेत रहना चाहिये, न कि शरीर के प्रति।

(३३५)

सुमिरन करते समय पैरों में होने वाले दर्द को सहन करने की कोशिश करना ही अच्छा है। कुछ समय बाद, एकाग्रता के बढ़ने पर, वह मिट जायगा। इसमें सन्देह नहीं कि दर्द को मिटाने के लिये यदि आप उठेंगे तो एकाग्रता में विघ्न पड़ेगा, लेकिन यदि दर्द असहनीय हो जाये तो, शुरू-शुरू में आप आसन बदल सकते हैं। पर अन्त में आपको एक आसन कायम रखना होगा। यह दर्द एक अच्छा लक्षण है, क्योंकि इसका अर्थ है कि आपका अभ्यास ठीक ढंग से चल रहा है।

(३३६)

अपने को ज़िंदा रखने के लिये इस संसार में हम सबको कोई न कोई काम करना ही पड़ता है। सन्तमत यह नहीं चाहता कि हम दूसरों के दान पर गुज़ारा करें, बल्कि वह सिखाता है कि हम नेकी और ईमानदारी के साथ अपनी रोज़ी खुद कमायें। गाढ़े पसीने और ईमानदारी से कमाये हुए धन पर कोई आपत्ति नहीं है।

(३३७)

क्रोध दुर्बलता और स्पष्ट चिन्तन के अभाव का लक्षण है। अगर आप जान सकें कि एक बार के क्रोध से मनुष्य के यकृत या लिवर को कितना नुकसान पहुँचता है तो आप कभी क्रोध न करेंगे। हरएक सत्संगी का जीवन औरों के लिये एक आदर्श होना चाहिये।

(३३८)

केवल विवाह को टाल कर आप काम-वासना से नहीं बच सकते। *काम-वासना का निवास विवाह में नहीं, बल्कि मनुष्य के विचारों* और भोगों की ओर दौड़ने में है। यदि विवाह न हों तो संसार कैसे चलेगा? अनेक महान सन्तों ने गृहस्थ जीवन व्यतीत किया है।

(३३९)

किसी ठिकाने पर पहुँचने के लिये अलग-अलग दिशाओं को जाने वाली दो सड़कों पर आप एक साथ नहीं चल सकते। अपने आदर्श के अतिरिक्त किसी अन्य की पूजा करने का अर्थ है अपने पूज्य के प्रति विश्वास की कमी। आप गिरजाघर, मस्जिद, मन्दिर, वैवाहिक अथवा अन्य समारोहों में—जहां चाहें—जा सकते हैं, किन्तु आपको अपने सतगुरु तथा उनके उपदेशों पर विश्वास रखना है। विभिन्न व्यक्तियों, मतों या सिद्धान्तों में अपनी भक्ति को बांटने की कोशिश नहीं करनी चाहिये।

(३४०)

आपको वापस धुरधाम जाने के लिये पारपत्र दे दिया गया है, जहां परमपिता आपके आने की राह देख रहा है। दु:ख-दर्द के इस संसार में इससे बढ़कर खुशी, दया और आनन्द की बात और क्या हो सकती है? वास्तव में, इस मार्ग पर चलने वाले सत्संगी के सिवाय इस संसार में और कोई सुखी नहीं हो सकता। उसे हमेशा अपने असली घर—धुरधाम— को ध्यान में रखना चाहिये जहां सब प्रकार के सुख और आनन्द उसकी राह देख रहे है।

निराशा और खिन्नता की भावना को त्याग दें और परमात्मा ने जो महान उपहार आपको दिया है, उसके लिये उसका आभार मानते हुए तनाव-रहित सुखी जीवन बितायें। अपने मन को भजन-सुमिरन में लगाये रखें और देखें कि अपने अन्तर में आपको कितना सुख मिलता है। इस जीवन में किसी बात के लिये परेशान न हों यह

तो केवल एक दुःखपूर्ण सपना है। असली जीवन उस पार है, जहाँ आपके सतगुरु आपकी वाट जोह रहे हैं।

अपने पति को अपना पूरा प्रेम और स्नेह प्रदान करें और इस तरह सुख पहुँचायें। आपकी निराशा और उदासी से वे दुःखी होते हैं और परिणाम-स्वरूप आप दोनों की परेशानी बढ़ जाती है। अपनी भावनाओं पर विजय पायें और उन्हें नियंत्रण या वश में रखें। आप जानती हैं, आपके पति आपको कितना चाहते हैं और कितने भले हैं। तब क्या वे आपके पूर्ण सहयोग और प्रसन्नता के हकदार नहीं हैं? पारिवारिक मेल को बिगाड़ना कभी अच्छा नहीं होता; उसे हर कीमत पर बनाये रखना चाहिये। अच्छे भजन-सुमिरन के लिये सुखी परिवार और तनाव-रहित जीवन आवश्यक है।

यदि आप हमेशा सुमिरन करती रहेंगी तो आप देखेंगी कि किस प्रकार यह आपके जीवन और आपके मन की वृति को बदलता है। मनुष्य के दृष्टिकोण में जरा से परिवर्तन से जीवन में बहुत फरक पड़ जाता है। एक सामान्य जीवन बितायें, मन ही मन बहुत सोच-विचार न करें। एक पत्नी होने के नाते अपने पति के प्रति प्रेम और स्नेह के साथ अपने कर्तव्य का पालन करना ऐसा लगाव नहीं है जिसे सन्तमत में अनुचित माना जाए। प्रेम चमत्कार करता है। थोड़े से त्याग तथा सहयोग की भावना से प्रतिकूल स्वभाव भी अनुकूल बनाया जा सकता है।

अपने तथा अपने पति के जीवन को व्यर्थ ही दुःखपूर्ण न बनायें। अपने भजन-सुमिरन को रोज़ पूरा समय देते हुए और घर में एक अच्छी गृहिणी के रूप में अपनी ज़िम्मेदारियों को निबाहते हुए, एक सामान्य जीवन व्यतीत करें। परमात्मा आप पर अपनी दया की वर्षा करेगा।

(३४१)

प्रेम और भक्ति के साथ किया गया भजन-सुमिरन सदा शान्ति और शक्ति देता है। जब किसी सांसारिक समस्या में मन बहुत ज़्यादा

परेशान रहता है, तब थोड़े समय के लिये भजन-सुमिरन में आनन्द प्राप्त नहीं होता। हलके व तनाव-रहित मन के साथ भजन-सुमिरन का आनन्द लेने की कोशिश करें, और भजन के समय दूसरी सब बातें भूल जायें। तब आपको अपने अन्तर में काफी शांति और दृढ़ता प्राप्त होगी।

(३४२)

अन्दर के सूक्ष्म लोकों में अपने सम्बन्धियों और मित्रों को पहचानने का कोई प्रश्न नहीं उठता, और इसकी ज़रूरत भी क्या है? हमारे नाते-रिश्ते इस शरीर के कारण ही हैं और जब यह पीछे छूट जाता है तो तमाम सम्बन्ध टूट जाते हैं। आत्मा की न तो कोई नातेदारी होती है और न ही कोई लगाव। ये सब लगाव मन के ही होते हैं। इस संसार में जब हमारा पुनर्जन्म होता है तब मोह की पिछली तमाम कड़ियाँ टूट जाती हैं, और हमारे प्रारब्ध के अनुसार नये बन्धन पैदा होते हैं।

(३४३)

मैं आपको यही सलाह दूंगा कि सन्तमत की जीवन-प्रणाली या रहनी को कभी न भूलें और उसके ऊँचे सिद्धान्तों के अनुसार जीवन बिताने का प्रयत्न करें। अपने विचारों और कार्यों से पारिवारिक चैन को न बिगाड़ें, और जब कभी दोषपूर्ण विचार उठें, तुरन्त सुमिरन में लग जायें। काल के आक्रमण से बचने का यही एकमात्र उपाय है। हमेशा याद रखें कि काल के हाथ में काम-वासना अत्यन्त शक्तिशाली शस्त्र है और इससे कर्मों का वजन बहुत भारी हो जाता है। इस दुर्बलता का शिकार न बनें। आपको गुमराह करने के लिये व्यर्थ की गलत दलीलें या तर्क देकर आपका मन आपको धोखा देता है, उसके चक्कर में न आयें।

सन्तमत में बताया गया अभ्यास घर में बिना किसी को परेशान किये या अड़चन पहुंचाये किया जा सकता है। यदि सत्संग में जाना सुविधाजनक नहीं है तो यह ज़रूरी नहीं कि आप सत्संग में जायें।

इस बात को लेकर परिवारिक शांति में बाधा नहीं डालनी चाहिये। अधिक अच्छे अवसर की प्रतीक्षा करें और घर में ही रोज़ नियमपूर्वक भजन-सुमिरन में मन लगायें। आपके जिन कार्यों के कारण घर में क्लेश पैदा हो, उनको उचित ठहराने के लिये बहाने पेश करने की कोशिश न करें। खास बात भजन-सुमिरन है, जिसे यदि प्रेम, भक्ति और श्रद्धा के साथ नियमपूर्वक किया जाता है तो और किसी चीज़ की जरूरत नहीं है।

मन बहुत धूर्त और धोखेबाज़ है। उसके तर्क और प्रलोभनों से धोखा न खायें। हमेशा सावधान रहें, और ऐसा कुछ न करें जिससे आपकी मानसिक शांति और भजन-सुमिरन में खलल पड़े। परेशान न हों, सन्तमत के सिद्धान्तों के विरुद्ध न जायें और अपने भजन-सुमिरन में कभी नागा न करें।

(३४४)

शाकाहारी भोजन पर रहना सन्तमत के अनुसार कोई धार्मिक विधि या औपचारिकता-मात्र नहीं है, बल्कि सन्तों के मार्ग के मूल उपदेशों में से एक है। यह सोचना बिलकुल गलत है कि किसी के स्वास्थ्य के निर्माण के लिये आवश्यक पर्याप्त प्रोटीन तथा दूसरी ज़रूरी चीज़ें मांस या अण्डों के सिवाय और कहीं पाना असम्भव है। इस संसार में किसी भी व्यक्ति के लिये काफी मात्रा में पोषक तत्व साग-सब्जियों, फलों, दूध व दालों, और मेवे, पनीर तथा शहद आदि में पाये जाते हैं। क्या आप यह कहना चाहते हैं कि शाकाहारी भोजन पर रहनेवाली माताओं के बच्चे स्वस्थ और तगड़े नहीं होते? मैं आपको विश्वास दिलाना चाहता हूं कि यदि आप किसी आहार विशेषज्ञ की सहायता लेकर, या अपने अनुभव के आधार पर अपनी आवश्यकताओं के अनुसार अपने भोजन की सामग्री को उचित ढंग से चुनेंगे तो बिना किसी खतरे के आजन्म शाकाहारी रह सकेंगे। इस बहुमूल्य शरीर को, जिसमें परमात्मा स्वयं निवास करता है, हम मुर्दा प्राणियों का कब्रिस्तान क्यों बनायें?

मैं भोजन के बारे में ऐसी कोई सलाह नहीं दे सकता जो सन्तमत के सिद्धान्तों के विपरीत हो। फिर भी मैं यह फिर दोहरा सकता हूँ कि यदि हम भोजन की अपनी सामग्रियों को सावधानीपूर्वक चुनेंगे तो हम शाकाहारी भोजन के द्वारा काफ़ी से भी ज्यादा मात्रा में पोषण प्राप्त कर सकेंगे और विपाक्त भोजन, जैसे अनेक ऐसे खतरों से अपनी रक्षा कर सकेंगे, जो मांस-भक्षण में आते हैं।

(३४५)

जैसा कि आप खुद महसूस करते हैं, नींद अधिकांश सत्संगियों के लिये एक बड़ी समस्या है। इस विषय में कोई दूसरा व्यक्ति आपकी क्या सहायता कर सकेगा? इस दुर्बलता से तो नींद के सताए गये व्यक्ति को ख़ुद ही निपटना होगा। नींद आने के कारण का पता लगाकर उस कारण को दूर करें। इसके अनेक कारण हो सकते हैं: रात को पूरी नींद और पूरा आराम न होना, सोने से पहिले भारी भोजन करना, विश्राम के पहले बहुत ज्यादा उत्तेजित होना, चिन्ता, दिन भर बहुत सख़्त मेहनत के काम करना, आदि। मन तो अपना कर्तव्य करता है और हमारे मार्ग में सभी प्रकार के रोड़े अटकाता है, पर हमें झुकना नहीं है। हमे अपने लक्ष्य को प्राप्त करना है और उसके लिये भजन-सुमिरन ही एक-मात्र साधन है। इसे हर हालत में करना ही है। अगर बहुत सवेरे का समय आपको असुविधाजनक लगता है तो आप ख़ुशी से ऐसा समय चुन सकते हैं जो आपको ठीक लगे। समय कोई भी हो, उससे कोई अन्तर नही पड़ता जरूरी बात तो एकाग्रता है। मालिक की भक्ति के लिये सब समय अच्छे और शुभ हैं।

(३४६)

राधास्वामी विज्ञान केवल परमात्मा की प्राप्ति के लिये है, किसी अन्य प्रयोजन या उद्देश्य के लिये नही। साइटालॉजी से न तो इसका कोई सरोकार है और न ही वह ऐसे प्रयोगो की स्वीकृति प्रदान करता है, क्योंकि अन्त मे लोगो के मस्तिष्क पर इनका प्रभाव

हानिकारक होता है। ऐसे सभी प्रयोगों से परमात्मा की प्राप्ति कहीं अधिक ऊँची और श्रेष्ठ है।

(३४७)

उस नवयुवती के साथ आपके सम्बन्धों के बारे में केवल एक बात जो मैं कहना चाहूंगा, वह यह है कि विवाह किये बिना, वैवाहिक सम्बन्धों के बाहर काम-संबंध अत्यन्त आपत्तिजनक और अनुचित हैं, क्योंकि इनके द्वारा इन्सान पापों का बड़ा भारी बोझ इकट्ठा करता है। यह नैतिकता के तमाम सिद्धातों और सन्तमत की जीवन प्रणाली के खिलाफ़ है।

यह कहकर कि हम ऐसा करते हैं क्योंकि सतगुरु की ऐसी ही इच्छा या मौज है, अपनी दुर्बलताओं के लिये सारी जवाबदारी सतगुरु पर लादना है। यह कहां तक उचित है? हमारा मन हमें इसी तरह ठगता है और पथ-भ्रष्ट या गुमराह करता है। किसी सतगुरु ने कभी भी ऐसे जीवन-क्रम की सलाह नहीं दी है। इसी लिये सन्तमत के ग्रन्थों का पूर्ण अध्ययन करना तथा उनके मूल तत्वों को समझना जरूरी है।

सन्तमत गृहस्थ-जीवन के विरुद्ध या खिलाफ़ नहीं है, और वास्तव में, वह इसे ब्रह्मचर्य की बनिस्बत अधिक पसन्द करता है। ब्रह्मचर्य, जैसा आप ख़ुद अनुभव कर रहे हैं, बहुत कठिन और संकटपूर्ण मार्ग है। आपका अपना जीवन सब प्रकार के कलुष और शक से परे होना चाहिये, वह तो दूसरों के लिये आदर्श होना चाहिये, ख़ास तौर पर इसलिये कि आप सत्संग देते हैं। आप लिखते हैं कि इस आकर्षण को नष्ट करने के लिये शायद सतगुरु यह शारीरिक सम्बन्ध चाहते हैं। क्या ईंधन डालने से आग को कभी आपने बुझते देखा या सुना है? नहीं, यह असम्भव है, यह केवल मन की धोखेबाजी है। आपका हर कार्य, आपका अपना जीवन नैतिकता और सदाचार के सर्वोच्च सिद्धान्तों के अनुरूप होना चाहिये। इसके बिना सन्तमत के उपदेशों पर चलना सम्भव नहीं है।

(३४८)

सन्तमत के दृष्टिकोण से आपका खेलकूद में सम्मिलित होना आपत्तिजनक नहीं है। सफल सांसारिक जीवन के लिये, तथा भजन-सुमिरन के लिये भी, अच्छा स्वास्थ्य बहुत जरूरी है। स्वस्थ शरीर का अर्थ है स्वस्थ मन। आपका स्वास्थ्य उत्तम है, आपको चाहिये कि उसे बनाये रखें। कमरे के अन्दर खेले जाने वाले ब्रिज जैसे खेलों की बनिस्वत बाहर मैदान के खेल हमेशा अच्छे होते हैं। ताश के खेलों में कभी-कभी आदमी इतना फँस जाता है कि अपने कर्त्तव्यों की ओर से लापरवाह होकर घण्टों खेलता रहता है, और कई बार ताश का खेल जुए का रूप ले लेता है जिसमें ऊंचे दाव लगाकर मनुष्य आर्थिक कठिनाई में भी फँस जाता है। ऐसे खेल स्वास्थ्य के लिये सहायक नहीं होते।

(३४९)

जैसा आपने लिखा है, धूम्रपान बहुत गंदी और हानिकारक आदत है। आपने इसे त्याग कर अच्छा किया। इससे स्वास्थ्य में भी सुधार होगा।

(३५०)

एक शिक्षित तथा बुद्धिमान् व्यक्ति के लिये बुद्धि की छान-बीन की वृत्ति को सन्तुष्ट करना आवश्यक है। परमात्मा की प्राप्ति का मार्ग एक राज-मार्ग की तरह स्पष्ट और सीधा है। कठिनाई तो यह है कि मालिक जहां मिल सकता है, वहां हम उसकी तलाश करने की कोशिश नहीं करते। हज़रत ईसा का कथन है, 'परमात्मा का राज्य तुम्हारे भीतर है', और मनुष्य के शरीर को उन्होंने 'जीवित प्रभु का मन्दिर' कहा है। उसकी खोज अपने अन्तर में करने के बदले हम उसे बाहर ढूंढने की कोशिश करते हैं। वास्तव में वह तो सर्वव्यापी है, पर अपने अन्तर में उसको प्राप्त कर लेने के बाद ही हम उसे बाहर देख सकेंगे। और यह कोई बहुत कठिन बात नहीं है। केवल एक ऐसे व्यक्ति की आवश्यकता है, जो अन्तर में परमात्मा के महल तक ले जाने वाले मार्ग से परिचित हो, और स्वयं अपने अन्तर में परमात्मा को प्राप्त कर चुका हो। उस व्यक्ति को आप मित्र, भाई, शिक्षक या

सतगुरु जो चाहें कह लें, किन्तु यह तयशुदा बात है कि ऐसे मार्गदर्शक की ज़रूरत से इन्कार नहीं किया जा सकता।

(३५१)

जिस परमात्मा को आप देख नहीं सकते, जिसे आप महसूस नहीं कर सकते और जिसके साथ सम्पर्क नहीं साध सकते, उसे समझने तथा उससे प्रेम करने में आपकी कठिनाइयों को मैं समझता हूँ और उसकी कद्र करता हूँ। आपके असन्तोष की यह भावना ही इस बात का लक्षण है कि वह परमपिता परमात्मा चाहता है कि आप इस ओर आगे जाँच करें। सारी दुनिया अपने निर्माता के सम्बन्ध में एक क्षण के लिये भी विचार किये बिना ही बही जा रही है। उस परमपिता ने अत्यन्त करुणा और दया करके प्रत्येक मानव के अन्दर एक ऐसा मार्ग रखा है, जिस पर चल कर वह वापस प्रभु के पास पहुँच सकता है। इस मार्ग पर किसी धर्म, समुदाय, राष्ट्र और लोगों के गुट का एकाधिकार नहीं है। परमात्मा को प्राप्त करने की यह योग्यता वह परमपिता यदि लोगों के किसी ख़ास वर्ग को ही प्रदान कर देता और बाकी लोगों को अन्धकार में ही छोड़ देता, तो यह बहुत बड़ा अन्याय होता। उसके लिये बिना जाति, सम्प्रदाय, रंग तथा राष्ट्रीयता के भेद के सब मनुष्य समान हैं। इसके अतिरिक्त, सृष्टि में समस्त मानव एक ही जाति या श्रेणी के प्राणी हैं, इसलिये ऐसा नहीं हो सकता कि परमात्मा से मिलने के लिये अलग-अलग लोगों के लिये अलग-अलग मार्ग हों। वह मालिक बाहर कहीं इमारतों या ग्रंथों में नहीं, बल्कि हममें से हरएक के अन्दर ही विराजमान है। मनुष्य विश्व का सूक्ष्म रूप है। हमें परमात्मा की खोज अपने शरीर के भीतर ही करनी होगी। परमात्मा को प्राप्त करने की यह योग्यता केवल मनुष्य को ही प्राप्त है जो सम्पूर्ण सृष्टि का शिरोमणि है। यह योग्यता निचली योनियों में किसी को भी प्राप्त नहीं है।

सबसे अधिक महत्वपूर्ण आवश्यकता एक ऐसे जीवित सतगुरु की है, जो हमारे अन्तर में परमात्मा द्वारा रखे इस मार्ग की ओर हमें ले

कृपया इतने निराश न हों, बल्कि अपनी परिस्थितियों के अनुसार अपनी पूरी क़ोशिश करें। मालिक भी आपकी परिस्थितियों को जानता है और यदि आप अपनी पूरी ताकत के साथ अपना कर्तव्य करेंगे, तो वह आप पर अपनी दया की वर्षा करेगा।

(३५४)

जिसे लोग शैतान कहते हैं, वह वही शक्ति है जिसे सन्तमत में काल कहा जाता है। नाम से कोई अन्तर नहीं पड़ता। शक्ति एक ही है। मन भी हरएक आत्मा के साथ जुड़ा हुआ है। काल भी मालिक से ही आया है। इस सृष्टि में मालिक के सिवाय किसी ने कुछ भी उत्पन्न नहीं किया है। प्रत्येक वस्तु उसका अपना ही प्रसार है।

मृत व्यक्तियों की आत्माएँ अपने कर्मों के अनुसार दूसरा शरीर प्राप्त करती हैं। उनके प्रति अपने लगाव के कारण हमें ऐसा लगता है कि वे हम से बातें कर रही हैं।

परमात्मा वह शक्ति है जो अपनी सृष्टि के कण-कण में व्याप्त है। पर मनुष्य चोले में ही हम अपने शरीर के अन्दर उसका अनुभव कर सकते हैं।

सन्तों के इस मार्ग में हरएक नहीं आयेगा। मालिक की दया और बख्शिश से अनन्त आत्माओं में से कोई एक आत्मा चुनी जाती है। इस तरह चुना जाना हमारे हाथ में नहीं है। हमेशा के लिये मुक्त करने के लिये आत्माओं का चुनाव मालिक किस कसौटी से करता है, इसे केवल वही जानता है।

इन प्रश्नों में अपने मन को उलझाये रखने से यह बेहतर होगा कि आप रोज़ अपना भजन बराबर करते रहें, और इसी से आपको असली फायदा होगा। मन काल का एजेण्ट अथवा प्रतिनिधि है, और भजन-सुमिरन से दूर रहना चाहता है, इसलिये प्रश्न पूछने में वह कभी नहीं थकता।

(३५५)

आप जानते ही हैं कि सन्तमत के अनुसार इस संसार की किसी

भी वस्तु से, यहाँ तक कि इस जीवन से भी, मोह या लगाव होना सत्संगी के मार्ग में एक बड़ा रोड़ा है। ये लगाव ही हमें बार-बार इस संसार में लाते हैं। खूब भजन-सुमिरन करने वाला व्यक्ति भी यदि संसार की वस्तुओं अथवा लोगों की ममता में जकड़ा हुआ है, तो उसे इन बन्धनों के कारण इस जगत में वापस आना ही पड़ेगा। इस दृष्टि से आप यह खुद समझ सकते हैं कि अपनी मृत बहन के बारे में आपका सोचते रहना कहां तक उचित है? उसने यह धरती छोड़ दी और जहाँ उसके कर्म ले गये, वहाँ चली गयी। कोई भी व्यक्ति, चाहे वह मृत हो या जीवित, किसी दूसरे के जीवन को बदल नहीं सकता। वह कर्मों के कानून के द्वारा तय हो चुका है। आप वहीं जाते हैं, जहाँ आपका लगाव या मोह है और जो आप बोते हैं, उसे ही काटते हैं। यह अनादि और अटल कानून है जो इस सृष्टि में क्रियाशील है और प्रत्येक आत्मा उससे बँधी हुई है। अपनी बहन के बारे में सोच-विचार न करें। इससे कोई लाभ नहीं होगा। आप अपने हीं नहीं बल्कि उसके हितों को भी नुकसान पहुँचायेंगे। प्रेम और स्नेह जब तक मनुष्य जीवित है तभी तक हैं। हमारे नाते और कुछ नही केवल कर्मों के हिसाब चुकाने के बहाने मात्र है।

यदि आप मालिक में विश्वास रखेंगे, तो आपको किसी प्रकार का कोई भय नही रहेगा। यदि आप महसूस करते हैं कि आपका सतगुरु सदा आपके साथ है, तब फिर भय का क्या कारण हो सकता है? इस संसार के पदार्थों और लोगों के प्रति अनासक्ति की भावना अपनायें।

(३५६)

मुझे अफ़सोस है कि आपने मेरे पिछले पत्र को ठीक तरह से नही समझा। आपने अपनी माँ को कितना ही प्यार क्यों न किया हो, अब वे नही रहीं, इस संसार में सारा प्रेम शरीर के कारण होता है। जब वही नहीं रहा, तब प्रेम कहां है? जिस शरीर के साथ हमारा इतना प्रेम या मोह था, क्या उसे हम अपने ही हाथों से चिता में नहीं जलाते

कृपया इतने निराश न हों, बल्कि अपनी परिस्थितियों के अनुसार अपनी पूरी कोशिश करें। मालिक भी आपकी परिस्थितियों को जानता है और यदि आप अपनी पूरी ताकत के साथ अपना कर्तव्य करेंगे, तो वह आप पर अपनी दया की वर्षा करेगा।

(३५४)

जिसे लोग शैतान कहते हैं, वह वही शक्ति है जिसे सन्तमत में काल कहा जाता है। नाम से कोई अन्तर नहीं पड़ता। शक्ति एक ही है। मन भी हरएक आत्मा के साथ जुड़ा हुआ है। काल भी मालिक से ही आया है। इस सृष्टि में मालिक के सिवाय किसी ने कुछ भी उत्पन्न नहीं किया है। प्रत्येक वस्तु उसका अपना ही प्रसार है।

मृत व्यक्तियों की आत्माएँ अपने कर्मों के अनुसार दूसरा शरीर प्राप्त करती हैं। उनके प्रति अपने लगाव के कारण हमें ऐसा लगता है कि वे हम से बातें कर रही हैं।

परमात्मा वह शक्ति है जो अपनी सृष्टि के कण-कण में व्याप्त है। पर मनुष्य चोले में ही हम अपने शरीर के अन्दर उसका अनुभव कर सकते हैं।

सन्तों के इस मार्ग में हरएक नहीं आयेगा। मालिक की दया और बख्शिश से अनन्त आत्माओं में से कोई एक आत्मा चुनी जाती है। इस तरह चुना जाना हमारे हाथ में नहीं है। हमेशा के लिये मुक्त करने के लिये आत्माओं का चुनाव मालिक किस कसौटी से करता है, इसे केवल वही जानता है।

इन प्रश्नों में अपने मन को उलझाये रखने से यह बेहतर होगा कि आप रोज़ अपना भजन बराबर करते रहें, और इसी से आपको असली फायदा होगा। मन काल का एजेण्ट अथवा प्रतिनिधि है, और भजन-सुमिरन से दूर रहना चाहता है, इसलिये प्रश्न पूछने में वह कभी नहीं थकता।

(३५५)

आप जानते ही हैं कि सन्तमत के अनुसार इस संसार की किसी

भी वस्तु से, यहाँ तक कि इस जीवन से भी, मोह या लगाव होना सत्संगी के मार्ग में एक बड़ा रोड़ा है। ये लगाव ही हमें बार-बार इस संसार में लाते हैं। खूब भजन-सुमिरन करने वाला व्यक्ति भी यदि संसार की वस्तुओं अथवा लोगों की ममता में जकड़ा हुआ है, तो उसे इन बन्धनों के कारण इस जगत में वापस आना ही पड़ेगा। इस दृष्टि से आप यह खुद समझ सकते हैं कि अपनी मृत बहन के बारे में आपका सोचते रहना कहां तक उचित है? उसने यह धरती छोड़ दी और जहाँ उसके कर्म ले गये, वहाँ चली गयी। कोई भी व्यक्ति, चाहे वह मृत हो या जीवित, किसी दूसरे के जीवन को बदल नहीं सकता। वह कर्मों के कानून के द्वारा तय हो चुका है। आप वहीं जाते हैं, जहाँ आपका लगाव या मोह है और जो आप बोते हैं, उसे ही काटते हैं। यह अनादि और अटल कानून है जो इस सृष्टि में क्रियाशील है और प्रत्येक आत्मा उससे बँधी हुई है। अपनी बहन के बारे में सोच-विचार न करें। इससे कोई लाभ नहीं होगा। आप अपने ही नहीं बल्कि उसके हितों को भी नुकसान पहुँचायेंगे। प्रेम और स्नेह जब तक मनुष्य जीवित है तभी तक हैं। हमारे नाते और कुछ नहीं केवल कर्मों के हिसाब चुकाने के बहाने मात्र हैं।

यदि आप मालिक में विश्वास रखेंगे, तो आपको किसी प्रकार का कोई भय नहीं रहेगा। यदि आप महसूस करते हैं कि आपका सतगुरु सदा आपके साथ है, तब फिर भय का क्या कारण हो सकता है? इस संसार के पदार्थों और लोगों के प्रति अनासक्ति की भावना अपनायें।

(३५६)

मुझे अफ़सोस है कि आपने मेरे पिछले पत्र को ठीक तरह से नहीं समझा। आपने अपनी माँ को कितना ही प्यार क्यों न किया हो, अब वे नहीं रहीं, इस संसार में सारा प्रेम शरीर के कारण होता है। जब वही नहीं रहा, तब प्रेम कहां है? जिस शरीर के साथ हमारा इतना प्रेम या मोह था, क्या उसे हम अपने ही हाथों से चिता में नहीं जलाते

या धरती में नहीं गाड़ते ? एक बार इस शरीर से अलग होने पर आत्मा अपने कर्मों के अनुसार दूसरी जगह चली जाती है। अब वह वापस आकर आपको कैसे दिखाई दे सकेगी ? और इससे आपका कौन-सा प्रयोजन सिद्ध होगा ? उसे दुबारा खोने के बाद आप और अधिक दुःखी हो जायेंगे।

कृपया यथार्थवादी बनें, असलियत को समझें। मौत ज़िन्दगी का कानून है और इस संसार में कोई भी सदा बना नहीं रहेगा। अपनी मृत माता के प्रति आपकी यह जो गाढ़ी ममता है, उससे आप एक ऐसा अटूट बन्धन पैदा कर रहे हैं जो अगले जन्म में आप को इस संसार में वापस खींच कर ला सकता है। सन्तमत के उपदेशों को समझने की कोशिश करें। अपनी ममता के कारण ही हमें इस दुनिया में बार-बार आना पड़ता हैं। सन्तमत के अनुसार यदि हम इस संसार से मुक्त होना चाहते हैं, तो हमें पूरे संसार से अनासक्त होकर, मन और आत्मा को अन्तर में धुन के साथ जोड़ना पड़ेगा। कृपया सब भूल जायें और खुद को सुमिरन तथा भजन में लगा दें। ऐसे विचारों से अपने भविष्य को खतरे में न डालें। अगर कोई आपकी माता की मृत्यु के अवसर पर आपसे मिलने नहीं आया, तो आप क्यों दुःखी हों ? ऐसी महत्वहीन बातों से आपको परेशान और अशांत क्यों होना चाहिये ? यदि आप इतने भावुक रहेंगे तो भजन-सुमिरन कठिन हो जायेगा। जीवन की इन छोटी बातों को महत्व न दें, उन्हें भूल जायें और सुमिरन तथा भजन में लगे रहें। केवल यही एक ऐसी बात है, जो महत्व की है।

ईसा मसीह के कथन का यह अर्थ नहीं है कि हमें पिता और पुत्र तथा माता और पुत्री के बीच कटुता की भावना उत्पन्न करनी चाहिये उनका मतलब केवल यह है कि इन रिश्तों में हमें इतना नहीं बँध जाना चाहिये कि परमात्मा को भूल जायें, और ऐसे बंधन पैदा कर लें जो हमें इस संसार में वापस खींच लायें। हमें सबके प्रति अपना कर्तव्य तो करना है, पर अनासक्त मन के साथ।

(३५७)

सतगुरु का असली प्रकाशवान स्वरूप तीसरे तिल पर है, जहां हमें सुमिरन के द्वारा पहुंचना है । सुमिरन पूरी एकाग्रता और तवज्जह के साथ करना चाहिये और सुमिरन करते समय मन को बाहर नहीं भटकने देना चाहिये । तीसरे तिल या आंखों के केन्द्र से नीचे दिखाई देने वाले दृश्य कभी-कभी ठीक होते हैं, लेकिन ज्यादातर ये मन के द्वारा पैदा किये हुए होते हैं ।

(३५८)

कृपया किसी चीज से न डरें । सन्तमत के अभ्यास में किसी को कोई नुकसान नहीं पहुंच सकता, बल्कि, इस अभ्यास द्वारा स्थायी सुख और आनन्द की प्राप्ति होती है । हमारा ध्यान जब तीसरे तिल पर इकट्ठा होकर ऊपर चढ़ने लगता है, तो वहां कोई पीड़ा और यातना नहीं है, क्योंकि यह सब नेत्रों के नीचे ही है । सतगुरु प्रत्येक सत्संगी की संभाल करता है और, सत्संगी की सीमित बुद्धि के अनुसार अच्छा या बुरा, जो कुछ भी उस पर बीतता है, उस सबकी जानकारी सतगुरु को रहती है और इससे शिष्य का भला ही होता है । जिनको भी मालिक ने इस मार्ग पर ले लिया है, उसका सुरक्षा का हाथ उन सब पर है। जो भी पीड़ा, यातना, भय, दुःख और जो कुछ भी एक शिष्य को झेलना पड़ता है, वह सब कर्मों का हिसाब चुकाने के लिये है, जिस का मतलब बोझ को हल्का करना है ।

(३५९)

इस दुनिया के किसी भी कार्य-क्षेत्र में जब तक हम एक-चित्त होकर पूरे ध्यान से कार्य नही करेंगे तब तक कुछ भी प्राप्त न कर सकेंगे । आध्यात्मिक प्रगति के लिये तो यह बात और भी अधिक जरूरी है । आप एक ही समय दो नावों में सैर नही कर सकते । या तो आप सन्तमत चुन लें या कुछ और ।

सन्तमत किताबें पढने तथा उन पर नोट्स या टिप्पणियां लिखने का विषय नही है । यह एक व्यावहारिक मार्ग है, जिसमें आप पूरे

प्रेम, विश्वास और भक्ति के साथ ही काफी मेहनत की भी ज़रूरत होती है। अगर इस पर अमल नहीं किया गया अर्थात् भजन-सुमिरन नहीं किया गया और सन्तमत के उसूलों के अनुसार रहनी नहीं अपनायी गयी तो कोई नतीजे नहीं निकलेंगे। भजन कभी आसान नहीं होता, क्योंकि आपको अपने अत्यन्त प्रबल शत्रु मन से लड़ना है, जो समस्त विश्व पर हुकूमत कर रहा है। उस पर विजय पाने के लिये आपको अपनी पूरी कोशिश करनी होगी, सम्पूर्ण इच्छा-शक्ति और दृढ़ता से काम लेना होगा। लेकिन आपको हार नहीं माननी है। मालिक अब आपकी ओर है और चाहता है कि आप उससे जा मिलें। विजय तो निश्चित है ही, लेकिन अपनी लगन और मेहनत के द्वारा विजय की घड़ी को आप नज़दीक ला सकते हैं।

(३६०)

अपने बच्चों के बारे में इतने परेशान न हों। वे सब अब सयाने हो गये हैं और अपने हित के बारे में ख़ुद सोच सकते हैं। एक माँ के नाते उन्हें नेक सलाह और सही मार्ग-दर्शन देना आपका कर्तव्य है, और ऐसे वयस्कों के मामले में आप इससे ज़्यादा और कुछ कर भी नहीं सकतीं। हमेशा याद रखें कि एक खास आयु में युवा पीढ़ी अपने बारे में ख़ुद ही सोचना शुरू कर देती है, और जीवन में किसी पर निर्भर नहीं रहती। कभी-कभी वे ऐसे गलत काम करते हैं, जिन्हें हम पसन्द नहीं करते। ऐसे अवसरों पर हमें चाहिये कि उन्हें ठीक सलाह देकर उनकी मदद करें—जो हमारा कर्तव्य है—और बाकी मालिक की मौज पर छोड़ दें।

कृपया याद रखें कि इस संसार में हरएक आदमी अपना प्रारब्ध लेकर आता है, जो पहले से तय की हुई दिशा में उसे बिना किसी झिझक और रहम के ढकेलता रहता है। मनुष्य पूर्णतया असहाय और बेसहारा है। फिर चिन्ता क्यों? अपने बच्चों के प्रति अपने कर्तव्यों का पालन करें और बाकी मालिक पर छोड़ दें। आपकी परेशानियों से चीज़ें बदल नहीं सकेंगी। इसके बदले भजन-सुमिरन

में अपना मन लगायें, क्योंकि हमारे चिन्ता करने से अभ्यास में बहुत नुकसान पहुँचता है। जब हमें चिन्ताएँ घेर लेती हैं तो मन तीसरे तिल पर एकाग्र नहीं हो सकता। किसी भी चीज को अपने भजन-सुमिरन में बाधा नहीं डालने देना चाहिये। अपने बच्चों के प्रति अपने कर्तव्य का पालन करके माता-पिता को सन्तुष्ट हो जाना चाहिये कि उन्होंने अपना फर्ज़ अदा कर लिया और यह सोच कर उनका अन्तर्मन हलका होना चाहिये।

(३६१)

अपनी बेटी के साथ विवाद न करें, क्योंकि इससे उसमें प्रतिक्रिया या विरोध की भावना उत्पन्न हो सकती है। जो कुछ धीरे-धीरे तथा प्रेम और समझदारी से किया जाता है, वह हमेशा बेहतर होता है। इस विषय में अपना फैसला उसे खुद करने दें। सन्तमत के बारे में अपनी भावना तथा उससे आपका कितना हित हुआ है, यह एक माँ के नाते कोमलता तथा प्यार के साथ उसे बता देना चाहिये। वह सन्तमत की पुस्तकें पढ़ सकती है, और इसकी अच्छाइयों को खुद देख सकती है। चिन्ता न करें, अपने भजन-सुमिरन में लगी रहें।

सन्तमत तथा उसके प्रति आपके विश्वास के बारे में जो कुछ वह व्यक्ति कहता है, उसका बुरा न मानें। जब हम जानते हैं कि हम सही राह पर हैं, तो दूसरे इस सम्बन्ध में क्या कहते हैं, इसकी चिन्ता हमें नहीं करनी चाहिये। अपने आदर्शों और विश्वासों को अपनाने के लिये हम हर किसी को न तो मना सकते हैं और न हमें ऐसा करने की कोशिश ही करनी चाहिये। उन्हें अपनी राह पर चलने दें, हमें तो जो एकमात्र और सच्चा मार्ग मिला है, उस पर अडिग रहना है। हमारा अपना विश्वास कभी गिरना नहीं चाहिये। हमारे और हमारे विश्वास के बारे में लोग जो कुछ कहते हैं उसे लेकर हमें विवाद या झगड़ा नहीं करना है। वे जो कुछ कहें, हमें उस पर कोई ध्यान नहीं देना चाहिये, और अप्रिय विवाद को टालने के लिये कोई जवाब नहीं देना चाहिये। अपने विश्वास को रखने की उनको पूरी छूट है; हमें तो

अपनी आस्था और विश्वास पर अडिग रहना है। अपने मन को इन बातों से अशांत न होने दें। लोगों को अपनी इच्छानुसार बोलने से या हमारी आलोचना करने से हम रोक नहीं सकते। मालिक के प्रेम में रहें, और अपना भजन-सुमिरन रोज़ करते रहें।

(३६२)

अपने आसपास की वस्तुओं की देखभाल करने में कोई हानि नहीं है। बल्कि जब तक हम इस संसार में हैं, तब तक ऐसा करना हमारा कर्तव्य है। अपने बगीचे की सँभाल करने तथा सुन्दर पुष्प उगाने में कोई हरज नहीं है। शांतिपूर्ण और सुन्दर वातावरण मन को शांत करने में सहायक होता है, जिससे अभ्यास में मदद मिलती है। पर सच्चा सुख और पूरा आनन्द भजन-सुमिरन से ही प्राप्त होगा। अपने बगीचे में काम करते समय भी आप अपना सुमिरन चालू रख सकते हैं।

(३६३)

'पश्चिम के निवासी के लिये पूर्व के उपदेशों का पालन करना बहुत कठिन है,' आपके इस कथन का क्या अर्थ है, मैं ठीक से नहीं समझ सका। आपका यह विचार सही नहीं है कि सन्तमत की शिक्षा केवल पूर्व के देशों की शिक्षा है। सन्तों के उपदेश विश्वव्यापी हैं, सदा रहे हैं, अब भी हैं और सदा बने रहेंगे। अन्य स्थापित मतों की तरह इस विज्ञान के आरम्भ में मनुष्य का कोई हाथ नहीं है। जन्म-मरण के चक्र से आत्माओं की मुक्ति के लिये इस मार्ग का निर्माण स्वयं मालिक द्वारा किया गया है।

मैं यह भी नहीं समझ सका कि समाज में एक सत्संगी अजब-सा क्यों लगे? वास्तव में सन्तमत में कोई बाहरी कर्मकाण्ड, अनुष्ठान या कोई विशेष ढंग की पोशाक अथवा जीने का कोई बाहरी तरीका अपनाने का नियम ही नहीं है जिसकी वजह से अभ्यासी समाज से अलग नज़र आये। केवल एक ही वस्तु जिसके कारण शायद वह पश्चिमी समाज में भिन्न प्रतीत होता है, वह उसका शाकाहारी भोजन

है, लेकिन ऐसे कई लोग हैं जो स्वास्थ्य, स्वास्थ्य-रक्षा तथा सिद्धान्त के कारण शाकाहारी भोजन ग्रहण करते हैं।

सन्तमत अंतर में आपके मन और आत्मा को शब्द के साथ मिलाता है। हमें एक सामान्य जीवन बिताना है। सन्तमत गृहस्थ-जीवन को अधिक पसन्द करता है, और विवाह तथा परिवार के विरुद्ध नहीं है। सन्तमत केवल मन की एक नई वृत्ति को अपनाना है। हम इस संसार में सामान्य मनुष्य की तरह रहते हैं और परिवार, समाज तथा देश के प्रति अपनी सब जिम्मेदारियों को निभाते हैं, परन्तु एक विरक्त भाव के साथ। हमें किसी व्यक्ति या वस्तु के साथ बहुत ज्यादा मोह न रखने की शिक्षा दी गयी है, क्योंकि उसका अन्त हमेशा यातना और कष्ट होता है।

(२६४)

हमारे पिछले जन्म के कर्मों के आधार पर हमारे जीवन की हर बात पहले से तय है; किन्तु यह हमारी सभी कोशिशों में बाधक नहीं है। जो कोशिश हम करते हैं, वह भी हमारे भाग्य का एक अंग है। वास्तव में, जिसे हम कार्य करने की आजादी या 'स्वतन्त्र-इच्छा' कहते हैं, वह हममें नहीं है। इस प्रश्न पर यहाँ तथा विदेश के सत्संगों में कई बार चर्चा की जा चुकी है और 'परमार्थी-पत्र' तथा 'सन्त-संवाद' में भी आपको इसकी विस्तृत चर्चा मिलेगी। हमारी स्वतन्त्रता बहुत सीमित है और जिसे हम कार्य करने की स्वतन्त्रता कहते हैं, वह भी हमारे जन्म, तथा जिस परिवार या देश में हम जन्म लेते हैं, उस पर, और हमारी शिक्षा आदि पर पूरी तरह इतनी निर्भर है कि उस पर हमारा कोई नियंत्रण या वश नहीं है। इन तमाम परिस्थितियों ने हमारे विचारों को ढाला है और उनके अनुसार ही हमारे कार्य और विचार होते हैं।

हर बात के होने का समय पहले से तय रहता है, परन्तु जैसा कि मैं ऊपर कह चुका हूँ, जीवन में हर बात के लिये हमें प्रयास करना ही पड़ता है। जब हम अपने सांसारिक जीवन को सफल बनाने के

लिये कठिन परिश्रम और ज़ोरदार प्रयत्न करते हैं, तो अपने आध्यात्मिक विकास के मामले में भी हमें ऐसा ही क्यों नहीं करना चाहिये ? भजन-सुमिरन के बारे में पूर्व-निश्चित भाग्य का हम बहाना नहीं ले सकते । ऐसा करना और कुछ नहीं, मालिक के प्रति अपने कर्तव्य का पालन न करने का केवल एक बहाना है । उसकी दया के बिना कुछ नहीं हो सकता, और उसकी दया तथा हमारे प्रयास साथ-साथ चलते हैं । जितनी ज़्यादा कोशिश हम करते हैं, उतनी ही ज्यादा वह दया की वर्षा करता है, ताकि हम और ज़्यादा मेहनत कर सकें । वह सर्व-शक्तिमान है और उस पर कोई नियम लागू नहीं होते । यदि वह चाहे तो अपनी करुणा और दया की हम पर भरपूर वर्षा कर सकता है या चाहे तो रोक कर भी रख सकता है । उससे कोई कारण नहीं पूछ सकता । हमें अपने कर्तव्य में नहीं चूकना चाहिये, और हमसे जिस बात की आशा की जाती है, उसे करना चाहिये । इसके बाद सब कुछ उस पर छोड़ देना चाहिये ।

केवल मांगने से ही क्षमा मिलने की आशा हमें नहीं करनी चाहिये । यह सब यदि इतना सरल होता तब तो हम पाप करते जाते और साथ ही माफी भी माँगते जाते । नहीं, मालिक को हम इस प्रकार धोखा नहीं दे सकते । यदि एक आदमी हत्या करता है और फाँसी पर चढ़ने का समय आने पर माफी माँगता है, तब उसे कोई माफ नहीं करता । जो उसने बोया है, उसे काटना ही होगा, और जो कुछ किया है, उसकी कीमत चुकानी होगी । दुनिया का यही कानून है । अपने सब पापों से छूटने का केवल एक ही उपाय है, और वह है अन्तर में गूंजने वाली शब्द-धुन के साथ अपने मन और आत्मा को जोड़ देना । केवल शब्द में ही वह शक्ति और गुण है, जिसके द्वारा तमाम पाप और कर्म धुल जाते हैं । इसी में सच्ची माफी भी शामिल है ।

जब तक मन है, तब तक विचारों का भण्डार बना रहेगा । इससे हम तभी छुटकारा पा सकेंगे जब हम इस संसार से मुक्त होकर अन्दर के लोकों में जायेंगे, जहाँ हम मन को पीछे छोड़ देते हैं । इस शरीर

में रहते हुए तथा कर्म और सोच-विचार करते हुए हम विचारों से बच नहीं सकते। जीवन विचारों के आसरे ही चलता है, चाहे ये विचार अच्छे हों या बुरे। जब हम इस जीवन से छुटकारा पाकर, उन मण्डलों में आते हैं, जहां मन पीछे छूट जाता है, तब विचार-शून्य हो जाते हैं। मन विचार करने का यंत्र है और जब यह निष्क्रिय बना दिया जाता है, तब निर्मल मुक्त आत्मा के सिवाय कुछ नहीं रहता। मन और आत्मा दोनों का स्वाभाविक झुकाव वापस अपने स्रोत में पहुँचने का है। सो मन जब अपने घर पहुँच जाता है, तब आत्मा परमात्मा में लीन होने के लिये स्वतन्त्र हो जाती है।

(३६५)

जिसे आप भजन में 'अवनति' या 'पीछे हटना' कहते हैं, कृपया उससे निराश न हों। सन्तमत में 'अवनति' जैसी कोई वस्तु नहीं होती। लेकिन सत्संगी के जीवन में कभी-कभी शुष्कता या रूखेपन और भक्ति की कमी के क्षण आते हैं। वास्तव में मायूसी के ऐसे क्षण हमें और ज्यादा मेहनत करने की प्रेरणा देते हैं। अगर ऐसा न हो और हम जो कुछ कर रहे हैं उसमें ही सन्तोष कर लें तो हम जहां हैं वहां से आगे नहीं बढ़ेंगे।

इस मार्ग में निराश व मायूस होने का कोई कारण नहीं है। और सब बातें प्रभु के हाथ में छोड़ते हुए प्रेम और भक्तिपूर्वक अपने भजन में लगे रहें। प्रभु को अपना कर्तव्य मालूम है, और वह उचित मज़दूरी देने में नहीं चूकेगा। जब तक हम इस संसार में हैं, किसी न किसी रूप में सांसारिक चिन्ताएँ बनी ही रहेंगी। उनसे ऊपर उठने की कोशिश करें, और भजन-सुमिरन में मन को लगायें।

(३६६)

जब अभ्यास में रस मिलने लगता है, तब मोह के बन्धन धीरे-धीरे ढीले पड़ने लगते हैं। जब अन्दर आनन्द आने लगता है तो सांसारिक सुख और मोह फीके और बेकार लगने लगते हैं।

(३६७)

किसी भी प्राचीन धर्म-पुस्तक या उपदेश का शाब्दिक अर्थ लगाना आसान नहीं है। इन्हें रूहानी दृष्टिकोण से समझना होगा। वास्तव में, निश्चयपूर्वक यह कह सकना असम्भव है कि विश्व की रचना सबसे पहले कब हुई और इस ग्रह (पृथ्वी) पर पहले पहल मनुष्य कब प्रकट हुआ। पुरातत्व की खोज से हम आज तक के इतिहास का पता लगा सकते हैं, किन्तु संसार में अनेक प्रलय और महा प्रलय हो चुके हैं, जिनका कोई वृत्तान्त पुरातत्व नहीं दे सकता।

(३६८)

जहाँ तक हमारे भजन-सुमिरन का सम्बन्ध है, सतगुरु से दूर रहने से कोई अन्तर नहीं पड़ता। सतगुरु हमेशा आपके साथ हैं। हर एक शिष्य यहाँ आकर हमेशा के लिये गुरु के साथ नहीं रह सकता। नज़दीक रहना इतना ज़रूरी नहीं है जितनी कि मन की वृत्ति। मन को सतगुरु के नज़दीक रहना चाहिये, न कि शरीर को। अपने मन को तीसरे तिल के पार ले जायें; वहाँ सतगुरु आपकी राह देखते हुए मिलेंगे। हमें जीवन में अपनी योजनाओं के बारे में व्यावहारिक होना चाहिये, और कोई भी कदम उठाने का फैसला करने से पहले साव-धानी पूर्वक विचार कर लेना चाहिये।

(३६९)

अगर कोई खुद अपने मन में ऐसी चिन्ताएँ पैदा करके परेशान होता रहे कि गुज़ारे के लिये उसके पास कुछ नहीं है, तो इस हालत में वह सन्तमत और भजन की बात कैसे सोच सकेगा? जीवन में रोज़ की ज़रूरतों को पूरा करने के लिये हमारे पास कमाई, ईमानदारी की कमाई, के कुछ साधन होने चाहियें। सन्तमत यह नहीं चाहता कि हम गुज़ारे के लिये दूसरों के आसरे रहें, बल्कि प्रत्येक व्यक्ति से यह आशा की जाती है कि वह ईमानदारी से अपनी रोज़ी कमाये। और फिर आप लगातार महीनों तथा वर्षों तक सुमिरन, भजन और सन्त-मत के साहित्य का अध्ययन पूरे चौबीस घण्टे कैसे कर सकेंगे? आप

के पत्र से जो मैं समझ रहा हूँ, वह यह है कि आप कठिन मेहनत से बचना चाहते हैं और जीवन के प्रति अपनी ज़िम्मेदारियों से जी चुराना चाहते हैं। अपने आपको धोखा देने की कोशिश न करें, और जीवन से दूर न भागें।

कोई काम ढूढें, अपनी रोज़ी ख़ुद कमायें और साथ ही साथ रोज़ भजन-सुमिरन किया करें। सन्तमत कायरों के लिये नहीं है। हमें इस दुनिया में रहना है, अपने कर्तव्यों का पालन करना है, और साथ ही साथ रोज अपने रूहानी अभ्यास को भी समय देना है। यदि इस समय ही ढाई घण्टे कठिन प्रतीत होते हैं, तो आप इस बात की आशा कैसे कर सकते हैं कि आपका मन सुमिरन, भजन तथा अध्ययन में पूरे चौबीस घण्टे लगा रहेगा? यह तो जीवन से भागने का एक बहाना मात्र है। आपको ऐसा नहीं करना चाहिये। साहसी बनें, जीवन का सामना करें और कठिन परिश्रम से दूर न भागें।

(३७०)

सन्तमत में क़ाफ़ी और चाय पीना मना नहीं है। किन्तु ये उत्तेजक पेय हैं। प्रत्येक व्यक्ति को यह पता लगा लेना चाहिये कि इनका उस पर क्या प्रभाव पड़ता है, और इसके बाद ही इन्हें लेना चाहिये।

(३७१)

जहाँ तक सुमिरन में आपको होने वाली कठिनाई की बात है, कृपया याद रखें कि इस अभ्यास में सफलता प्रेम तथा भक्ति के साथ की गई हमारी कोशिशों पर ही नहीं, बल्कि हमारे पिछले कर्मों पर भी निर्भर है। हमें कभी चिन्तित या निराश नहीं होना चाहिये। शुरू में, प्रगति सदा धीमी होती है। मन पर काबू पाना जीवन-भर का काम है। अब आप यह अच्छी तरह जान गये हैं कि जिसे भी नामदान मिला है वह अपनी मंज़िल पर अवश्य पहुँचेगा। सवाल केवल समय का है। प्रेम और भक्तिपूर्वक अपना कर्तव्य करें और बाक़ी सतगुरु पर छोड़ दें। इस मार्ग में कोई भी कोशिश व्यर्थ नहीं जाती।

(३७२)

अभ्यास के समय आप जो कुछ भी देखें—चाहे वह रंग हो या प्रकाश की चमक, अथवा अच्छे या बुरे चेहरे हों, या कोई अन्य दृश्य—उनसे आप किसी प्रकार का लगाव न रखें। सुमिरन के दौरान अन्तर में आप जो कुछ देखें, अपने मन को उसके पीछे दौड़ने न दें, बल्कि हमेशा मन ही मन में पवित्र नामों का जप करते हुए तीसरे तिल पर अपना ख़याल जमाये रखें। आप इन दृश्यों और आवाज़ों के पीछे दौड़ती हैं, तो इसका अर्थ है कि केन्द्र से मन की एकाग्रता हट गयी है, जो हमारा उद्देश्य नहीं है। हमारा ध्येय मन को अडिग और निश्चल बना कर पूरी तवज्जह को तीसरे तिल पर स्थिर करना है। नज़ारे देखने या आवाज़ें सुनने की हमारी कोई कामना नहीं होनी चाहिये। भजन-सुमिरन हम इसलिये करते हैं कि मालिक के बिना हम रह नहीं सकते, और उसके पास वापस जाना चाहते हैं। हमारा केवल यही उद्देश्य है और हमारा अभ्यास भी केवल इसी लिये है। यदि आन्तरिक यात्रा के दौरान हमें कुछ दिखायी दे या सुनाई पड़े, तो हमें उनमें से किसी की ओर आकर्षित नहीं होना है, क्योंकि इससे हमारी प्रगति रुक जायेगी। अन्दर जाने से कभी न डरें। जिसके साथ उसका सतगुरु सदा साथ हो, उसको कोई खतरा नहीं है। आपका सतगुरु अन्तर में आपसे मिलने के लिये इन्तिज़ार कर रहा है, और अन्तर में आपका प्रवेश खुशी और आनन्द से पूर्ण होगा।

भजन-सुमिरन के बहाने अपने दायित्वों और ज़िम्मेदारियों से भागने की कोशिश न करें। सन्तमत यह नहीं चाहता कि हम अपने पारिवारिक जीवन को त्याग दें या उसे अशांत बना दें। दुनिया के दूसरे कार्यों के जैसे ही रूहानी अभ्यास का भी अपना समय है। पूरे चौबीस घण्टे हम भजन-सुमिरन नहीं कर सकते। प्रातःकाल का समय, अथवा जो दूसरा समय ठीक या सुविधाजनक लगे, उसे भजन में लगाना चाहिये। सांसारिक कारोबार के लिये दिन और रात का बाकी समय आपके पास है। अपने पति को नाराज़ न करें और भजन सुमिरन

(३७३)

आजकल सम्प्रदाय या धर्म को जिस अर्थ में लिया जाता है, उस अर्थ में सन्तमत कोई सम्प्रदाय या धर्म नहीं है। यह एक विज्ञान है; रूहानी अभ्यास की ऐसी विधि है जिसका प्रभु की प्राप्ति के लिये प्रभु के भक्त अभ्यास करते हैं। हर कोई इसका अभ्यास कर सकता है, लेकिन यह सबके लिये नहीं है। हज़रत ईसा अपने समय के सतगुरु थे। परमात्मा द्वारा जो आत्मायें या 'चुने हुए मेमने' उन्हें सौंपे गये थे, उनको बचाने के लिये वे आये थे, और उनके जीवन काल में जो उनकी शरण में आये, उनके पाप उन्होंने अपने ऊपर ले लिये। उन्होंने अपने प्राण केवल अपने शिष्यों के लिये दिये थे, न कि उन लोगों के लिये जो उनके आने से पहले इस पृथ्वी पर थे, और न ही उन लोगों के लिये जो उनके संसार त्यागने के बाद पैदा हुए।

हज़रत ईसा ही परमात्मा के एकमात्र पुत्र नहीं थे। बाइबिल का कथन है कि जितने व्यक्तियों ने उन्हें स्वीकार किया, उन सब को उन्होंने परमात्मा के पुत्र बनने की शक्ति प्रदान की। 'परमात्मा के पुत्रों' का बाइबिल में कई जगह उल्लेख है।

मनुष्य रूप में रहते हुए सतगुरु एक साधारण मनुष्य की तरह व्यवहार करते हैं। वे बीमारियां तथा अन्य तकलीफ़ें भोगते हैं, लेकिन वे कर्मों के दास नहीं होते। अपने शिष्यों के कर्मों को वे अपने ऊपर ले लेते हैं।

(३७४)

जैसा आप सोचते हैं, सतगुरु उस तरह लोगों के कर्म नहीं लिया करते। वे हमें परमात्मा के पास वापस पहुँचने का मार्ग बताते हैं, और हममें से हरएक के अन्दर जो दिव्य-धुन गूंज रही है, उसके साथ हमारी आत्मा को जोड़ देते हैं। वह दिव्य-धुन या शब्द ही सतगुरु का असली स्वरूप है, और वही हम सब को हमारे धुरधाम के पूरे मार्ग में सहायता तथा मार्ग-दर्शन प्रदान करता है। असल में, यह शब्द ही है जो हमें वहां पहुँचाता है।

सतगुरु की शिक्षा के अनुसार किया गया भजन-सुमिरन हमारे पिछले कर्मों को, जिन्हें संचित कर्म कहते हैं, भस्म कर देता है। अपने प्रारब्ध या भाग्य को हमें भुगतना पड़ता है और कोई उसे न तो ले सकता है न बदल सकता है। इस जन्म में किये जाने वाले कर्म 'क्रियमान' कर्म कहलाते हैं। सतगुरु समझाते हैं कि जहाँ तक हो सके, हमें इस जीवन में कोई बुरे कर्म नहीं करने चाहियें। भजन-सुमिरन में करोड़ों जन्मों के कर्मों को जला डालने की शक्ति है।

(३७५)

एक सत्संगी के लिये 'बुरी संगति' की कोई परिभाषा नहीं है। हमें ऐसे व्यक्तियों से दूर रहना चाहिये जिनकी आदतें, चरित्र या रहनी अच्छी न हों, जिनका जीवन या आचरण हमें विचलित करके हमारी शान्ति, सुख और मानसिक संतुलन में बाधा पहुँचाये, जो पूरी तरह सांसारिक भोगों में लिप्त हों और अपनी इन्द्रियों के दास बन गये हों। ऐसी संगति से सत्संगी के मन में भी उसी तरह के विचार उठ सकते हैं, और वे विचार उसे भजन-सुमिरन से, तथा अनासक्ति या संसार से उपराम रहने की जिस भावना को वह अपने अन्दर पैदा करने की कोशिश कर रहा है, उससे अलग कर सकते हैं। सही संगति खोजने के लिये कोई नपे-तुले नियम नहीं हैं। आपका अपना हृदय आपका मार्ग-दर्शन कर सकता है। एक सामान्य नियम यह हो सकता है कि जो कुछ भी आपके भजन-सुमिरन में बाधा पहुंचाये, बुरा है।

(३७६)

कृपया इतने अधिक निराश न हों। बताये गये तरीके से अभ्यास करना ही अपने ध्येय को पाने का एक-मात्र साधन है। मन के साथ हमारी जबरदस्त लड़ाई है, हमें हमेशा सचेत रहना चाहिये। सत्संगियों के मार्ग में निद्रा और आलस्य दो बड़े रोड़े हैं, जिन्हें अपने ध्येय की प्राप्ति के लिये हमें उन्हें दूर करना है। यह सब मन की चालाकी है। जब हमें कोई महत्वपूर्ण सांसारिक कार्य करना होता है, जिस पर हमारी सुरक्षा, भविष्य या हित निर्भर हो, तो हमें कभी

नींद नहीं आती। भजन और सुमिरन के समय इतनी जल्दी नींद हम पर विजय प्राप्त कर लेती है कि शायद एक घण्टा या उससे भी कम समय वीतने से पहले ही हम बिना जाने सो जाते हैं।

मन एक साधारण विरोधी नहीं है। इसके इशारे पर सब, यहां तक कि बड़े-बड़े ज्ञानी, ऋषि तथा धर्मों के प्रवर्तक नाचते हैं। मन इस विश्व का रचयिता या बनाने वाला है और इसका घर दूसरी मंज़िल में है। इस मंज़िल के पार जाने के बाद ही हम इससे सदा के लिये छुटकारा पा सकेंगे। किन्तु हमें निराश नहीं होना चाहिये। यह युद्ध जीतना ही है और एक दिन जीत अवश्य होगी। हमें अपनी कोशिश में कभी ढील नहीं करनी चाहिये। भजन-सुमिरन में लगाया गया आपका प्रत्येक क्षण आपको अपने धाम के अधिक निकट ले जाता है, और इस प्रकार आप पर मालिक़ की दया बरसती है।

घण्टे की आवाज़ अब भी हो रही है। किसी परेशानी, चिन्ता या कर्मों के चक्र के कारण उस केन्द्र से आपका ध्यान नीचे गिर गया है। कृपया याद रखें कि हम भजन-सुमिरन कुछ देखने या कुछ सुनने के लिये नहीं करते, बल्कि इसलिये करते हैं कि हमारा प्रभु से प्यार है और हमारे सतगुरु चाहते हैं कि हम यह अभ्यास करें। इसके फल की हमें चिन्ता नहीं करनी चाहिये। जो कुछ करने के लिये हमें कहा गया है, उसे करना हमारा कर्तव्य है। भजन-सुमिरन से होने वाले लाभ कभी नष्ट नहीं होते; पर उचित समय आने पर ही, जिसे केवल सतगुरु ही जानता है, वे स्पष्ट दिखाई देते हैं। अपने भजन-सुमिरन में नागा न करें और किसी प्रकार की चिन्ता न करें।

(३७७)

दुनिया की ये सब रिश्तेदारियां केवल हमारे कर्मों का हिसाब चुकाने के लिये होती हैं। वे अलग-अलग लोग, जिनको हमसे कर्मों का हिसाब तय करना है, हमारे जीवन में रिश्तेदार, मित्र, परिचित आदि बन कर आते हैं, और जब उनका हिसाब पूरा हो जाता है, तो हमसे अलग हो जाते हैं। ये हमारे कर्म हैं जो हमें इकट्ठा करते हैं, और

कर्म ही हैं जो हमें एक दूसरे से अलग करते हैं। जब तक भाग्य
ाथ रहना वदा है, केवल तव तक ही हम साथ रहते हैं, उससे
नहीं। कभी-कभी भाग्य हमसे ऐसे काम करवा लेता है जो हमारी
ज्ञी के खिलाफ़ होते हैं। भाग्य के हाथ में हम असहाय खिलौने वन
ा हैं।

जो वीत चुका, उसकी चिन्ता में डूबे रहने से कोई फायदा नहीं।
गया परेशान न हों, और अपना भजन-सुमिरन करते रहें, क्योंकि
ही एक वस्तु है जो हमारे साथ जायेगी। एक-मात्र सच्चा मित्र,
श्तेदार, या उसे आप जो भी कहना चाहें, हमारा सतगुरु है, जो
मृत्यु के वाद भी हमें नहीं छोड़ता।

(३७८)

मैं पहले ही आपको लिख चुका हूँ कि आप किसी एक नौकरी
पर जमें रहने की कोशिश करें और इतनी जल्दी नौकरियां न वदलें।
स्थायित्व तभी आयेगा जव हम एक नौकरी पर टिके रहेंगे, और संगठन
में अपना स्थान वना लेंगे। नौकरी में हमें सहनशील, स्वामिभक्त और
मेनेजमेंट तथा कंपनी के प्रति ईमानदार होना चाहिये। हमें कई बातें
सहनी और अनेक असुविधायें भुगतनी पड़ती हैं। वातें हमेशा हमारी
पसंद के अनुसार ही नहीं हुआ करतीं। नौकरी का अर्थ है कि हम
दूसरे के आदेश के अधीन हैं और वह जैसा कहे, वैसा करेंगे। हमें
अनेक वातों का, जिनमें कभी-कभी हमारा आराम भी शामिल है
वलिदान करना पड़ता है। यदि हम स्थान वदलते रहेंगे तो हमारी
साख मिट जायेगी और कोई भी हमें नौकरी मे रखना पसंद न
करेगा।

जीवन में सफल होने के लिये वहुत सी वातें हमें भूलनी पड़ती
और वहुत सी बातें हमें सीखनी पड़ती हैं। सवाल तालमेल व
रखने और परिस्थितियों के अनुसार अपने आपको ढालने का है।
हम अपने आस-पास के वातावरण में अपने को निभा सकें, तो
किसी भी कम्पनी में सुखी रह सकते हैं।

मैं आपको फिर यही सलाह दूंगा कि किसी अच्छी नौकरी में जमे रहें, और जहां काम करें उस संस्था में अपने लिये स्थान बनाने की कोशिश करें। इससे आप जीवन की बहुत सी परेशानियों और चिन्ताओं से बच जायेंगे।

(३७९)

संसार की समस्याएँ न तो कभी समाप्त हुई हैं और न कभी होंगी। इस संसार में ऐसा कोई व्यक्ति नहीं जो यह कह सके कि जीवन में उसकी कोई समस्या नहीं है। हमारा कर्तव्य भजन-सुमिरन के द्वारा अपनी इच्छा शक्ति को इतना मजबूत बनाना है कि हम जीवन की कठिनाइयों से ऊपर उठ सकें। जब समस्यायें आयें तो उन्हें हल करने के लिये कोशिश करना हमारा कर्तव्य है, और हमारी कोशिशों का नतीजा चाहे जो भी हो, हमें मालिक की मौज में रहने का यत्न करना चाहिये। रूहानी अभ्यास के द्वारा हमारी समस्याएँ तरह से हल हो जाती हैं, क्योंकि इसके द्वारा हम संसार और उसके पदार्थों को भूल जाते हैं। इसीलिये बिना इस बात की चिन्ता किये कि जीवन में आपको क्या मिल रहा है, प्रेम और श्रद्धापूर्वक भजन-सुमिरन करते रहें।

(३८०)

उचित और न्यायपूर्ण उपायों से आप अपनी आमदनी में वृद्धि कर सकते हैं। पूंजी लगाना ठीक है, किन्तु शेयर बाज़ार में सट्टा खेलने में जोखिम भी रहती है। इस बाजार में भाग्य बनते ही नहीं, बिगड़ते भी हैं। सो यह एक जोखिम भरा खेल है, और किसी को ऐसे जुए में नहीं फंसना चाहिये। पूंजी लगाना एक बात है, किन्तु उधार ली गयी पूंजी को सट्टे में लगाना और लाभ की आशा में बराबर खरीद-बिक्री करते रहना, हमारे ख़याल को दुनिया में फंसा कर रखने के लिये मन की एक और चाल है। अब यह आपके तय करने की बात है कि बिना किसी जोखिम के और ईमानदारी के साथ धन कैसे कमाया जाये।

(३८१)

मालिक के प्रति अपने कर्तव्य के पालन में हमें आलस नहीं करना चाहिये। जब हम अपने सांसारिक कामों के लिये इतनी कड़ी मेहनत करते हैं और अपने समय के इतने पाबन्द रहते हैं, तो उस परम सुख की प्राप्ति के लिये मेहनत करने में हमें आलस क्यों करना चाहिये ? अपने भजन-सुमिरन में लापरवाही न करें। अपना अभ्यास रोज़ निश्चित समय पर करना चाहिये, ताकि निश्चित समय पर बैठने और अन्तर में एकाग्र होने की मन को आदत पड़ जाये।

(३८२)

यह खुशी की बात है कि आप नाम लेना चाहते हैं। यह इच्छा सराहनीय है, और जीवों के मन में स्वयं मालिक द्वारा पैदा की जाती है।

आपकी समस्या के बारे में मेरा सुझाव है कि आप सन्तमत की पुस्तकें ज़ोर से बोल कर पढ़ें, और किसी दुष्टात्मा के प्रभाव की चिन्ता न करें। यदि आप श्रद्धा और प्रेमपूर्वक सन्तमत की पुस्तकों का अध्ययन शुरू करेंगे, तो आप पर कोई मुसीबत नहीं आ सकती। उन्हें उच्च स्वर में पढ़ने से आप को कोई भय नहीं सतायेगा, और आपकी कोई हानि नहीं हो सकेगी। साहसी और दृढ़ निश्चयी बनें, क्योंकि ऐसी दुरात्माएँ केवल कमज़ोर दिमाग के लोगों पर ही असर डालती हैं।

(३८३)

सन्तमत बहुत सरल और स्पष्ट है। यह हमसे मालिक के प्रति कुछ कर्तव्यों की आशा करता है, जिनको करने में कभी लापरवाही नहीं बरती जानी चाहिये, और सन्तमत के सिद्धांतों के विपरीत कभी कुछ नहीं करना चाहिये। सन्तों की शिक्षा के अनुसार हमें अपना जीवन बिताना होगा, और नियमित रूप से रोज रूहानी अभ्यास

करना होगा। बाकी सांसारिक समस्याओं का समाधान हर मनुष्य को अपनी परिस्थिति के अनुसार ख़ुद करना पड़ता है।

(३८४)

आप बेकार की बातें सोच-सोच कर परेशान होते रहते हैं। मन हमेशा ऐसा ही करता है। पहले यह ऐसी बातें सोचता या समस्याएं उठाता है जो मौजूद नहीं हैं और फिर या तो उन समस्याओं को सुलझाने की कोशिश करने लगता हैं, या उन्हें वास्तविक मानकर उन काल्पनिक समस्याओं के बारे में परेशान होने लगता है। मन की यह भी एक चालाकी हैं, जिसके द्वारा वह हमें भजन-सुमिरन से दूर रखता है और ख़ुद भी दु:खी और बेचैन रहता है। ऐसे मन को स्थिर करना कठिन है। मन तभी स्थिर हो सकेगा जब हम पहले इसे तनाव रहित और सन्तोषी बना लें। इसलिये सन्त हमेशा यही समझाते हैं कि प्रभु की मौज में रहने की कोशिश करो। मन जब यह अवस्था प्राप्त कर लेता है, तब उसे तीसरे तिल पर स्थिर करना आसान हो जाता हैं।

मैं पहले भी आपको लिख चुका हूं कि यह सब केवल आपके मन की कल्पना है। इन बातों की कल्पना करने में जो समय आप लगाते हैं, उसका सदुपयोग भजन-सुमिरन में किया जा सकता है।

(३८५)

मैं पहले भी आपको लिख चुका हूं कि आपके प्रेम और भक्ति की मैं बहुत सराहना करता हूं, लेकिन इन सबको बाहर प्रकट करके खर्च कर डालने के बदले अन्तर में हज़म करना चाहिये। सन्तमत में प्रीति और भक्ति को अन्तर में इतना अधिक समा लेना चाहिये, कि वे हमारे अंग ही बन जायें। सन्तमत चाहता है कि अपनी पूंजी का दिखावा या प्रदर्शन करने के बजाय हम उसे अपने अन्तर के खजाने में संभाल कर रखें। ऐसी पूंजी को हम अन्तर में जितना ही अधिक पचायेंगे, उतनी ही अधिक यह बढ़ेगी। इसे भजन और सुमिरन में बदल दें और मालिक इसकी और अधिक वर्षा करेंगे।

(३८६)

अपने आपरेशन (शल्यक्रिया) के समय आपको ऐसा प्रतीत होना कि आप सुन्दर प्रकाश में ऊपर उठ रहे हैं, आपके हृदय की निर्मलता और मालिक के प्रति आपके महान प्रेम का चिन्ह है। आपरेशन के समय पैदा की गई बेहोशी की अवस्था में हमारा ध्यान अपने आप पंचेन्द्रियों से निकलकर अन्तर में केन्द्रित हो जाता है। मालिक ने आपके अन्तर में रखी हुई ज्योति और प्रीति की एक झलक आपको दिखा दी है, इसलिये अब आपको चाहिये कि इस स्थिति को भजन-सुमिरन के द्वारा पैदा करने की कोशिश करें।

(३८७)

क्या कोई जीवन की तमाम समस्याओं को कभी सुलझा सका है ? यदि हम समस्याएँ पैदा करते रहें और उनके बारे में परेशान होते रहें, तो भजन-सुमिरन के लिये समय कहां बचेगा ? अगर यह सब इसी तरह होता रहा तो मन कभी भी शांत और स्थिर नहीं होगा। मन की यह बुरी आदत है कि वह पहले समस्यायें पैदा करता है और फिर जब उन्हें सुलझा नहीं सकता तो परेशान होने लगता है। ऐसा वह पूरे जीवन भर करता रहता है। हमें मन की इस बुरी आदत को रोकना है, और उससे कह देना है कि मालिक की मौज में रहे।

हमारा पूरा प्रारब्ध पहले से तय है, और हम जो बो चुके हैं, उसे ही हमें काटना है, तो फिर चिन्ता क्यों ? परिस्थितियों के अनुसार जो कुछ सबसे अच्छा हो उसे करते हुए जीवन का प्रसन्नता के साथ सामना करें और फिर बाकी सब कुछ मालिक पर छोड़ दें। हमारा दिल साफ़ रहना चाहिये, और यदि ऐसा है तो फिर चिन्ता का कोई कारण नही। इस संसार में तो जीवन सदा इसी प्रकार चलता रहेगा। यह जन्म भले और बुरे, दोनों प्रकार के कर्मों के मेल से हुआ है। ये उतार-चढ़ाव इसीलिये हैं कि हम प्रभु को याद करते हुए उसके भजन-सुमिरन में लगे रहकर, इनसे ऊपर उठने की

कोशिश करें। इससे आप को वह सुख मिलेगा, जिसकी आपको खोज है, तथा फिर वह और अधिक आनन्द में विकसित हो जायेगा।

(३८८)

भोजन को चुनने में असावधानी करना और आवश्यकता से अधिक भोजन करना स्वास्थ्य की दृष्टि से भी अच्छा नहीं है। हमें अपने स्वास्थ्य का ध्यान रखना चाहिये। एक प्रसिद्ध कहावत है कि हमें जीने के लिए खाना चाहिये, न कि खाने के लिए जीना।

(३८९)

कृपया याद रखें कि गलती जीवन में हम सबसे हो जाती है। अगर कोई सच्चे दिल से पछतावा करता है तो उसे क्षमा कर देना और गलती को भूल जाना ही सबसे अच्छी बात होगी। तिल को ताड़ बनाने से कोई लाभ नहीं। दूसरों की गलतियां निकालते समय हमें याद रखना चाहिये कि एक दिन हम खुद कटहरे में आ सकते हैं। मेरी सलाह है कि आप अपनी पत्नी के इस सच्चे पश्चात्ताप को स्वीकार करें और इस बात को समाप्त कर दें। अकारण ही अपने आपको दुःखी न बनायें। प्रेम और सुख से भरा जीवन बिताने का यत्न करें, और अपने तथा अपने बच्चों के हित में घर के सद्भाव को बिगड़ने न दें। प्रेम से प्रेम की उत्पत्ति होती है। ईर्ष्या और शंका पारिवारिक जीवन में ज़हर भर देती हैं।

(३९०)

अगर हम सन्तमत के सिद्धान्तों पर अडिग रहते हैं तो मालिक भी हमारी सहायता करता है। आपने खुद यह देख लिया है कि आप के पति को जो डाक्टरों के अनुसार 'मांस न खाकर अपनी ज़िन्दगी को ख़तरे में डाल रहे थे' मांस छोड़ने से फायदा हुआ है और न सिर्फ उनका वजन ही बढ़ा है, बल्कि वे अपने गंठिया रोग से भी अच्छे हो गये। मालिक का, उसकी करुणा और दया के लिये शुक्राना करें।

(३९१)

एक क्षण के लिये भी यह न समझें कि पन्द्रह या बीस वरस

पहले आप जहां थे, वहीं फिर वापस पहुँच गये हैं। एक बार किया गया भजन-सुमिरन कभी व्यर्थ नहीं जाता, चाहे कुछ कारणों से प्रगति में कुछ समय के लिये रुकावट आ जाये। आपकी मेहनत और कमाई सतगुरु के पास सुरक्षित रखी है और समय आने पर आपको कई गुना अधिक मात्रा में दे दी जायेगी। जब आप बैठे हुए हों, चल रहे हों, भोजन या विश्राम कर रहे हों और अन्य ऐसे अवसरों पर भी, जब आपको ऐसा कोई विशेष काम न हो, जिसमें चित्त की एकाग्रता की ज़रूरत हो, सुमिरन करते रहें। इस प्रकार दिन के समय सुमिरन किया करें, और रात को सोने से पहले तथा सुबह बिस्तर से उठते समय भी सुमिरन करें। इस प्रकार के सुमिरन से मन पर कोई भार नहीं पड़ता; फिर देखिये कि इसके परिणाम कैसे होते हैं।

नियमित समय पर अभ्यास करने की आपकी गहरी इच्छा के बारे में जान कर मुझे खुशी हुई। यह प्रबल और सच्ची कामना भी सत्संगी के खाते में जमा की जाती है।

(३९२)

तलाक के बारे में मेरे विचार सबको मालूम हैं। मैं इसके पक्ष में कभी नहीं रहा, और मैंने सदा यही सलाह दी है कि पारिवारिक सद्भाव और शांति कायम रखनी चाहिये खास कर ऐसे परिवार में जिसमें बच्चे भी हैं। ऐसी परिस्थितियों में अपने माता-पिता के विचारों और भावनाओं के कारण निर्दोष बच्चों को ही सबसे ज्यादा दुःख भोगना पड़ता है।

सत्संगियों के साथ मेरा नाता भौतिक और सांसारिक कार्यों के दायरे से अलग है। मैं चाहता हूँ कि हरएक सत्संगी सन्तमत के सिद्धान्तों के अनुसार अपना जीवन व्यतीत करे और निजी मामलों में जो उसे उचित समझ पड़े, वह करे। मैं अपने को इस योग्य नहीं समझता कि उनकी व्यक्तिगत या निजी बातों में दख़ल दूं।

(३९३)

बीमारियों के बारे में डाक्टरों या विशेषज्ञों से सलाह लेनी

चाहिये। चिन्ता करने की ज़रूरत नहीं, क्योंकि चिन्ता से आपको किसी प्रकार की सहायता नहीं मिलेगी। उससे आप और कुछ नहीं, अधिक दुःखी ही होंगे। जब हमारी कोई समस्या हो, तो हमेशा उसे अपने विवेक और समझदारी से सुलझाने की कोशिश करनी चाहिये, और फिर बाकी बातें मालिक पर छोड़ देनी चाहियें।

(३९४)

आपके बच्चों का प्रिय कुत्ता, जो कष्ट पा रहा है और इतना बीमार है कि उसके बचने की आशा नहीं है, उसकी जितनी अच्छी से अच्छी देखभाल आप कर सकें, करें। जब कोई इन्सान किसी असाध्य रोग से पीड़ित होता है—और कैंसर जैसी अनेक घातक बीमारियों से गम्भीर रूप से पीड़ित ऐसे लोग बहुत हैं—तो हम उन के प्राण नहीं लेते, बल्कि जितनी हो सके उनकी सहायता करने की पूरी कोशिश करते हैं। पशु, पक्षी और यहाँ तक कि पौधों तक को अपने कर्म भुगतने पड़ते हैं। इस संसार में कर्म का विधान बड़ी नष्ठुरतापूर्वक काम कर रहा है, और जो कुछ पहले बो चुके हैं, उसी को सब काट रहे हैं।

(३९५)

मुझे खुशी है कि आपके यहाँ नियमित रूप से सत्संग होता है। संगत ज़्यादा आती है या कम इसकी चिन्ता न करें। ज़रूरत तो इस बात की है कि सद्भाव का वातावरण और भावना बनी रहे।

पालतू जानवरों के बारे में जो कुछ पहले कह चुका हूँ, वह अब भी लागू होता है। जहाँ तक हो सके हमें मांस खाने वाले जानवरों को नहीं पालना चाहिये। उन्हें धीरे-धीरे शाकाहारी भोजन पर रहने की आदत डालनी चाहिये या उन्हें किसी ऐसी समिति को सौंप देना चाहिये जो उनकी सँभाल करते हैं। मनुष्यों के प्रति हमारा मोह और लगाव पहले से ही इतना ज़्यादा है, कि उससे छुटकारा पाने में हमें बड़ी कठिनाई होती है। तब जानवरों के साथ और ममता क्यों पैदा की जाये ? आप अपने पालतू पशु को चाहे जैसे पालें लेकिन सन्तमत

के सिद्धान्त बदल नहीं सकते। पालतू पशुओं को मांस खिलाकर आप अपने कर्मों के बोझ को बढ़ा रहे हैं।

जहाँ तक आपके बच्चों और पति के मांस खाने का सवाल है, इसमें आपका कोई वस नहीं है, इस बात को लेकर घर की शान्ति भंग नहीं होनी चाहिये। अपने बच्चों तथा अपने पति के लिये मांस पकाते समय तथा उन्हें मांस परोसते समय पवित्र नामों का सुमिरन चालू रखा करें। आपके पति सत्संगी नहीं हैं, इसलिये जब तक वे अपनी स्वतन्त्र इच्छा से कोई निर्णय न लें, तब तक उनका आहार क्या रहेगा, यह उनके सोचने की बात है। बड़े होने पर बच्चे अपने बारे में खुद निर्णय कर सकते हैं। परन्तु किसी भी परिस्थिति या हालात में एक सत्संगी को मांस आदि खाने की इजाज़त नहीं दी जा सकती।

(३९६)

आपके प्रयास और अभ्यास के फलस्वरूप आपका मन विरुद्ध दिशा में जाना छोड़कर आपके अनुकूल या माफ़िक हो जायेगा। मेहनत और दृढ़ इरादे के द्वारा हम जीवन में बहुत कुछ प्राप्त कर सकते हैं। हमारा भजन-सुमिरन भी गिराने वाले अवगुणों से छुटकारा पाकर रूहानी दात पाने का एक प्रयास ही है। भजन-सुमिरन मानसिक बल और आध्यात्मिक आनन्द प्रदान करता है, और हमें अधिक आशा और साहस के साथ जीवन का सामना करने के योग्य बनाता है। तब हम यह जान लेते हैं कि हमारे सामने एक लक्ष्य है जिसे हमें प्राप्त करना है; और जो आनन्द वह प्रदान करेगा, वह इस संसार में कोई नहीं दे सकता।

गुरु को हमेशा याद रखने और मन में लगातार सुमिरन करते रहने की कोशिश के सिवाय इस मार्ग में और कोई छोटा रास्ता नहीं है। इस पथ में हमें अपनी पूरी कोशिश और मेहनत करनी पड़ती है क्योंकि मन, जो कि अत्यन्त प्रबल है, सदैव हमारे ध्यान को सुमिरन और भजन दोनों से दूर रखने की कोशिश करता रहता है। यह नहीं चाहता कि हम परमात्मा की ओर जायें, क्योंकि हमें सदैव आवा

घुमाते रखना ही उसका कर्तव्य है। मन के विरुद्ध हमें बड़ी ज़बरदस्त लड़ाई लड़नी पड़ती है। मन को वश में रखने के लिये लगातार कोशिश करना बहुत ज़रूरी है। ज़रा-सा मौका पाते ही यह हाथ से निकल जाता है। हमेशा भजन-सुमिरन को रोज़ समय दें और मन को एक दिन के लिये भी छूट न दें। मेहनत के बिना कुछ भी प्राप्त नहीं हो सकता। यदि हम अपनी पूरी कोशिश करते रहेंगे तो एक दिन विजय ज़रूर मिलेगी।

(३९७)

मन को परास्त करना और उसे आध्यात्मिक अनुशासन में रखना कितना कठिन है, यह मैं अच्छी तरह महसूस करता हूं। हर सत्संगी की यही शिकायत है। मन को वश में करने का एकमात्र उपाय है भजन-सुमिरन और मालिक की भक्ति। कृपया अत्यन्त नियमपूर्वक प्रतिदिन भजन-सुमिरन करें। इस लोक में तथा परलोक में अनन्त शांति और आनन्द का यही एकमात्र स्रोत है। अपने मन को सदैव सुमिरन में लगाकर रखें और नित्य कुछ समय सन्तमत के ग्रंथों के अध्ययन में बितायें।

(३९८)

आत्मा की धारा या सुरत के सिमटाव के कारण शुरू-शुरू में शरीर के अंगों में कुछ पीड़ा होना स्वाभाविक है। इसे मालिक की दात मानकर सह लेना चाहिये। धीरे-धीरे शरीर से तीसरे तिल तक आत्मा की धारा का सिमटाव तेज़ तथा पीड़ा-रहित हो जायेगा। परन्तु यह तभी होगा जब आप प्रेम के साथ अपना रूहानी अभ्यास बराबर करेंगे और आंखों के नीचे की दुनिया के प्रति कोई मोह या कामना न रखेंगे।

(३९९)

सांसारिक मामलों में अपनी समस्याओं को सुलझाने के लिये सत्संगियों को अपने साधनों, विवेक और समझ का प्रयोग करना चाहिये।

मेरी राय है कि विवाह के मामले में भावुकता के जोश में कुछ नहीं करना चाहिये, बल्कि प्रश्न के सारे पहलुओं पर विचार करना चाहिये। वैवाहिक जीवन के अपने कर्तव्य, जिम्मेदारियाँ और समस्यायें होती हैं, और लोगों को इन सब का सामना करने के लिये तैयार रहते हुए, घर को सुख से रहने का स्थान बनाना चाहिये।

(४००)

मांस से बनी चीज़ों को बरताने या हाथ में लेने से कर्मों का बोझ बढ़ता है। इसलिये सत्संगियों को हमेशा इससे बचने की कोशिश करनी चाहिये। अपने कर्मों के लिये हर व्यक्ति उत्तरदायी होता है, और हम जो कुछ भी करते या सोचते हैं उसकी कीमत चुकानी पड़ती है। सम्भव हो तो मांस से बनी वस्तुओं से दूर रहने की कोशिश करें। यदि यह बिलकुल ही असम्भव हो तो, ऐसी वस्तुओं को हाथ में लेते समय सुमिरन करें। मांस से बनी वस्तुओं का कारोबार करने से कर्मों का बोझ बढ़ता है क्योंकि चाहे हम खुद हत्या नहीं करते फिर भी इस कारोबार के द्वारा हत्या को प्रोत्साहन देकर उसके अपराधी बन जाते हैं।

(४०१)

कृपया याद रखें कि भावावेश में आने से आपको कोई लाभ नहीं होगा। पूर्ण एकाग्रता की अवस्था प्राप्त करने से पहले भजन-सुमिरन किसी के लिये भी आसान काम नहीं होता। केवल इच्छा मात्र से ही हम आन्तरिक रूहानी मण्डलों में कैसे पहुँच सकते हैं? यह एक ऐसी चीज़ है जो कमाई करने से प्राप्त होती है। हम पर कर्मों का बोझ है, इसलिये प्रगति धीमी, बहुत धीमी होती है। सोचिये, हर प्रकार के कर्म एकत्रित करते हुए आप इस सृष्टि में कब से हैं? फिर आप कुछ महीनों या कुछ वर्षों के अन्दर ही चमत्कार की आशा कैसे कर सकते हैं? यह जीवन भर का संघर्ष है और हमें लगातार प्रयत्न करते रहना है।

एक करोड़पति के द्वार पर किसी भिखारी का अकड़ कर शोर

मचाना उचित नहीं। द्वार नहीं खुलेगा। नम्रता, शरण और दीनता ही मालिक के हृदय को पिघला सकती हैं। हम उससे किसी चीज़ का दावा या तकाज़ा नहीं कर सकते। हम तो केवल याचना या विनती कर सकते हैं। इसलिये व्यर्थ ही इतने उत्तेजित और अशांत न हों। इससे कुछ प्राप्त नहीं होगा। मन के तनाव को दूर करें, और शांति के साथ रोज़ अपना समय भजन-सुमिरन में लगायें। सन्तमत को अथवा सतगुरु को दोष देने के बदले, अपने ही भीतर देखें कि दुर्बलता कहाँ है? क्या आपने भजन-सुमिरन को नित्य नियमपूर्वक समय दिया है? क्या आप अभ्यास के दौरान में पूरे समय अपने ध्यान को तीसरे तिल पर स्थिर रख पाये हैं? क्या आप सम्पूर्ण चेतनता को शरीर से निकालकर तीसरे तिल पर ले आये हैं? धीरे-धीरे अपने आपको संसार से विरक्त करते हुए और अन्तर में मालिक के प्रेम में लगाते हुए, क्या आपने सन्तमत के अनुसार जीवन बिताने की कोशिश की है? क्या अधिकाँश समय आप सुमिरन करते रहे हैं? दूसरे शब्दों में, क्या नामदान के समय दिये गए उपदेशों का आपने पालन किया है? अगर हम अपना कर्तव्य पूरा नहीं कर सके हैं तो सन्तमत में खामियाँ होने की शिकायत कैसे कर सकते हैं?

याद रखें कि इस मार्ग में सभी जीव आगे बढ़ने के लिए मेहनत कर रहे हैं। हम सबको चाहिये कि इस मार्ग में तरक्की करने के लिये सच्चे दिल से पूरी कोशिश करें, और बाकी सब कुछ प्रभु पर छोड़ दें। इतना निराश होने की ज़रूरत नहीं। यह आशा और साहस का मार्ग है। मालिक की मौज में रहें, अपने कर्तव्य का पालन रोज करें और बाकी सब उस पर छोड़ दें। वह सदा आपके साथ है।

(४०२)

कृपया सदा के लिये अपने मन से इस काल्पनिक भय को निकाल दें कि भजन-सुमिरन से आपको किसी प्रकार की हानि हो सकती है, या आप अपने स्थूल शरीर में वापस नहीं आ सकेंगे। ऐसा डर फिज़ूल है। असल में शरीर को खाली करके अन्दर जाना एक सुख और

आनन्द की बात है, जिसे प्राप्त करना शिष्य का ध्येय है। शरीर को खाली करके अन्दर जाने पर हमें सतगुरु के ज्योतिर्मय स्वरूप के दर्शन होंगे, जिसके आनन्द का वर्णन नहीं किया जा सकता। अगर अभ्यास के समय खिंचाव महसूस हो तो उसका प्रतिरोध करने या उसे रोकने की कोशिश न करें, बल्कि उसके आगे अपने को समर्पित कर दें और पूरे समय ध्यानपूर्वक सुमिरन करते रहें। इससे अन्तर में शांति और हर्ष की ऐसी भावना आयेगी जो बाहर कहीं नहीं मिल सकती।

रूहानी मार्ग में एक-सी और लगातार प्रगति कौन कायम रख सकता है? यह शरीर भले और बुरे दोनों तरह के कर्मों का परिणाम या नतीजा है और इन्हीं के आधार पर सबका प्रारब्ध बना है। इस अस्थिर जगत में कुछ भी कभी एक-सा नहीं रहता। कर्मों का चक्र हमारे प्रारब्ध के अनुसार चलता रहता है, और हमारी मेहनत, असफलता और अभ्यास में आने वाले अच्छे और नीरस समयों के लिये यह कर्मों का चक्र ही थोड़ा-बहुत जवाबदार है। अपनी कोशिश में जुटे रहें और बाकी सतगुरु तथा मालिक पर छोड़ दें। एक शिष्य को कभी एक मिनिट के लिये भी हताश नहीं होना चाहिये। शिष्य अपने निज-धाम के मार्ग पर चल रहा है और प्रत्येक पल तथा प्रत्येक प्रयास उसे उसके ध्येय के निकट ला रहे हैं। अभ्यास में कभी नागा या लापरवाही नहीं करनी चाहिये। यही एक चीज है जो समय पड़ने पर काम आती है और जो मालिक को मंजूर है। किसी बात की चिन्ता किये बिना, भय-रहित होकर अपने भजन-सुमिरन को रोज समय दें। मालिक आप पर दया-मेहर करेगा।

(४०३)

मन आपसे जो कुछ कहे, उसे सुनने की कोशिश न करें। उसकी आवाज़ कभी विश्वास योग्य नहीं होती। ध्यान को तीसरे तिल से हटाने के लिये ही मन ऐसे सुझाव दिया करता है। अभ्यास के समय सारा ध्यान भजन और सुमिरन में लगाना चाहिये और ऐसी आवाजों की ओर कोई ध्यान नहीं देना चाहिये, जो आपको अपने म ॅ-दर्शन

के लिये आती प्रतीत हों। शिष्य को गिराने के लिये मन की यह एक चालाकी मात्र है।

मेरा मतलब यह नहीं है कि आप अपनी नौकरी से इस्तीफा दे दें। इस मामले में मन की तथा-कथित आवाज़ के आधार पर नहीं, बल्कि सावधानीपूर्वक सोच समझ कर निर्णय करना चाहिये। कोई काम जल्दी में नहीं करना चाहिये, और सभी दुनियावी बातों में कोई भी फैसला करने से पहले तमाम पहलुओं को समझ लेना चाहिये।

(४०४)

यदि आपने सन्तमत की पुस्तकें सावधानीपूर्वक पढ़ी होतीं तो आपको मालूम होता कि अपनी खुद की अथवा दूसरों की सहायता के लिये तांत्रिक या आत्मिक शक्तियों का किसी भी प्रकार का उपयोग सन्तमत की शिक्षा के खिलाफ़ कार्य है। इस तरीके से आप अपनी आध्यात्मिक प्रगति में बाधा डालते हैं, और दूसरों के मन और इच्छा-शक्ति को भी नुकसान पहुँचाते हैं, भले ही शुरू-शुरू में ऐसा लगे कि कुछ बातों में उनको मदद मिली है।

(४०५)

यदि कोई व्यक्ति बुरी आदतों को छोड़ने का सच्चा इरादा रखता है तो उसके लिये उन्हें छोड़ना कठिन नहीं है। लेकिन इसके लिये कोशिश उसे ख़ुद करनी होगी। अनेक व्यक्ति अपनी बहुत पुरानी आदतें संकल्प और साहस करके छोड़ देते हैं। यह कहना किसी सूरमा के कहने का ढंग नहीं है कि यह मेरे भाग्य में है,या मुझ में स्वतन्त्र इच्छा शक्ति नहीं है और मालिक को ही सब कुछ करना चाहिये। यह तो यथार्थ या असलियत से बचने का एक बहाना मात्र है। मनुष्य को स्वयं प्रयत्न करना होगा। दूसरे तो उसे केवल प्रोत्साहन या हौसला दे सकते हैं और जहाँ तक हो सके उसकी सहायता कर सकते हैं। किसी कमज़ोर व्यक्ति की सहायता करने में कभी कोई हानि नहीं है, लेकिन उस व्यक्ति को भी अपना फ़र्ज़ अदा करना चाहिये। बुराई

से बचने की इच्छा और कोशिश वास्तविक और सच्ची हो तो मालिक की सहायता भी मिलती है।

(४०६)

अन्तर में शिष्य सतगुरु के जिस ज्योतिर्मय स्वरूप का दर्शन करता है, वह हमेशा उसी गुरु का स्वरूप होता है जिसने स्थूल शरीर में उसे नामदान दिया है। सतगुरु का यहां जो शारीरिक रूप होता है, वहां भी उसका वैसा रूप ही दिखायी देता है। इसलिये उसे पहचानने में शिष्य को कोई कठिनाई नहीं होती। सतगुरु और शिष्य का नाता व्यक्तिगत या निजी होता है, और इनके बीच में किसी तीसरे का दख़ल नहीं है।

(४०७)

प्रेम सब कठिनाइयों पर विजयी होता है, और तमाम रुकावटों को हटा देता है। कभी-कभी स्त्री अपने पति से बहुत ज्यादा आशा करती है और परिणाम-स्वरूप पति में इसकी प्रतिक्रिया होती है। प्रेम 'कब्जा' नहीं बल्कि 'आदान-प्रदान' है। सब पुरुष प्रेम का बहुत ज्यादा बाहरी दिखावा पसन्द नहीं करते। आप अपने पति के स्वभाव को अच्छी तरह जानती हैं, इसलिये उनसे आपको सूझ-बूझ और प्रेम के साथ व्यवहार करना चाहिये। जिस परिवार का आधार प्रेम है उसमें शान्ति बनाये रखना कठिन नहीं होता।

(४०८)

आप और आपकी पत्नी सद्भाव सहित एक साथ क्यों नहीं रह सकते, इसका कोई कारण मुझे दिखाई नहीं देता। यदि दो व्यक्तियों के सोचने और समझने में अन्तर हो, तो इसका मतलब यह नहीं कि वे आपस में वैर रखें। एक ही परिवार में सब लोग एक राय के नहीं होते, किन्तु वे एक-दूसरे के जीवन को तो दुःखपूर्ण नहीं बनाते।

कृपया याद रखें कि शान्ति आपके भीतर है, कहीं बाहर नहीं। मेल-जोल के साथ रहें, एक-दूसरे से प्यार करें, और 'दो तथा लो' के सिद्धान्त का पालन करें, तब आपका जीवन सुखी और शांतिपूर्ण होगा।

प्रेम में तमाम विरोध पर विजय पाने और तमाम अड़चनों को तोड़ने की शक्ति है। व्यर्थ ही अपना जीवन दु:खी न बनायें। घर से कहीं दूर चले जाने से आपकी समस्या हल नहीं होगी। सारे कष्टों की जड़ आपके अन्दर, आपके मन में है, और आप जहाँ भी जायेंगे, इसे अपने साथ ही ले जायेंगे। अपने हृदय को प्रेम से भर लें, और आप देखेंगे कि आपके अन्दर गहरी शान्ति आ रही है। हमें कायरों की तरह जीवन से भागना नहीं है, बल्कि दूसरों के दोषों और दुर्बलताओं को महत्व न देकर, उन्हें अनदेखा करते हुए, जीवन में होने वाले उपद्रवों की परवाह न करते हुए एक सूरमा की तरह जीवन का सामना करना है।

आपने एक दिन प्रात:काल के भजन-सुमिरन में हुए उत्साहवर्धक अनुभव के बारे में लिखा है। मन की चालाकियों के शिकार होकर, निराशा के फेर में पड़कर, इसे क्यों बिगाड़ें और आगे होने वाली ति को नुकसान क्यों पहुँचायें ? अपनी भावनाओं को वश में करें, तनाव-रहित जीवन बितायें, और भजन-सुमिरन पर ज़ोर दें। जब तक मन तमाम बुराइयों से बिलकुल मुक्त नहीं हो जाता, और सारे शरीर को खाली करके चेतनता तीसरे तिल पर पूरी तरह इकट्ठी नहीं हो जाती, तब तक आप सतगुरु के शब्द-स्वरूप के दर्शन करने की आशा कैसे कर सकते हैं ? वह आपके अन्तर में है, आपके अपने विचारों से भी अधिक निकट है, और अपने शिष्यों को सदा सहायता और आशीर्वाद प्रदान कर रहा है। करोड़ों जन्मों से कर्मों का जो बोझ हम जमा कर चुके हैं, उन्हें उतार फैंकना है, और इस कार्य में समय लगता है। हमें अधीर नहीं होना चाहिये, बल्कि अपने प्रयासों तथा सतगुरु की दया-मेहर पर निर्भर रहना चाहिये। अपने जीवन में कटुता और विचारों में अस्थिरता पैदा करके अपने पथ को कठिन न बनायें। इस भावुक जोश और चिन्ता से कोई फायदा नहीं।

आशा है कि मैंने जो कुछ कहा है, उस पर आप शांतिपूर्वक

विचार करेंगे और सद्भाव तथा शांतिपूर्ण वातावरण में प्रेम और भक्ति के साथ अपना भजन-सुमिरन करते रहेंगे।

(४०९)

हमें दूसरों के साथ विवाद में उलझने की कोशिश नहीं करनी चाहिये। सबसे पहला सतगुरु कौन था, इसका पता लगाना इतिहासकारों का काम है और किसमें इतनी बुद्धि है कि यह कर सके? कौन जानता है कि सृष्टि कब शुरू हुई? सृष्टि की शुरूआत से ही सतगुरु इस पृथ्वी पर आ रहे हैं। ऐसा कोई लेख नहीं है जो सृष्टि के इतिहास का पता लगा सके। इन व्यर्थ और निस्सार प्रश्नों से हमें कुछ न मिलेगा। हमें वर्तमान समय और वर्तमान सतगुरु से मतलब है। लोगों के विचार और मान्यताएँ अलग-अलग हैं और उन्हें विश्वास दिलाना या बदलना हमारा काम नहीं है। सच्चे जिज्ञासुओं को सन्तमत के बारे में हम जो कुछ जानते हैं, बता देना चाहिये और सन्तमत की पुस्तकों के बारे में उन्हें सलाह देनी चाहिये। उन लोगों को छोड़ देना चाहिये जो केवल तर्क और विवाद में रुचि रखते हैं। अपने भजन-सुमिरन में लगे रहें और दूसरों की चिन्ता न करें।

(४१०)

अपने बनाये हुए कैलेण्डरों के अनुसार सप्ताह के दिन हमारे बनाये हुए हैं। मालिक की दृष्टि में कोई समय, महीना, वर्ष या दिन नहीं है। वह काल और स्थान से परे है, सर्वव्यापी है। सन्तमत किसी विशेष दिन को कोई महत्व नहीं देता। केवल वह दिन और समय हमारे खाते में लिखा जाता है, जिसे हम मालिक की याद में बिताते हैं। केवल वह दिन और वह समय पवित्र है, जब हम उसे याद करते हैं। बाकी सारा समय सांसारिक धंधों में लगे रहने के कारण व्यर्थ बीत रहा है।

(४११)

नामदान लेने के बाद यदि कोई जीव इस संसार में वापस जन्म लेता है, तो उसे एक नये सतगुरु, उस समय के जीवित सतगुरु

मिलना होगा। वही उसके लिये ज़िम्मेदार होगा। इस दुनिया में दुबारा जन्म लेने के बाद आत्मा को पिछले गुरु की याद नहीं रहती और अन्तर में भी वह उन्हें नहीं पहचान सकेगी। जो सतगुरु किसी जीव को इस स्थूल जगत में होने वाले उसके आखिरी जन्म में नाम देंगे, वे ही उसे सचखण्ड तक ले जायेंगे। वे ही सतगुरु अपने शब्द-स्वरूप में उसके सामने प्रकट होंगे और जीव की मृत्यु के समय संभाल करेंगे।

आपके दूसरे प्रश्न केवल बौद्धिक ढंग के हैं। मालिक ने हमें इस विश्व में क्यों पैदा किया और क्यों उसने हमें नीचे भेजा, आदि बातें केवल मालिक ही जानता है। जिस तल पर आप अभी हैं, उस तल पर रहते हुए, जो बातें समझी नहीं जा सकतीं, उनके सम्बन्ध में अपने मन को उलझाने से कोई लाभ नहीं। बेहतर होगा कि अपना भजन और सुमिरन करें और बाकी बातें भूल जायें।

(४१२)

सन्तमत काम-भावना और विवाह का विरोधी नहीं है। काम एक प्राकृतिक प्रवृत्ति है, पर इसे सीमा में रखना और आवश्यक संयम के साथ तृप्त करना चाहिये। इसका उद्देश्य सन्तान अथवा वंश-वृद्धि है, न कि अन्धाधुन्ध भोग। किससे विवाह करना और कब विवाह करना, यह दोनों पक्षों का निजी मामला है। किन्तु काम-वासना की तृप्ति विवाह के अन्तर्गत होनी चाहिये। स्त्री-पुरुष के बीच बिना किसी बन्धन के खुले संबंध को तथा समलैंगिक संबंधों की इजाज़त सन्तमत नहीं देता।

(४१३)

आपको पहले ही कहा जा चुका है कि सन्तमत विवाह के विरुद्ध नहीं है, बशर्ते कि व्यक्ति उचित सीमाओं में रहे और पाशविक वृत्तियों को पूरा करने के लिये ही काम में न लगा रहे। कितनी सीमा कायम रखनी चाहिये, इसके लिये कोई नाप-तोल नहीं है। यह एक ऐसा मामला है, जिसे दोनों साथियों को आपस में तय करना चाहिये।

किसी प्राकृतिक प्रवृत्ति का पूरी तरह से दमन करना या अन्धा-

धुंध उसमें लगे रहना, दोनों ही समान रूप से हानिप्रद हैं। इन्सान को परमात्मा की दी हुई सामान्य बुद्धि, तर्क और ज्ञान का उपयोग करके वे सीमायें तय करनी चाहियें और उनसे बाहर नहीं जाना चाहिये। पति-पत्नी दोनों को इस बारे में सभी पहलुओं से विचार करके आपसी राय से कोई ऐसा बीच का मार्ग तय करना चाहिये जो उनकी रूहानी तरक्की में बाधक न हो।

(४१४)

आप एक साधारण बात पर व्यर्थ उत्तेजित हो रहे हैं। जिन चिकित्सकों की राय पर चलना है, उनमें एलोपैथ, होम्योपैथ, आस्टिओपैथ, नेचरोपैथ, काइरोप्रेक्टर्स आदि शामिल हैं। सन्तमत लोगों की शारीरिक व्याधियों के उपचार के लिये इन मान्य प्रणालियों के विरोध में नहीं है। परन्तु आध्यात्मिक या आत्मिक चिकित्सा, हिप्नोटिज़्म, मेस्मेरिज़्म आदि न तो वांछित हैं, न उचित ही समझे जाते हैं। इस छोटी सी बात से परेशान न हों।

(४१५)

यह आपका अपना मन है जो ऐसे भ्रम पैदा करता है। यह भी याद रखें कि सतगुरु कभी किसी को आत्महत्या करने की सलाह नहीं देगा। ये दृश्य कल्पना द्वारा पैदा किये गये हैं। आत्महत्या एक जघन्य घोर पाप है, और इन्सान को अपने प्राण लेने के लिये बहुत भारी दण्ड भुगतना पड़ता है। यह आपका मन ही है जो आपको धोखा दे रहा है। आत्महत्या जैसी बात कभी सपने में भी न सोचें। आपको एक सूरमा की तरह जीवन बिताना है। अपने मन की बात जो सारी मुसीबतें पैदा करती है, कभी न सुनें। अपने मन को सुमिरन में लगायें। इससे आपको शक्ति मिलेगी।

(४१६)

सुमिरन-भजन के लिये यदि आप चाहें तो दुबारा भी बैठ सकते हैं। भाव यह है कि हमें जल्दबाज़ी नहीं करनी चाहिये। अपने नियमित समय के अलावा सुविधानुसार आप जितनी देर कर सकें, उतने समय

तक अभ्यास करें। जब तक विना प्रतिक्रिया या विरोध के आपका मन एकाग्र होने को राजी रहे आप अभ्यास कर सकते हैं।

जब पूरी चेतनता शरीर के निचले अंगों को छोड़ती है और जब कन्धों तक, और फिर तीसरे तिल तक, शरीर सुन्न और निर्जीव हो जाता है, तब रोशनी अपने आप प्रकट होती है। चेतनता जब तक इस स्थान पर नहीं आयेगी तब तक तीसरे तिल में स्थित ज्योति को वह नहीं देख सकेगी। ज्योति तो वहाँ हमेशा है, पर उसे देखने के लिये हमें उस तक पहुँचना होगा। सुमिरन पर ज़ोर दें। यह सुमिरन ही है जो शरीर के निचले अंगों को सम्पूर्ण चेतनता से खाली करेगा और धीरे-धीरे उसे ऊपर ले जायेगा। यह प्रेम, भक्ति और मेहनत का मार्ग है। जब हम ईमानदारी के साथ कोशिश करते हैं, तो प्रभु की दया-मेहर हमारी सहायता के लिये तैयार रहती है।

(४१७)

अपने पति के साथ के आपके लम्बे विवाहित जीवन का इतिहास और नये लगाव, ये सारी आपकी निजी बातें हैं, जिनके बारे में मैं न तो दखल दे सकता हूं और न ही कोई सलाह। लोगों के साथ मेरा नाता एक भिन्न सतह पर है। मेरी सलाह हमेशा भजन सुमिरन तथा सन्तमत की शिक्षा के अनुसार जीवन बिताने की है। मनुष्य-जन्म का प्रमुख उद्देश्य इस सृष्टि से छुटकारा पाना, तथा अपने को इसके समस्त मोह से मुक्त करना है। सारे प्रयास इसी दिशा में करने हैं। मैं आपको यही राय दूंगा कि अपने व्यक्तिगत मामलों से खुद जैसा ठीक समझें निपटें। आपका अपना अन्त:करण और आपके देश के कानून आपको बतायेंगे कि क्या उचित है और क्या अनुचित।

मेरे पास बहुत पत्र आते हैं। इसलिये मैं रूहानी बातों तथा उनसे सम्बन्धित विषयों पर संक्षिप्त पत्र ही पसंद करता हूं।

(४१८)

सन्तमत में आपकी रुचि प्रशंसनीय है, लेकिन कुछ विषयों को

आप बहुत तूल दे रहे हैं सन्तमत हमें जीवन के किसी भी क्षेत्र में अपने कर्तव्यों और जवाबदारियों से जी चुराने की शिक्षा नहीं देता। हमें सामान्य मनुष्यों की तरह रहना है। हर चीज़ का सही समय और स्थान पर महत्व है। रूहानी अभ्यास का एक समय है, और प्रेमी पति होने का भी एक समय है। हमारे आध्यात्मिक और सांसारिक जीवन के बीच में किसी टक्कर का कोई प्रश्न नहीं उठता।

आपकी पत्नी को दूसरा स्थान देने का सवाल ही कहां है? एक पत्नी के रूप में आपके आर्थिक और भौतिक जीवन में उनका अपना महत्व है, और उनके प्रति आपके कुछ ऐसे कर्तव्य और दायित्व हैं जिन्हें आपको निभाना चाहिये। सन्तमत पारिवारिक जीवन में कोई कटुता या टकराव नहीं चाहता। सच तो यह है कि सन्तमत व्यक्ति को एक अधिक अच्छा पति और अधिक अच्छी पत्नी बनाता है। आपको इतना कट्टर क्यों बनना चाहिये? यह सन्तमत नहीं है। सन्तमत की पुस्तकों का अधिक सावधानी से अध्ययन करें, और आप पायेंगे कि यदि हम उपदेशों के अनुसार रहते हैं तो वे हमें सभ्य, दयाल और विचारशील बना देते हैं। वे सिखाते हैं कि हमें किसी की भावनाओं को ठेस नहीं पहुचानी चाहिये।

सत्संग में जाया करें, और नाम के लिये जल्दी न करें। आपके पारिवारिक जीवन में, विशेषकर सन्तमत को अपनाने के प्रश्न पर, मैं कोई कटुता नहीं चाहता। सन्तमत कभी पति और पत्नी के बीच झगड़ा और मतभेद पैदा नहीं कराता।

(४१९)

परमात्मा को प्राप्त करने के सन्तों के इस मार्ग के प्रति आपकी रुचि की मैं सराहना करता हूं। पर ऐसा महत्वपूर्ण कदम जल्दबाज़ी में या भावना की उत्तेजना में आकर नहीं उठाना चाहिये। सन्तमत के उपदेशों को पूरी तरह समझना चाहिये और बुद्धि को हर तरह से सन्तुष्ट करना चाहिये। व्यक्ति को स्वयं इस बात का विश्वास हो जाना चाहिये कि उसके लिये इसके सिवाय दूसरा कोई मार्ग नहीं

है। इसके बाद ही इस मार्ग को अपनाने के प्रश्न पर विचार करना चाहिये।

सन्तमत के कुछ सिद्धांत ऐसे हैं जिनका जीवन में अनुसरण करना पड़ता है और इन्हें भली प्रकार समझ लेना चाहिये। इस मार्ग को आधे मन से स्वीकार करने में किसी को कोई लाभ नहीं होगा। कृपया पुस्तकों को सावधानीपूर्वक पढ़ें, और हर तरह से अपने आपको सन्तुष्ट कर लें। मांस आदि सब तरह के अनुचित भोजन, नशीले पेय और नशीली चीज़ों से दूर रहते हुए सन्तमत की रहनी पर चलने की कोशिश करें। नैतिकता और सदाचार की युगों पुरानी प्रणाली के अनुसार स्वच्छ नैतिक जीवन बितायें। जब आपको लगे कि आप हर प्रकार से तैयार हैं और सत्य की खोज करने के लिये अन्तर से आपका मन बोलने लगे, तब अगला कदम उठायें। यह सलाह आपके अपने भले के लिये है। बिना अच्छी तरह सोचे-समझे अगर हम किसी मार्ग या विज्ञान को अपनाते हैं, तो परिणाम संतोषप्रद नहीं होते।

(४२०)

जहां तक नीचे के चक्रों और उनमें होने वाली आवाज़ों का सवाल है, कृपया याद रखें कि पिण्ड (स्थूल शरीर) के चक्र अण्ड (सूक्ष्म जगत) के प्रतिविम्ब हैं और अण्ड के चक्र ब्रह्माण्ड (कारण जगत) के प्रतिबिम्ब हैं। ब्रह्माण्ड स्वयं भी अपने ऊपर के ऊंचे मण्डलों का प्रतिबिम्ब है। एक चक्र की सब आवाज़ें दूसरे चक्रों में भी पायी जाती हैं क्योंकि वे ऊपर के चक्र के प्रतिबिम्ब हैं। काल और माया द्वारा खेला गया यह एक बहुत बड़ा धोखा है। कबीर का यह पद पढ़ें 'कर नैनों दीदार, महल में प्यारा है।' इस पर हुज़ूर महाराज जी (बाबा सावनसिंह जी महाराज) का प्रवचन 'सन्तमत प्रकाश' में प्रकाशित किया गया है। कबीर के इस पद में आपको अपने सवाल का पूरा जवाब मिल जायेगा।

प्रसाद व्यक्ति को खुद उसके लिये दिया जाता है और किसी

सत्संग में कुछ बांटने की प्रणाली शुरू करना व्यर्थ है। सत्संग को शुद्ध रूप से एक ऐसा स्थान रहने दें, जो हमें मालिक की याद दिलाये और प्रेम तथा भक्तिपूर्वक अपने कर्तव्यों को करने की प्रेरणा दे। भजन-सुमिरन करना बेहतर है क्योंकि वही एक चीज है जो हमारे खाते में जमा होती है। बाकी चीजें पीछे छूट जायेंगी। प्रसाद के लिये थानों की पेटियों को यहां भेजने का कष्ट उठाने की आवश्यकता नहीं। जो यहां आते हैं उन्हें हमेशा प्रसाद दिया जाता है।

(४२१)

आपका पत्र पढ़कर मुझे अफ़सोस हुआ। अब आप खुद समझ सकती हैं कि संगति तथा वातावरण का प्रभाव कितना प्रबल होता है। नशे की पड़ी हुई लत को सफलतापूर्वक छोड़ने के बाद मद्यशाला में नाचने के फलस्वरूप आपने फिर से नशा करना शुरू कर दिया है। यह और भी अधिक गम्भीर समस्या हो गई है।

याद रखें कि छोटे से छोटे विचार तथा कर्म का भी हमें हिसाब देना पड़ता है। उससे कोई छुटकारा नहीं है। सन्तमत में आने के बाद पथ से भटक जाने के लिये, समय आने पर, आप क्या सफ़ाई देंगी? आप अपने सिवाय और किसी का नुकसान नहीं कर रही हैं। आपको अण्डे खाने और खूब शराब पीने में संकोच तक नहीं हुआ। इन सबके बारे में मैं क्या कह सकता हूं? सन्तमत के उपदेशों को आप भली-भांति जानती हैं। अपनी करनी की गम्भीरता आपको महसूस करनी चाहिये।

पश्चाताप करना और अपने को सुधारना सम्भव है। यदि अब भी आप अपने जीवन के इतिहास में एक नया पन्ना खोलने का निश्चय करें और सन्तमत के अनुसार रहने लगें, तो मालिक आपको क्षमा करेगा। अपना भजन और सुमिरन करती रहें, और ऐसा कुछ न करें जिसकी स्वीकृति सन्तमत नहीं देता। कोशिश आपको करना है, आपके लिये और लोग नहीं कर सकते। सुधरने की तीव्र इच्छा आपके अन्दर से ही आनी चाहिये।

(४२२)

जब आपको मालूम है कि यौन-साहित्य ने आपके लिये और भी अधिक समस्यायें पैदा कर दीं हैं, तो फिर आप ऐसा गंदा साहित्य क्यों पढ़ते हैं ? कम से कम यह तो पूरी तरह से आपके हाथ में है। यदि हम अपने विचार शुद्ध रखें और सदा मालिक को याद करते रहें तो यह प्रवृति डंक नहीं मार सकती। अपने मन को अच्छे विचारों और नेक कर्मों में लगाये रखें। मन को गलत विचार उठाने का अवसर न दें। बेकार मन को 'शैतान का कारखाना' कहा गया है।

आपका परिवार है, पत्नी हैं, फिर आपके मन में हीन और वासनापूर्ण विचार क्यों आने चाहियें ? यदि आप सुधरने की सच्ची कोशिश करेंगे तो मालिक भी आपको इनसे बचायेगा। हमें मन के सामने हथियार नहीं डाल देना है, जिसके शस्त्रागार में काम सबसे प्रवल और शक्तिशाली शस्त्र हैं। सुमिरन तथा मालिक और सतगुरु की याद के द्वारा इससे लड़ें। अपना ध्येय सदैव अपने सामने रखें। मन को वता दें कि यदि यह अपनी इच्छानुसार ही चलेगा तो इसे शाँति या सुख की प्राप्ति कभी नहीं होगी, और वह अपना लक्ष्य और दूसरी मंज़िल के स्थायी सुख को खो देगा। जब हम अपनी दुर्बलता महसूस करके सुधरने की कोशिश करते हैं, तो मालिक भी सहायता पहुँचाने के लिये तैयार रहता है।

(४२३)

कृपया याद रखें कि जो भी प्रकृति के विरुद्ध होता है, वह सदा गलत और अनुचित होता है। प्रकृति ने वंश-वृद्धि तथा उचित सीमा के अन्दर काम-भावना के संतोष या पूर्ति के लिये स्त्री और पुरुष का निर्माण किया है। यदि हम इसके विपरीत जाते हैं, तो इसका अर्थ यह है कि हम ऐसा कार्य कर रहे हैं जिसे प्रकृति के नियम स्वीकार नहीं करते। सम-लैंगिक काम-सम्बन्ध प्रकृति के समस्त नियमों के विरुद्ध हैं, और कोई सभ्य समाज इसे पसन्द नहीं करता। दूसरों की दृष्टि में ही नहीं, वल्कि इसमें फँसने वाले व्यक्तियों की अपनी दृष्टि

ह कार्य लज्जाजनक और पतन की ओर ले जाने वाला है।
ा ऐसा जीवन बिताने की कोशिश करना चाहिये जो प्रकृति के
तथा एक अच्छे समाज के नियमों के अनुकूल हो। ऐसी कोई
नहीं है जिसे हम इच्छा-शक्ति तथा संकल्प के द्वारा न छोड़
जहाँ इच्छा हैं, वहाँ रास्ता भी है।

(४२४)

आप लिखते हैं कि आपके नज़दीक कोई सत्संगी नहीं हैं, इसलिये पने किसी दूसरे मार्ग के लोगों के पास अभ्यास के लिये जाना शुरू या है। सन्तमत के अनुसार भजन-सुमिरन करने के लिये किसी त्संगी का पास होना ज़रूरी नहीं। यह अभ्यास हमेशा एकान्त में किया जाता है, मण्डली में वैठ कर नही। इसके लिये पूर्ण एकान्त आवश्यक है। इधर उधर दौड़कर अपना समय वर्बाद करने का कोई फायदा नहीं। वेहतर होगा कि आप सन्तों की शिक्षा के अनुसार अपना रूहानी अभ्यास करने पर ध्यान दें।

वहुत दूर के व्यक्ति के विचार जानना, या वीमार को अच्छा करना या प्रकाश को वुलाकर उसे फैलाना आदि वातों को सन्तमत कोई महत्व नहीं देता। सन्तमत में हमें ऐसे सव प्रलोभनों से वचने के लिये चेतावनी दी गयी है। ये हमारी आध्यात्मिक प्रगति को रोकते हैं और हमें अपार हानि पहुँचाते है। ऐसे 'वाजीगरी के तमाशे' करने की शक्ति से भी वहुत ऊँची शक्ति सन्तमत हमें प्रदान करता है यह हमें वापस मालिक के पास ले जाता है, हमें स्वय मालिक वना देता है।

सन्तमत की कुछ पुस्तकों को फिर से पढ़ें और सन्तमत व तथा इसके मूल सिद्धान्त क्या हैं, इनके सम्वन्ध में अपना ज्ञान करें। आप अपने मन की शिकायत करते हैं। लेकिन जव तक उसे अन्तर में शब्द के साथ नहीं जोड़ लेंगे, तव तक कैसे उस में करके अपने हुक्म में रख सकेंगे? ऐसा करने का और कोई नहीं है।

(४२५)

जिस समस्या का सम्बन्ध आपका तथा आपकी पत्नी से है, उसमें मैं आपको क्या सलाह दे सकता हूं ? यह एक ऐसी बात है जिसे आप को ही सुलझाना है। मैं तो केवल इतना ही कह सकता हूं कि जिस प्रेम के कारण पति और पत्नी विवाह के दिन एक दूसरे के समीप आये थे, उस प्रेम को कायम रखकर और उसे मजबूत बनाते हुए, दोनों को एक दूसरे के साथ शान्तिपूर्वक रहने की कोशिश करनी चाहिये। वैवाहिक जीवन में हर साथी को दूसरे के लिये भी जीना पड़ता है। उन्हें एक दूसरे की सनक, दुर्बलता तथा रुचि-अरुचि को सहन करना चाहिये। ऐसा कोई मतभेद नहीं है जो चाहने पर दूर नहीं किया जा सकता।

(४२६)

सन्तमत में आपकी रुचि की मैं सराहना करता हूं। मेरी सलाह है कि आप सन्तमत की पुस्तकों को बहुत ध्यान से पढ़ें। इससे आप को मालूम होगा कि सन्तमत क्या है, इसके अनुसार हमें कैसा जीवन बिताना है, और जीवन में कुछ बातों के प्रति हमें क्या रुख अपनाना होगा। यह समझ लेना बहुत आव' ,क है। जिस मार्ग को आप अपनाना चाहते हैं, अगर उसके बारे में आप नहीं जानते तो आप उस पर ठीक तरह नहीं चल पायेंगे।

सन्तमत चाहता है कि अपने कर्तव्यों को ईमानदारी से निभायें और अपनी ही कमाई पर रहते हुए, हम समाज के सभ्य और नेक सदस्यों के रूप में सामान्य जीवन व्यतीत करें। शान्त और नियमित जीवन को यह अधिक महत्व देता है जिसमें मनुष्य रोज़ कुछ समय रूहानी अभ्यास में लगा सके।

सन्तमत की शिक्षा और 'हिप्पी' ढंग के जीवन में समानता की कोई बात नहीं है। दोनों एक साथ नहीं चल सकते। एक भद्र पुरुष और महिला के लिये पहली आवश्यकताएँ हैं शिष्टाचार, शरीर और वस्त्र की सफाई, सदाचार और उत्तम मार्ग। हमें समाज में लोगों का

ध्यान आकर्षित करने के लिये नहीं विचरना है। आपके ख़याल से क्या कोई सभ्य पुरुष या महिला कहीं नग्न होकर घूमना फिरना पसंद करेंगे ? नहीं। आपको सन्तमत के अनुसार जीने के ढंग का बहुत ध्यान के साथ अध्ययन करना होगा, और इसे तभी अपनायें जब आप तय कर लें कि इस मार्ग के सिद्धान्तों पर आप कायम रह सकेंगे।

विवाह, कानूनी विवाह, के बिना काम-सम्बन्ध सन्तमत की दृष्टि से एक घोर पाप है, और सन्तमत में 'मुक्त जीवन' जैसी कोई चीज़ नहीं है। ऐसे शुद्ध शाकाहारी भोजन भी जरूरी है, जिसमें किसी भी हालत में, किसी भी मात्रा या मिकदार में और किसी भी रूप में मांस, मछली, मुर्गी या अण्डे न हों। सब तरह के नशीले पेय, नशीली दवाइयाँ, अफ़ीम, भंग, चरस तथा इस प्रकार की दूसरी चीज़ें भी बिलकुल छोड़ देनी होंगी। नियमबद्ध और निर्मल नैतिक जीवन भी बहुत जरूरी है। यदि हम मालिक से मिलना चाहते हैं तो हमें अपने विचारों और कर्मों में हर प्रकार से, बिना किसी दाग के, स्वच्छ रहना होगा।

नाम के लिये लिखने से पहले कृपया देख लें कि ऐसा जीवन आप को पसन्द है या नहीं ? फिर सन्तमत की पुस्तकों का सावधानीपूर्वक अध्ययन करें और इसके सिद्धान्तों के अनुरूप अपने जीवन को ढालने का प्रयत्न करें। सन्तमत कोई अनुष्ठान या कर्मकाण्ड नहीं है। यह जीवन बिताने की एक कला है।

(४२७)

काम एक प्राकृतिक प्रवृत्ति है, और इस मार्ग में आने के बाद इस के कारण मन में अशान्ति या अपराध की भावना नहीं आनी चाहिये। पारिवारिक प्रेम और शांति को बनाये रखना चाहिये। हमें अपनी ज़िम्मेदारियों को निभाना और कर्तव्यों का पालन करना चाहिये। पाशविक वासनाओं की तृप्ति के लिये अंधाधुंध काम में उलझने तथा इसको अति तक पहुँचाने में बुराई और पाप है। इस प्रवृत्ति का उद्देश्य वंश-वृद्धि है, और इसमें केवल विवाहित जोड़ी को उचित होना

के अन्दर प्रवृत्त होना चाहिये। तब इस में अपराध की भावना नहीं आती।

(४२८)

हमें इस तरह के दृश्यों को महत्व नहीं देना चाहिये, क्योंकि जब वह आत्मा शरीर को छोड़ चुकी है फिर इनका कोई मूल्य नहीं है। कभी-कभी बहुत गहरे मोह के कारण स्वप्न में हमें मृत व्यक्ति की झलक किसी न किसी रूप में दिखायी पड़ जाती है। यह सब दो जीवों के एक-दूसरे के प्रति मोह का मामला है, जो ऐसे दृढ़ बन्धन उत्पन्न करता है। किन्तु ऐसे दृश्यों का मूल्य नहीं, क्योंकि विदा होने के बाद आत्मा उसी शरीर में फिर वापस नहीं आ सकती।

(४२९)

हमारा मन एक बड़ी प्रवल शक्ति है, और इसमें उन असंख्य जन्मों की छाप पड़ी है, जिनसे हम इस सृष्टि में पहली बार आने के बाद से गुज़र चुके हैं। हम कल्पना की किसी उड़ान से भी उस समय का अनुमान नहीं लगा सकते। ये छाप या संस्कार, जिनका अपने वर्तमान जीवन के साथ हम कोई सम्बन्ध या जोड़ बता नहीं सकते, कभी कभी सतह पर आ जाते हैं और हमारे लिये समस्या पैदा कर देते हैं। यदि ये छाप दु:खदायी होती है, जैसा कि आपके साथ बीता है, तो हम भयभीत और दु:खी हो जाते हैं। यदि वे सुखद होती हैं तो हमें गर्व और खुशी होती है। लेकिन हर हालत में ये बातें पिछले संस्कारों की वजह से होती हैं; ये संस्कार मन अपने साथ रखता है। इन्हें ज़्यादा महत्व नहीं देना चाहिये।

वह तथा-कथित प्रेतात्मा, जिसके बारे में आपको ऐसा लगता है कि वह हमेशा आपके साथ रहती है, या तो कमज़ोर मन वाले मनुष्यों को या उनको जो ऐसी चीज़ों में विश्वास करते हैं, प्रभावित किया करती है। कभी-कभी ये आत्मायें उन लोगों को भी पीड़ा देती हैं, जो माध्यमों (मीडियम) और इसी तरह की चीज़ों का प्रयोग करके मृत आत्माओं का पता लगाया करते हैं, और लोगों का भविष्य पूछा करते

हैं। ऐसे कामों में हाथ डालना तथा ऐसी पारलौकिक शक्तियां से किसी प्रकार का सम्बन्ध रखना, आग से खेलना है। डरें नहीं, बल्कि साहस से मोर्चा लें। यह आपका मन है जो आपको तंग कर रहा है। मालिक को याद करें, उस पर अपनी श्रद्धा रखें और उसकी दया-मेहर के लिये प्रार्थना करें। सन्तमत की कुछ पुस्तकें पढ़ें और इस विज्ञान को समझने की कोशिश करें। इस अध्ययन से आप को अधिक जानकारी तो मिलेगी ही, शक्ति भी प्राप्त होगी। आपको अध्ययन और ज्ञान से बहुत लाभ होगा। इन पुस्तकों को समझने में यदि मैं कोई सहायता पहुँचा सकूं, तो ऐसा करने में मुझे प्रसन्नता होगी।

(४३०)

हस्त-रेखा और फलित-ज्योतिष विज्ञान हैं। आप इनका खुशी से सहर्ष अध्ययन और व्यवसाय कर सकते हैं। इनमें कोई आध्यात्मिक शक्ति खर्च नहीं करनी पड़ती। लोगों की हस्त-रेखायें और जन्म-पत्रियाँ पढ़ने के लिये फीस लेने में कोई हरज नहीं है।

(४३१)

सन्तमत की यह शिक्षा है कि हमें मालिक की मौज में रहने का प्रयत्न करना चाहिये और वह जो कुछ हमारे लिये भेजता है, उसे स्वीकार करना चाहिये। हरएक व्यक्ति का अपना प्रारब्ध होता है जिसे लेकर वह जन्म लेता है, और उसे कोई बदल नहीं सकता। प्रत्येक व्यक्ति अपने पिछले जन्म के कर्मों का फल भोग रहा है। जन्म और मरण पूरी तरह मालिक के हाथ में हैं। हर जीवित प्राणी की मृत्यु का समय, स्थान और ढंग निश्चित है, उसे कोई बदल नहीं सकता। तब फिर भविष्य को जानने की कोशिश करने की क्या ज़रूरत है? यदि यह ज्ञान भविष्य में होने वाली घटनाओं को बदल सकता, तो अवश्य ही इस तरह पहले से खबर प्राप्त करने का कुछ फायदा होता। लेकिन फायदा तो दूर रहा, यह तो दुःख पैदा करता है, जैसा कि आपके साथ हुआ है।

इन सब की चिन्ता न करें। यह चिन्ता भी मन का एक और छल है। भविष्य को पढ़ लेना इतना आसान नहीं और सभी हस्त-रेखा विशेषज्ञों एवं ज्योतिषियों द्वारा बतायी गयी बातों का सही होना ज़रूरी नहीं। हमें मालिक की मौज में रहना चाहिये और उसने हमें जो कुछ प्रदान किया है, उसके लिये उसका आभारी या अहसानमंद होना चाहिये।

सन्तमत की पुस्तकें पढ़ें और विज्ञान को समझने का प्रयत्न करें। इससे आपको कई बातें समझ में आ जायेंगी। तब आप इस सृष्टि को एक नये दृष्टिकोण से देखेंगे। आपका रुख अच्छे के लिये बदल जायेगा। सत्संग में जाया करें और जो लोग पहले से इस मार्ग में हैं, उनसे अपनी समस्याओं के बारे में चर्चा किया करें। इस जीवन में हमारा मुख्य उद्देश्य परमात्मा को प्राप्त करना है, और उसे पाने के लिये ही मालिक ने हमें यह सुन्दर शरीर बख़्शा है। उसके प्रति अपने कर्तव्य-पालन में हमें चूकना नहीं चाहिए।

(४३२)

कृपया याद रखें कि आत्महत्या एक घोर पाप है जिसे मालिक कभी माफ़ नहीं करता। आत्महत्या करने वाले के लिये नरक के द्वार पूरी तरह खुले रहते हैं। हमें खुद अपने या किसी दूसरे के प्राण लेने का कोई अधिकार नहीं है। यह जीवन दुर्लभ है और हमें विशेष कृपा के रूप में मिला है। हमें पराक्रम और साहस के साथ अपने भाग्य को भोगना है। हमारे बोझ कितने ही भारी क्यों न हों, कायर की तरह हमें जीवन से भागना नहीं है। हरएक को अपना दुःख खुद ही भोगना पड़ता है; इसलिये सारी तकलीफ़ प्रभु में विश्वास रखते और उसकी मौज में रहते हुए झेलने की कोशिश करनी चाहिये।

आत्मघात करने या दूसरे व्यक्ति के प्राण लेने की सलाह न तो किसी सतगुरु ने कभी दी है, न देगा। आपका यह खयाल है कि सतगुरु ने आपके सामने प्रकट होकर कहा है कि आप बच्चे की हत्या करके आत्महत्या कर लें, यह मन का एक बहुत बड़ा धोखा है। जीवन

हों। यह याद रखते हुए कि मालिक पर यदि दृढ़ विश्वास है तो वह हमारी सहायता करने और रास्ता बताने के लिये मौजूद है। जीवन का साहस और धैर्य के साथ सामना करें। सुमिरन करते रहें। दिन भर पवित्र नामों को अपने साथ रखें। सुमिरन में बहुत शक्ति है और इस से आपको बहुत बल मिलेगा। भजन-सुमिरन ही सब रोगों की अचूक दवा है। अन्त में यह आपको आवागमन के चक्र से मुक्त कर देगा, और अमर जीवन प्रदान करेगा।

अपना अभ्यास बराबर करें, तमाम परेशानियों और चिन्ताओं को भूल जायें और पूरी तरह तनाव-रहित जीवन बितायें। फिर देखें कि आपको कितनी शान्ति और प्रसन्नता प्राप्त होती है।

(४३३)

मुझे यह जानकर खुशी हुई कि शीघ्र ही आप माँ बनने वाली हैं। बच्चे का नाम आप अपने देश में प्रचलित नामों के अनुसार रख सकती हैं। बच्चे को असामान्य या अपरिचित नाम देकर उसे समाज में अजीब या अनोखा बनाने से कोई लाभ नहीं। सन्तमत में इन बातों का कोई मूल्य नहीं है, और बच्चे के भाग्य को ये किसी प्रकार बदल भी नहीं सकतीं। सन्तमत के उपदेशों के अनुसार हमें इन औपचारिक बातों को कोई महत्व नहीं देना चाहिये और असल चीज़ को याद रखना चाहिये, जो हमारा सुमिरन-भजन है, मालिक के प्रति प्रेम, लगन और भक्ति है। आप अपने बच्चे का अपनी इच्छानुसार नाम रखने के लिये स्वतन्त्र हैं। आपने पूछा है, इसलिये इस विषयों पर मैंने अपने विचार प्रकट किये हैं।

(४३४)

मैंने अपने पिछले पत्र में जो कुछ कहा है उसके लिये आपको निराश या नाराज़ होने की कोई वजह नहीं है। सन्तमत को अपनाने से पहले इसे अच्छी तरह समझना बहुत ज़रूरी है। यह समझ पुस्तकों का बहुत सावधानीपूर्वक अध्ययन करने और सन्तमत के सिद्धान्तों के अनुसार अपने जीवन को ढालने के बाद आयेगी।

आप स्वयं देख सकते हैं कि इस समय आप जो कुछ कर रहे हैं, वह सन्तमत के सिद्धान्तों के अनुसार नहीं है। ऐसी स्त्री के साथ सोना और रहना, जिससे आपका विवाह नहीं हुआ है, सन्तमत के खिलाफ़ है। यदि कोई किसी पथ पर चलना चाहता है तो उस मार्ग में बताई गई जीवन-प्रणाली को मानना ज़रूरी है। इस प्रकार के जीवन को किसी भी परिस्थिति में क्षमा नहीं किया जा सकता। यदि आपने सन्तमत की पुस्तकें सावधानी से पढ़ी होतीं तो यह बात आपको मालूम हो गयी होती।

विभिन्न धर्मों का तुलनात्मक अध्ययन आप कर सकते है, परन्तु इसके लिये आपको उन सबके सिद्धांत और सही उपदेश जानने होंगे। अधिक अच्छी और सच्ची जानकारी हो जाने पर आपको एक संतोष मिलेगा, जो आगे चलकर आपके लिये सुख और शान्ति का कारण बनेगा।

(४३५)

कुछ मिनिटों के भजन-सुमिरन से कोई ख़ास फायदा नहीं होगा। भजन-सुमिरन को आप इतना कम समय देंगे तो आप शब्द को कैसे सुन सकेंगे ? सत्संगी से यह उपेक्षा की जाती है कि वह प्रतिदिन कम से कम ढाई घण्टे भजन-सुमिरन में लगाये। हो सकता है कि शुरू में यह सम्भव न हो, पर किसी भी दिन नागा नहीं होना चाहिये और समय को धीरे-धीरे तब तक बढ़ाते जाना चाहिये जब तक प्रतिदिन आप ढाई घण्टे तक भजन-सुमिरन न करने लगें। जब तक सन्तमत का हम सही ढंग से पालन करने की कोशिश नहीं करते, और अपना कर्तव्य ईमानदारी और श्रद्धापूर्वक नहीं निभाते, तब तक मार्ग से अधिक प्राप्त नहीं कर सकते, और इस हालत में हमारा शिकायत करना कोई मतलब नहीं रखता। सुमिरन तो सारे दिन आपके साथ रहना चाहिये और अभ्यास के लिये रोज़ की नियमपूर्वक बैठक में कभी नागा नहीं होना चाहिये।

जहाँ तक सन्तमत की चर्चा करने और इसे दूसरों को समझाने

की आपकी इच्छा का सवाल है, इस मार्ग में खुद कुछ अभ्यास कर लेने के बाद ही इसकी कोशिश करनी चाहिये। कभी-कभी दूसरों की सहायता करने की हमारी इच्छा और कुछ नहीं सिर्फ़ अहंकार का बदला हुआ रूप ही होता है, जिससे हमारी अपनी प्रगति को नुकसान पहुँचता है। ख़ुद अपनी सहायता कर चुकने के बाद ही हम दूसरों की सहायता कर सकेंगे। उससे पहले किसी की मदद करने की कोशिश करना, एक सन्त के अनुसार, इसी प्रकार है जिस प्रकार हमारे अपने घर में आग लगी हुई है और हम दूसरों के घरों की आग बुझाने की कोशिश कर रहे हैं। यदि कोई सच्चा जिज्ञासु आपके पास आकर सन्तमत के बारे में कुछ जानना चाहे, तो उसे आप जितना हो सके बता दें, और अपनी पूरी योग्यता के साथ उसकी सहायता करें। लेकिन सन्तमत ऐसी सस्ती चीज़ नहीं है जिसकी चर्चा क्लबों और सोसाइटियों में की जा सके, जहाँ ऐसी चर्चा कई बार बहस में बदल जाती है। सन्तमत का अनुयायी ऐसी गरम बहस में शामिल नहीं , और इसी में भलाई समझता है कि अपना समय बचाकर अपने ही भजन-सुमिरन में लगाये। जो समय आप इन व्यर्थ की चर्चाओं में लगाना चाहते हैं, जो कभी-कभी अनसुनी कर दी जाती हैं, उस पूरे समय को यदि आप सुमिरन में लगायें तो यह आपकी उन्नति में बहुत सहायक होगा। दूसरों को सन्तमत में लाने का काम मालिक पर छोड़ दें। काल के जाल से, तथा इस संसार से, जो जन्म और मरण का भयंकर स्थान है, अपने आपको निकालने की कोशिश करें। हमारी अपनी तकलीफ़ें असीम हैं, और हमें इनसे जितनी जल्दी छुटकारा मिले, उतना ही अधिक अच्छा है।

(४३६)

जिन देवताओं के ये नाम हैं, सुमिरन करते समय आप उनकी चिन्ता न करें और न उनके बारे में सोचें। अपने आध्यात्मिक विकास के अनुसार यदि आप सतगुरु के प्रकाशवान स्वरूप को देख सकें, तो अपना पूरा ध्यान उस स्वरूप में जमा कर रखें। नामों का सुमिरन

करते हुए उसे देखते रहें। जब प्रकाश दिखायी दे, तब उस प्रकाश को देखते रहें। मगर अन्तर में दिखाई देने वाली कोई वस्तु या प्रकाश एक ओर से दूसरी ओर जाना शुरू करदे, तो उसका पीछा करने की कोशिश न करें। आपका ध्यान हमेशा तीसरे तिल पर रहना चाहिये। चाहे चीज़ें दिखें या ओझल हो जायें या विभिन्न दिशाओं में घूमती रहें, पर आपका ध्यान आँखों के केन्द्र से नहीं हटना चाहिये।

(४३७)

क्रोध एक ऐसी भावना है जो अनेक प्रकार से हानिकारक है। आवेग की समाप्ति होने पर यह हमें दुःखी ही नहीं करता बल्कि हमारे स्वास्थ्य को भी बहुत नुकसान पहुँचाता है। कोई भी चिकित्सक आप को यह बता देगा कि क्रोध के समय पेट में भोजन के पाचन में सहायक होने वाले रस की उत्पत्ति न होकर कुछ ऐसे विष उत्पन्न होते हैं, जो बहुत अधिक नुकसान पहुँचाते हैं। इसके सिवाय, क्रोध में हमारा ध्यान बिखर या फैल जाता है, और एक आसानी सड़क उठती है। नतिरन भजन में हमें अपने मन को एकाग्र करना पड़ता है, जब कि क्रोध में यह बाहर फैलता है। इसके प्रभाव में हम ऐसे अनेक कर्म कर डालते हैं जिनके लिये बाद में पछताना पड़ता है, और कभी-कभी क्रोध के फलस्वरूप स्थिति बड़ी गम्भीर हो जाती है। कृपया इस भावना को वश में रखने की कोशिश करें। मन को तर्क के द्वारा समझाएँ कि वह काबू से बाहर न जाये, ताकि जीवन तनाव-रहित और सुख तथा शान्तिपूर्ण हो सके।

(४३८)

आपको यह याद रखना चाहिये कि नामदान के समय लिये गये सब वादों का सच्चाई और ईमानदारी के साथ पालन करना ज़रूरी है। जब तक हमारा नैतिक जीवन निर्मल न होगा, तब तक आध्यात्मिक प्रगति का कोई प्रश्न ही नहीं उठता।

'हिंसा' जैसे जीवन का सन्तमत में कोई स्थान नहीं है। अपने समस्त कर्तव्यों का पालन करते हुए तथा अपनी सब ज़िम्मेदारियों को

अपनी पूरी कोशिश के साथ निभाते हुए, हमें साधारण मनुष्यों की तरह जीवन बिताना चाहिये, और अपना भजन और सुमिरन रोज़ बराबर करते रहना चाहिये। हमें इस बात की परवाह नहीं करनी चाहिये कि सांसारिक लोग क्या कहते हैं। अब हम एक ऐसे पथ पर हैं जो एक दिन हमें इस सृष्टि से छुटकारा दिला देगा। सारी समस्याओं का उत्तर आपका सुमिरन और भजन है। इस अभ्यास को बिना नाग़ा रोज़ नियमपूर्वक करें।

(४३९)

जहाँ तक शरीर के अन्तिम संस्कार का सम्बन्ध है, इससे आत्मा पर किसी प्रकार का प्रभाव पड़ने वाला नहीं है। अलग-अलग देशों में शरीर के अंतिम संस्कार के अलग-अलग ढंग हैं, पर जहाँ तक आत्मा का सम्बन्ध है, उसके लिये इनसे कोई अन्तर नहीं पड़ता। आत्मा जब शरीर को त्याग देती है, तब शरीर का कोई मूल्य नहीं रह जाता। शरीर के साथ सारे सम्बन्ध केवल तभी तक हैं जब तक आत्मा उसके अन्दर मौजूद है। जब मालिक इसे वापस ले लेता है, तब शरीर किसी काम का नहीं रहता और जिस ढंग से कोई चाहे उसका अंतिम संस्कार कर सकता है। यदि कोई अपने शरीर को किसी चिकित्सा संस्थान में देने की वसीयत करना चाहे, इसमें सन्तमत को कोई आपत्ति नहीं है। इससे आत्मा पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा।

(४४०)

सत्य को जानने की आपकी इच्छा की मैं सराहना करता हूँ। मेरी सलाह है कि आप बाइबिल को अच्छी तरह पढ़ें और खुले मन से उस पर विचार करें। उसके शाब्दिक अर्थों के पीछे न जायें, बल्कि उसमें छिपे सत्य को जानने की कोशिश करें। उसके मतवाद के पीछे न जाकर सार की उस बात को समझने की कोशिश करें जिसे ईसा मसीह संसार को देना चाहते थे। अपनी बुद्धि को पूरी तरह से संतुष्ट कर लें। सन्तमत की बाइबिल से तुलना करें और यदि आप बाइबिल की

मूल शिक्षा को समझ लेंगे तो आपको दोनों में कोई विरोध नहीं मिलेगा।

हज़रत ईसा ने जब यह कहा, 'झूठे पैगम्बरों से सावधान रहो,' तो यह सलाह उन्होंने अपने शिष्यों को दी थी जो उनसे दीक्षा ले चुके थे। उनके कहने का भाव यह था कि अब मैं तुम्हारा गुरु हूँ, इसलिये जो गुरु बहुत पहले हो चुके हैं उनके पीछे न तो भागना चाहिये, न उन पर विश्वास रखना चाहिये और न उनका अनुसरण करना चाहिये। जो अब इस संसार में नहीं रहे, वे चाहे कितने ही महान क्यों न रहे हों, अब तुम्हारी सहायता नहीं कर सकते। अब मैं तुम्हारा जीवित गुरु हूँ और यदि मैं इस संसार को छोड़कर चला जाऊँ, तो भी तुमको मुझ पर तथा मेरे उपदेशों पर विश्वास रखना होगा। यह एक चेतावनी थी, क्योंकि कभी-कभी अन्तर में, भजन-सुमिरन के समय, मन पिछले गुरुओं के स्वरूप धारण करके शिष्यों को धोखा देता है। हज़रत ईसा नहीं चाहते थे कि उनके शिष्य इस तरह धोखे में आयें। ईसा चाहते थे कि उनके शिष्य गुज़रे हुए गुरुओं को चोर और डाकू के समान समझें। हज़रत ईसा ने कहा, "मेरे पहले जो भी आये, वे सब चोर और डाकू थे", तो इसका अर्थ यह नहीं था कि सब गुरु और सन्त चोर और डाकू थे। इसका अर्थ केवल यह था कि अब अगर तुम्हें ये पिछले गुरु और सन्त दिखाई दें, तो यह निश्चयपूर्वक समझ लो कि यह तुम्हारा मन ही है जो तुमको गुमराह करने की कोशिश कर रहा है। यदि आपको ऐसा रूप दिखाई दे तो यह समझ लें वह यह चोर डाकू अर्थात आपके मन का ही रूप है।

हज़रत ईसा ने यह भी कहा, 'मैं जब तक संसार में हूँ, मैं संसार का प्रकाश हूँ।' उन्होंने यह नहीं कहा कि भविष्य के लिये और सदा के लिये वे प्रकाश हैं। वे केवल उन लोगों के प्रकाश थे जो उनके जीवन-काल में उनके सम्पर्क में आये थे। उनके बाद जो अन्य लोग पैदा हुये या होंगे उन्हें अन्य जीवित मसीहा या गुरु ढूंढ़ना पड़ेगा।

अपनी पहले से बनी हुई धारणा और एक-तरफा विचारों को दूर

करें और बाइबिल तथा सन्तमत को खुले मन से पढ़ें। सेण्ट जान पर मेरी पुस्तक भी पढ़ें।

जल्दबाज़ी न करें। अपनी बुद्धि को हर प्रकार से सन्तुष्ट कर लें। आपको जब तक सन्तमत के उपदेशों की सच्चाई के प्रति दृढ़ विश्वास न हो, तब तक मार्ग को स्वीकार न करें।

हज़रत ईसा ने बाइबिल में कई जगहों पर यह बहुत स्पष्ट किया है कि मालिक के पास वापस जाने के लिये एक जीवित गुरु बेहद ज़रूरी है। आज ईसा जहां हैं वहीं से आत्माओं को वापस मालिक के पास ले जाने का काम यदि वे कर सकते हैं, तो इस काम को खु मालिक क्यों नहीं कर सकता और इस पृथ्वी पर ईसा मसीह को भेजने की आवश्यकता ही क्या थी ? नहीं। जब कभी परमात्मा हमसे बात करना चाहेगा, 'शब्द' को शरीर धारण करना ही होगा। हमें रिहा करने के लिये उसे हमारे स्तर या तल पर ही आना पड़ेगा। स्वयं मालिक और पिछले सतगुरु जो जहाँ कहीं आज हों, वहाँ से वे यह काम नहीं कर सकते। एक मृत चिकित्सक हमारी बीमारियों का इलाज नहीं कर सकता, भले ही वह अपने जीवन-काल में बहुत बड़ा चिकित्सक क्यों न रहा हो। एक मृत शिक्षक आज नहीं पढ़ा सकता हमें जीवित चिकित्सक, जीवित शिक्षक चाहिये। मैं एक जीवित मनुष्य हूँ, इसलिये केवल एक जीवित मनुष्य ही मुझ से बात कर सकेगा मेरा मार्ग-दर्शन कर सकेगा, मुझे पढ़ा सकेगा, मुझे मार्ग ब सकेगा।

(४४१)

जिन दो व्यक्तियों से आपका परिचय है और जिनमें आ रुचि है, उनके सम्बन्ध में आपकी चिन्ता को मैं समझता हूँ। उन्हें नाम देने की बात मालिक पर छोड़ देनी चाहिये, क्योंकि जी त्माओं को मार्ग में लाने वाला वही है। हर बात के लिये समय है और किसी को मंज़ूर करने के लिये हमें ज़ोर नहीं देना च चाहे उस पर हमारी ममता कितनी ही हो और उसे मार्ग पर

के लिये हम चाहे कितने ही इच्छुक हों। उसके लिये कब और क्या अच्छा है, यह तो मालिक ही अच्छी तरह जानता है।

अपने मित्रों से कहें कि वे सन्तमत की पुस्तकें पढ़ें, और इस मार्ग को समझने की कोशिश करें। यह कोई ऐसी चाल नहीं है, जिसका भावनाओं में बह कर जल्दबाजी में फैसला किया जाये। उन्हें सन्तमत की पुस्तकें पढ़नी चाहियें और इस विज्ञान को पूरी तरह समझ लेना चाहिये। मन के अन्दर अनेक प्रश्न और शंकायें छिपी रहती हैं। उनको चाहिये कि अपने मन की जांच करें और मार्ग में आने का विचार करने से पहले अपनी शंकाओं का समाधान कर लें। इस मार्ग के सिद्धान्तों को जब तक कोई समझ न ले, तब तक उसे इसको अपनाने के लिये मजबूर या लालायित नहीं करना चाहिये।

प्रेम और भक्ति के साथ कृपया अपना भजन और सुमिरन रोज करते रहें।

(४४२)

सन्तमत अपने परिवार, समाज व देश के प्रति अपने कर्तव्यों से दूर भागने के लिये नहीं कहता। मन की कल्पनाओं से प्रभावित न हों। वह दृश्य और कुछ नहीं, आपके मन द्वारा खेली गई एक चाल थी। आपको ऐसी बातों को कोई महत्व नहीं देना चाहिये, बल्कि ऐसे समय नामदान के वक्त बताई गई कसौटी को याद करके उसका उपयोग करना चाहिये।

एक मां के नाते आपका अपने बच्चों के प्रति कर्तव्य है, और इन कर्तव्यों को प्रेम तथा स्नेह के साथ आपको पूरा करना है। भजन और सुमिरन अपने रोज के काम-काज के साथ किये जाते हैं। हमें तकलीफों तथा जीवन के उतार-चढ़ाव से भागना नहीं है, बल्कि मालिक में विश्वास रखते हुए साहस के साथ उनका सामना करना है।

(४४३)

सन्तमत के उपदेशों को समझने के लिये आपकी लगन की मैं सराहना करता हूं। कोई अन्तिम निर्णय लेने से पहले हर व्यक्ति को

चाहिये कि वह अपनी बुद्धि को पूरी तरह सन्तुष्ट कर ले और सब प्रश्नों के उत्तर प्राप्त कर ले। इसके लिये सन्तमत के साहित्य का अध्ययन करना आपके अपने हित में होगा। अब आपके सवालों को लें :

आपका प्रथम प्रश्न सरदार बहादुर जगतसिंह जी के बारे में है, जो केवल तीन वर्षों तक सतगुरु रहे। आपने पूछा है कि उन्हें इतने कष्ट क्यों उठाने पड़े और उन्हें इतनी जल्दी चोला क्यों छोड़ना पड़ा। सरदार बहादुर अड़सठ वर्षों तक जीवित रहे और उनका पूरा जीवन ही एक सन्त का जीवन था। सतगुरु के रूप में अपने तीन वर्षों के कार्य-काल में उन्होंने असंख्य व्यक्तियों को सन्तमत के उपदेशों को समझा कर और अनेक जीवों को नाम देकर महान सेवा की। सन्तमत के लिये की गई उनकी सेवा विलक्षण और अपूर्व थी। यह तो मालिक ही बता सकते हैं कि एक सतगुरु के रूप में वे केवल तीन वर्षों तक ही क्यों रहे? मालिक का काम करने के लिये प्रत्येक सतगुरु को कुछ वर्ष प्रदान किये जाते हैं, कितने वर्ष यह तो मालिक ही बेहतर जानता है।

हज़रत ईसा इस संसार में चौंतीस वर्ष से कम समय तक रहे और उनका सक्रिय कार्यकाल भी केवल तीन वर्ष तक रहा। जब वे करीब तीस वर्ष के थे तब उन्होंने अपना मिशन शुरू किया। एक सतगुरु की महानता उसकी आयु, अथवा इस संसार में बिताये गये समय से नहीं, बल्कि उसकी शिक्षाओं से आँकी जाती है।

सन्तों द्वारा सहन की जाने वाली यातनाओं के मामले में भी हज़रत ईसा एक उदाहरण हैं, सूली पर उनकी इतनी भयंकर मृत्यु, उनके अपने पापों तथा कर्मों के कारण नहीं हुई। इस संसार में कर्म किये बिना कोई नहीं रह सकता। ये हमारे कर्म हैं जो हमें यहां रहने के लिये शरीर देते हैं। लेकिन सन्त के तथा साधारण व्यक्ति के कर्मों में अन्तर यह है कि जहां साधारण व्यक्ति अपने कर्मों का दास है और उसका प्रारब्ध जहां ले जाये, वहां उसे जाना पड़ता है, जब कि सन्त अपने कर्मों के दास नहीं होते। अपने जीवन के

न्ध में बोलते हुए ईसा मसीह ने भी इसी बात की ओर संकेत
ा है : "कोई इन्सान इसे (जिन्दगी को) मुझसे ले नहीं सकता, पर
स्वयं ही इसे छोड़ रहा हूं । मुझ में ताकत है कि इसे छोड़ सकूं
ार मुझ में ताकत है कि इसे फिर ले सकूं ।" साधारण लोगों के
ामी कर्म होते हैं, जबकि सन्तों और सतगुरुओं का अपने कर्मों पर
ूरा नियंत्रण और अधिकार होता है ।

शरीर में रहते हुए सन्त इस सृष्टि के नियमों को तोड़ने का
प्रयत्न नहीं करते, बल्कि सृष्टि को चलाने के लिये बने सभी नियमों
का पालन करते हैं । उनके शरीर को औरों की तरह ही नींद और
आराम की जरूरत पड़ती है । उन्हें भूख और प्यास लगती है और
उन पर बीमारियां भी आ सकती हैं । लेकिन बीमारी आने पर वे
शरीर में यातना का अनुभव नहीं करते क्योंकि वे मालिक की मौज
में रहते हैं और सदा उस परमपिता के साथ उनकी लिव लगी रहती
है । सूली पर चढ़ाये जाने से पहले हजरत ईसा ने परमात्मा से
प्रार्थना की थी, 'मेरी इच्छा नहीं, बल्कि तेरी इच्छा पूरी हो ।
और तेरी इच्छा का पालन होगा ।' सन्तों की महानता इसी में
और इसी से साधारण लोगों से उनकी भिन्नता है । यदि आप पूछें
सरदार बहादुर जगतसिंह जी की मृत्यु बीमारी से क्यों हुई तो
यह भी पूछ सकता है कि हजरत ईसा को इस तरह सूली पर
कर क्यों मरना पड़ा ?

सतगुरु स्वय नामदान दे अथवा अपने प्रतिनिधि के द्वारा दे
ही बात है । इसमें कोई भी अन्तर नहीं पड़ता । सतगुरु की हि
के अनुसार जब प्रतिनिधि नामदान देता है तब उस प्रति
सतगुरु की शक्ति ही काम करती है । ऐसा केवल सुविधा
किया जाता है । सतगुरु की हिदायतों के अनुसार प्रतिनि
दी गई दीक्षा, सतगुरु द्वारा खुद प्रदान की जानेवाली
बराबर है ।

जहां तक काम का सम्बन्ध है, यह काल के शस्त्रागार

...ल और शक्तिशाली शस्त्र है। क्रोध, लोभ, मोह तथा अहंकार जैसी
...न्य दुर्बलताओं के बोझ काम के बोझ की बनिसपत हलके हैं। सब
...कारों में यह अत्यन्त पतित विकार है। इसका उल्लेख करते ईसा
...सीह ने इस बात पर बहुत ज़ोर दिया है : "पर मैं तुमसे कहता
... कि जब किसी ने काम वासना की दृष्टि से किसी स्त्री को देखा
...तो उसने उसके साथ मानसिक रूप से व्यभिचार पहले ही कर
लिया।" यहां तक कि आज भी, जब कि आधुनिक समाज में समस्त
नैतिक बन्धन टूटते प्रतीत होते हैं, और समाज में चारों ओर 'छूट'
है, अच्छे समाज के सभ्य लोग परस्त्रीगमन, बलात्कार जैसी चीज़ों
को बहुत बुरा मानते हैं। यह एक ऐसा घोर और अक्षम्य पाप है,
जिसका नतीजा कर्मों का भारी बोझ है। जब तक हमारा जीवन
निर्मल और हमारा मन अपने विचारों और व्यवहार में पवित्र नहीं
होगा, तब तक हम आध्यात्मिक प्रगति कैसे कर सकेंगे और उस
सर्वशक्तिमान पिता, परमेश्वर के सामने कैसे खड़े हो सकेंगे ?

सेंट मैथ्यू (अध्याय १९, पद १२) का भी कथन है "कुछ नपुंसक
ऐसे होते हैं, जो अपनी माँ के गर्भ से ही नपुंसक उत्पन्न होते हैं, और
कुछ ऐसे होते हैं जिन्हें नपुंसक बनाया जाता है, और कुछ स्वर्ग के राज्य
के लिये अपने आप को नपुंसक बना लेते हैं।" स्वर्ग के राज्य में प्रवेश
करने के इच्छुकों के लिये शुद्ध और निर्मल नैतिक जीवन की आव...
श्यकता को यह पद बहुत स्पष्ट रूप से प्रकट करता है। दूसरे शब्द...
में, हज़रत ईसा का संकेत यह है कि यदि आप परमात्मा से मिलन...
चाहते हैं तो वासना अथवा काम की इच्छा और विचारों का त्या...
करना होगा। मन जिस विकार में लिप्त होना चाहता है, उस...
लिये इसे बहाना ढूंढने तथा उसे उचित ठहराने का प्रयास करने ...
आदत पड़ी हुई है।

सन्तमत की पुस्तकों को बहुत सावधानीपूर्वक पढ़कर तथा सत...
में जाकर अपनी बुद्धि को हर तरह से सन्तुष्ट कर लें। यदि फिर
कुछ सवाल बाकी हों तो आप मुझे लिख सकते हैं। जब हमें इस ...

ढंग से पूरी तरह सन्तोष हो जाता है कि जिस मार्ग पर
लना चाहते हैं, वह यही है, तब हमारी नींव दृढ़ होती है और
हमें कोई हिला नहीं सकता ।

(४८४)

आपके प्रश्नों के उत्तर इस प्रकार हैं :

१. वास्तव में, असली शब्द पहली मंज़िल (सहस्रदल कमल) में गूंजता है । इसके नीचे सत्संगी को जो आवाज़ कभी-कभी सुनाई ड़ती है, वह शब्द की दूर से आ रही प्रतिध्वनि ही होती है । इस तिध्वनि में खींचने की शक्ति नहीं होती, और यह दाहिनी ओर की कई आवाज़ों से मिली हुई रहती है । जब हम शरीर की सम्पूर्ण चेतनता को तीसरे तिल तक समेट लेते हैं, और तीसरे नेत्र को खोल कर तारा-मण्डल के पार जाते हैं, तब सूर्य और चन्द्र के लोकों को पार करके सतगुरु के ज्योतिर्मय स्वरूप के दर्शन करते हैं । वहाँ जो शब्द हमें सुनाई देगा, उसमें खींचने की शक्ति होगी । यहाँ आने पर सुमिरन का काम समाप्त हो जायेगा और शब्द का काम शुरू हो जायेगा ।

असल में शब्द दाहिने कान में नहीं बल्कि मस्तक के बीच में है, जहाँ एकाग्रता बढ़ने पर आप इसे सुन सकेंगे । दाहिनी ओर से भी जो शब्द सुनाई पड़े, उसे ध्यान से सुनें और मिली-जुली दस विभिन्न आवाज़ों में से घण्टे की धुन को पकड़ें । शुरू में वह बहुत दूर से आती हुई और धीमी मालूम होगी, पर एक बार आप उसे पकड़ तो फिर न छोड़ें । जैसे-जैसे तीसरे तिल पर आपका ध्यान ज जायेगा, वैसे-वैसे यह ध्वनि साफ़ और तेज़ होती जायेगी ।

२. इस जन्म में हम अपने पिछले जन्म के बारे में कुछ जानते । इस मार्ग के साथ पहले आपका कुछ सम्बन्ध रहा होग हो सकता है । लेकिन इसका ज्ञान अब कोई काम नहीं आ स इस जन्म में हम जहाँ हैं, वहीं से हमें शुरू करना होगा औ भजन तथा सुमिरन के द्वारा ऊपर उठना होगा । भूतकाल दें और वर्तमान तथा भविष्य का ख़याल करें ।

३. निचले अंगों से चेतनता खिचकर जब ऊपर उठती है, तो शरीर का सुन्न होना स्वाभाविक है। सन्तमत में इसे हम 'जीते जी मरना' कहते हैं। हम 'नित्य मरते' हैं। जब पूरी चेतनता निचले शरीर को छोड़कर तीसरे तिल को पार कर जाती है, तब हम स्थूल शरीर से निकल कर सूक्ष्म जगत में प्रवेश करते हैं। शरीर के सुन्न पड़ने से आपको भयभीत नहीं होना चाहिये, क्योंकि सन्तमत के अभ्यास में प्रगति की यह असली परख है।

जिस अंग को चेतनता छोड़ती है, वह अंग सुन्न और ठण्डा पड़ जाता है। इसमें डर की कोई बात नहीं है, क्योंकि अभ्यास के समय जीवन का शरीर के साथ सम्बन्ध कभी नहीं टूटता। पूरे समय सांस चलती रहती है और आप जब भी चाहें, अपने शरीर में वापस आ सकते हैं। थोड़ी पीड़ा, असुविधा और सुन्नता, चेतनता के सिमटाव की निशानी है, और ऐसा होने पर अभ्यासी को प्रसन्न होना चाहिये आप किसी भी सुविधा पूर्ण आसन में बैठ सकते हैं, पर उस पर अडिग रहें और उसे अभ्यास के दौरान में न बदलें। रोज उसी आसन में बैठें। धीरे-धीरे आप उसके आदी हो जायेंगे और आपको किसी प्रकार की असुविधा का अनुभव नहीं होगा।

४. जैसे-जैसे एकाग्रता बढ़ेगी, प्रकाश और दृश्य अधिक स्पष्ट होते जायेंगे। किसी ध्वनि अथवा दृश्य के पीछे न भागें। अपने ध्यान को बराबर नेत्रों के बीच में जमाये रखें। दृश्यों को प्रकट और गायब होने दें, परन्तु आप तीसरे तिल को कभी न छोड़ें। साथ ही सुमिरन करते रहें। अन्तर में प्रकाश और ध्वनि का विशाल खजाना है। सारी सृष्टि हमारे भीतर है। जगत के विराट लोक हमारे अन्तर में ही है। मालिक ख़ुद हमारे शरीर के भीतर है।

५. जैसे-जैसे आप अपने अभ्यास में प्रगति करेंगे, वैसे ही धीरे-धीरे प्रेम और भक्ति उत्पन्न होती जायेगी। केवल यह सोचकर कि सतगुरु हमसे अधिक जानकार है और हमें उसने नाम का उपहार दिया है, हम उससे प्यार करते हैं। यह सीढ़ी की बहुत निचली पैड़ी

से भक्ति की शुरूआत है। गुरु के प्रति कृतज्ञता का यह भाव स्वयं ही प्रेम का एक रूप है। यदि आप अपने रूहानी कर्तव्य का पालन रोज करते रहेंगे, तो भजन-सुमिरन से आपके अन्दर प्रेम और भक्ति बराबर बढ़ती जायेगी। इस बारे में चिन्ता की कोई ज़रूरत नहीं है।

६. इस मार्ग में आने के बाद आपका स्वभाव क्यों बिगड़ना चाहिये ? आपको हर तरह से पहले से अधिक अच्छा व्यक्ति बनना चाहिये। चिन्ता न करें, जब क्रोध की भावना उठे तो सुमिरन करें। इससे आप शांत हो जायेंगे।

७. अपने व्यापार में लोगों को नौकरी से हटाने का सन्तमत अथवा आध्यात्मिक प्रगति से कोई सम्बन्ध नहीं है। यह एक व्यावसायिक या कारोबार का मामला है और व्यापार की दृष्टि से आपको इस सम्बन्ध में कार्यवाही करनी चाहिये। बेशक, अपने स्वार्थ के लिये दूसरों पर अन्याय करना उचित नहीं है। किन्तु जब व्यापार की दशा और हालात कुछ ऐसे कार्य करने के लिये हमें मजबूर करें, तो हम विवश हैं।

८. आपके पास जो कुछ है, उसी में सन्तुष्ट रहें या नयी दुकानें खोलें, यह आपका अपना मामला है, जिसके बारे में अपनी योग्यता और परिस्थितियों के आधार पर आपको ही तय करना है। ख़ास बात तो यह है कि जो भी हम करें, उससे हमारे दैनिक भजन-सुमिरन में बाधा न आये।

अब आप अपने रूहानी अभ्यास पर अधिक ध्यान देने की कोशिश करें। जब आपका यह कथन है कि आपकी बुद्धि को पूरा सन्तोष हो गया है और सन्तमत के सिद्धान्तों के प्रति आपके सामने कोई समस्या नहीं है, तो केवल एक बात आपके लिये बाकी रह गयी है, और वह है भजन और सुमिरन। हम जितने अधिक तर्क और प्रश्न करते हैं और शंकायें उठाते हैं, मन भी उतना ही अधिक सक्रिय और चंचल हो जाता है। मन को वश करने के लिये हमें भजन-सुमिरन के द्वारा

उसको स्थिर और विचारहीन करना होगा। अभ्यास के सिवाय कोई दूसरा उपाय नहीं है।

(४४५)

आपके अनुभव काफी अर्थपूर्ण हैं। ये कभी-कभी पूर्वजन्म के हमारे पिछले कर्मों की वजह से होते हैं। इस समय आपके लिये अभ्यास करना उचित नहीं। किसी जीवित गुरु से युक्ति प्राप्त करने के बाद ही, उसके मार्ग-दर्शन में अभ्यास करना चाहिये। अन्तर में अनेक ऐसी विरोधी शक्तियाँ हैं जो बहुत हानि पहुँचा सकती हैं। इसलिये वर्तमान दशा में सन्तमत को समझने की कोशिश करना बेहतर होगा। बाकी भविष्य पर छोड़ दें।

(४४६)

भावावेश या दिखावटी और ज़बानी भक्ति को सन्तमत नहीं कहते। सन्तमत तो जीने की एक कला है। अपने ध्येय की प्राप्ति के लिये हमें बहुत प्रयत्न और बड़े बलिदान करने पड़ते हैं। यह करनी का मार्ग है, कथनी का नहीं। केवल शब्दों द्वारा दिखाया गया प्रेम, [illegible] भावना और आवेश मात्र ही होता है, स्थायी नहीं। इसे [illegible] रूप देना चाहिये, जो सन्तमत की जीवन-प्रणाली को समझने तथा उसके अनुसार जीवन बिताने से सम्भव हो सकेगा।

(४४७)

सेक्रेटरी ने आपसे जो कुछ कहा है उसके बारे में आपको इतना उत्तेजित और परेशान नहीं होना चाहिये। बेशक, आपका नैतिक जीवन आपके और परमात्मा के बीच की बात है, लेकिन अब आप परमात्मा को पाने के मार्ग पर आने की कोशिश कर रहे हैं, इसलिये इससे दूसरों का भी सरोकार है।

जहाँ तक नैतिकता का सम्बन्ध है, दुर्भाग्यवश हम असाधारण समय से गुज़र रहे हैं। लोग इसे बिलकुल व्यक्तिगत या निजी मामला समझते हैं, पर जिस समाज में वे रहते हैं, उससे भी इसका बहुत ज़्यादा सम्बन्ध है। इन दिनों युवाजन इस ढंग से सोचते हैं कि सब चलता

है। इस विचार का सन्तमत में कोई स्थान नहीं है। यदि हम कोई आध्यात्मिक या रूहानी चीज़ पाना चाहते हैं, तो इससे अलग प्रकार की नैतिकता और रहनी की आवश्यकता होगी। सन्तमत की जीवन प्रणाली को समझने में आपकी सहायता करने के लिये यह कहा गया था, उसको किसी दूसरे अर्थ में न लें। हमें अधिक सहनशील होना चाहिये, और इतनी आसानी से नाराज़ नहीं होना चाहिये।

अपनी इस समय की मानसिक अवस्था में कृपया नामदान के लिये लिखने की बात न सोचें। सन्तमत का साहित्य पढ़ कर और नम्रता के साथ सत्संगों में जाकर पहले आप सन्तमत को पूरी तरह समझने की कोशिश करें। और फिर यह देखें कि सन्तमत में जिस प्रकार के जीवन की आशा की जाती है, वैसा जीवन आप बिता सकेंगे या नहीं ? कानून द्वारा मंजूर रीति से विवाहित पति या पत्नी के सिवाय और किसी से काम-सम्बन्ध की, नशीली वस्तुएँ लेने की आदत की, चिकित्सक के द्वारा निर्धारित किये बिना इस प्रकार की नशीली व आदत डालने वाली औषधियों के सेवन की, अण्डा, मांस, मछली, मुर्गी आदि खाने की और मादक पेय ग्रहण करने की सन्तमत में कोई गुंजाइश नहीं है। सन्तमत में यह नियम अनिवार्य या लाज़िमी है। इसके सिवाय मनुष्य में सन्तमत की जीवन प्रणाली के अनुसार रहने की तीव्र और सच्ची लगन होनी चाहिये। इसलिये जल्दी नहीं करनी चाहिये, और बुद्धि को हर प्रकार से सन्तुष्ट करने में समय लगाना चाहिए। इस अध्ययन में तथा समझने की चेष्टा में लगने वाला समय बहुत हितकर होगा। इसके आगे चलकर जीवन में अच्छे फल होंगे।

(४८८)

आप 'निम्न कोटि के विचारों' की बात करते हैं, जिनके कारण आपको बहुत क्लेश होता है। सबके जीवन में ऐसे आवेग या भाव उठते हैं, जो मन के द्वारा उत्पन्न किये जाते हैं। मन की प्रवृत्ति तो हमारे ध्यान को बाहर इन्द्रियों के भोगों तथा संसार के आकर्षणों की ओर ले जाने की रहती है। स्थूल जगत में मन की प्रवृत्ति ---

निम्न या नीची होती हैं, पर जैसे-जैसे यह अधिक शुद्ध होता है और अन्तर में ऊँचे सूक्ष्म मण्डलों में चढ़ता है, इसकी प्रवृत्तियाँ भी अधिक शुद्ध हो जाती हैं। इस संसार में सब आत्माएँ संघर्ष कर रही हैं और हरएक अपना बोझ ढो रहा है। पिछले जन्म में जिसने जो बोया है उसी को वह काट रहा है। इस सृष्टि में कर्म का विधान कठोरता-पूर्वक काम कर रहा है। अपनी दुर्बलताओं के लिये हमें कभी हताश नहीं होना चाहिये। मालिक पूरी तरह कृपालु है। वह पतित-पावन कहलाता है। उसके दरबार में हर जीव के लिये आशा करने की गुंजाइश है।

आपके निजी अनुभवों के बारे में मेरी राय है कि ऐसे स्वप्नों को हमें अधिक महत्व नहीं देना चाहिये। स्वप्नावस्था अथवा उनींदेपन की अवस्था के ये अनुभव ज़्यादातर हमारे पिछले जन्म के सम्बन्धों और संस्कारों की वज़ह से होते हैं, जिनका अब हमें ज्ञान नहीं है। इसलिये इन्हें संतोषप्रद ढंग से समझना या इनका हमारे इस ज़िन्दगी से सम्बन्ध जानना हमारे लिये सम्भव नहीं है। यदि हमें पिछले जन्म और कर्मों का कुछ ज्ञान होता तो हम उन्हें अधिक अच्छी तरह समझ सकते थे। ऐसे अनुभवों के द्वारा हम इस जन्म में अपने पिछले कर्मों से गुज़रते हैं। उन कर्मों की वजह से दिखायी या सुनाई देने वाली इन बातों पर हमारा कोई नियंत्रण या वश नहीं होता। इसलिये उन पर ध्यान न देना या उनसे ऊपर उठ जाना ही अच्छा है। अनेक अतृप्त वासनायें, अधूरी इच्छाएं, दबी हुई भावनायें आदि ऐसी होती हैं, जो अर्द्धचेतन मन में सोयी रहती हैं, और कभी-कभी ये स्वप्न या इसी तरह के दूसरे अनुभवों के रूप में उभर आती हैं। हम इनसे बच नहीं सकते, भजन-सुमिरन के द्वारा अपने आप को इतना शक्तिशाली बना सकते हैं कि उनसे प्रभावित न हो सकें।

(४४९)

अपने जीवन के बारे में आपने जो लिखा है, उसे पढ़कर मुझे अफ़सोस हुआ, लेकिन याद रखें कि सन्तमत हमारी सांसारिक तकलीफ़ों

को कम करने और आर्थिक लाभ पहुँचाने के लिये नहीं है। नामदान के समय यह बात स्पष्ट रूप से, जोर देकर समझा दी जाती है, और नामदान के लिये आवेदन करते समय जिज्ञासु जो आवेदन-पत्र देता है, उसमें भी इसका उल्लेख रहता है।

हमारा जीवन हमारे प्रारब्ध के अनुसार चल रहा है, जो हमारे पिछले कर्मों का फल है, हमें इसका सामना करना ही पड़ेगा। इसे कोई बदल नहीं सकता। हमारे जन्म से पहले ही, छोटी से छोटी बात के साथ, हमारा भाग्य या प्रारब्ध लिख दिया गया था। फिर इसके बारे में चिन्ता क्यों? सन्तमत समझाता है कि हमें अपना रूहानी अभ्यास करते हुए इन परेशानियों से ऊपर उठने की कोशिश करनी चाहिये जो सभी के जीवन में आती हैं। कोई मनुष्य यह नहीं कह सकता कि जो कुछ वह चाहता है वह सब उसके पास मौजूद है, और इस संसार में वह हमेशा पूरी तरह सुखी रहा है। हरएक को कुछ न कुछ भार ढोना ही पड़ता है। कुछ का बोझ हलका होता है, कुछ का भारी। हमें सदा अपनी दशा और स्थिति को सुधारने की कोशिश करनी चाहिये, पर यदि सफलता न मिले तो इसे अपना प्रारब्ध मानकर परमात्मा की मौज में रहना चाहिये। और हम कर भी क्या सकते हैं? चिंता करने से हमारा भाग्य नहीं बदल सकता। जो हमें मिलना है, उसे कोई हमसे दूर नहीं रख सकता और जो हमारे भाग्य में नहीं है, उसके लिये चाहे जितनी कोशिश कर ले, सफलता नहीं मिलेगी।

मालिक ही हमारी आशा है, वही हमारा छुटकारा है। उसकी ओर मुड़ें, इस नश्वर तथा छोटे से जीवन के बारे में सोचना छोड़ दें। चाहे सुख से जीयें या दुःख से, एक दिन इसका अन्त होना ही है। उस पार एक कहीं अधिक महत्वपूर्ण जीवन हमारी राह देख रहा है, और उसके लिये हमें तैयारी करनी चाहिये। वहाँ हमें आश्रय या सहायता प्रदान करने के लिये कोई मित्र या नातेदार नहीं रहेगा। यहाँ हम जो कर्म करेंगे, वहाँ उन सबका हमें जवाब देना पड़ेगा। जब

बुलावा आयेगा, तब भजन-सुमिरन ही एक ऐसी वस्तु है जो हमारे साथ जायेगी और हमें सहायता देगी। जो जीवन में आपसे भी ज्यादा बुरी हालत में हैं, उनकी ओर देखें और मालिक को धन्यवाद दें कि आपकी दशा उनसे कहीं अच्छी है।

कृपया चिन्ता न करें और तनाव-रहित ज़ीवन बिताते हुए रोज़ भजन-सुमिरन को समय दें। जो मार्ग आपने चुना है, उससे कुछ व्यावहारिक लाभ उठाने की कोशिश करें। इस संसार में जीवन सदा इसी तरह चलेगा। यहाँ पूर्ण सुख है ही नहीं।

(४५०)

'स्वतन्त्र इच्छा' के प्रश्न के सम्बन्ध में सन्तमत की पुस्तकों में काफ़ी विस्तार से चर्चा की गयी है। यह बात नहीं है कि हममें स्वतंत्र इच्छा नहीं है। हममें 'प्रतिबंधित' या सीमित इच्छा है। कृपया मन के द्वारा गुमराह होकर भजन-सुमिरन से बचने की कोशिश न करें। ऐसे तर्क से आप किसी दूसरे का नहीं, खुद अपना ही नुकसान करेंगे।

कोशिश करने और अपने कर्तव्य का पालन करने की हमसे उम्मीद की जाती है, पर अन्तिम परिणाम हमारे हाथ में नहीं है। आर्थिक लाभ, पद या अधिकार प्राप्त करने के लिये हम कितनी कोशिश करते हैं, उनके लिये कितना त्याग करना पड़ता है और कितनी कीमत चुकानी होती है। इन बातों में हम स्वतन्त्र इच्छा की कमी की बात नहीं करते। पर जब भजन-सुमिरन की बात आती है तो भीतर जाने से बचने के लिये मन यह सवाल उठा देता है, क्योंकि अन्दर वह जाना नहीं चाहता। ऐसे तर्कों में अपना समय व्यर्थ न खोयें। ये आपको कहीं भी नहीं पहुँचायेंगे। आपको अपना भजन-सुमिरन करना ही होगा। इससे कोई छुटकारा नहीं है। इसके सिवाय और कोई रास्ता नहीं है। हम अपने आप को धोखा दे सकते हैं, परन्तु अन्तर में जो ताकत है, उसे धोखा नहीं दे सकते।

(४५१)

कृपया याद रखें कि सन्तमत में निराश या हताश होने के लिये

कोई स्थान नहीं है। यह हर्ष और आशा का मार्ग है। जब मालिक ने हमेशा रहने वाली मुक्ति के लिये आपको चुना है, तो इस सृष्टि में ऐसी कौन-सी ताकत है जो आपको यहाँ बहुत समय के लिये रोक सकती है? यह केवल समय का प्रश्न है। सभी जीवात्माएँ संघर्ष कर रही हैं और कर्मों का अपना-अपना बोझ ढो रही हैं। मन को वश में करने और इस बोझ को उतार फेंकने के लिये बहुत समय और प्रयास लगेगा। पर एक दिन यह काम अवश्य पूरा होगा। सतगुरु आपको निज-घर में ले जाकर रहेगा। इसलिये आप अपनी सब चिन्तायें त्याग दें और प्रेम तथा भक्तिपूर्वक प्रति-दिन अपना कर्तव्य करें। मन कैसा बर्ताव करता है, इसकी परवाह किये बिना भजन और सुमिरन को पूरा समय दें। धीरे-धीरे यह अन्तर में रस लेने लगेगा और बाहरी जगत से हट जायेगा। यही जीवन में काया-पलट का समय होगा। सतगुरु तथा उसका प्रेम सदा आपके साथ है।

(४५२)

नाम लेने की आपकी इच्छा को मैं समझता हूं, लेकिन मेरे ख़याल से, आपकी पत्नी की नशीली चीज़ें लेने की जो आदत है उस समस्या को पहले हल कर लेना अधिक अच्छा होगा। आप ये चीजें लेते रहे थे, और आपकी पत्नी ख़ुद अधिकांश समय आपके साथ 'चरस' पीती रही हैं। यह कोई बहुत उत्साहप्रद बात नहीं है। इन परिस्थितियों में आपके लिये चरस न पीने के अपने इरादे पर अडिग रहना बहुत कठिन होगा। यह प्रलोभन मामूली नहीं होगा और पूरी ईमानदारी से सन्तमत के मार्ग को स्वीकार करने के मार्ग से भटक जाना उचित नहीं होगा।

सन्तमत में सत्संगी को काम की प्रवृति को उचित सीमाओं में रखना होता है। काम में सीमा से ज्यादा प्रवृत होना आध्यात्मिक प्रगति के लिये अहितकारी और हानिप्रद होता है। ऐसी हालत में आप क्या उपाय कर सकेंगे जबकि इस प्रवृति को भड़काने के लिये चरस आदि अप्राकृतिक तरीकों से कोशिशें की जा रही है? नामदान के लिये

आवेदन करने में कृपया जल्दी न करें, वल्कि ठण्डे और शांत चित्त से इस पर विचार करें, और इस मसले को यथा-शक्ति अच्छी तरह से हल करने की कोशिश करें।

(४५३)

आपके पास जो फर का कोट है, उसे आप खुशी से पहन सकती हैं। इसमें कोई दोष नहीं है। क्या हम चमड़े की बनी हुई अनेक वस्तुओं का उपयोग नहीं करते ? जीवन में हमें व्यावहारिक होना चाहिये, वाल की खाल निकालने की ज़रूरत नहीं है। आखिर हमें इस संसार में रहना है।

एक फर कोट के उपयोग की वात से कहीं वढ़कर ऐसी गंभीर वातें हैं, जिनके वारे में हमें चिन्ता करनी चाहिये। मन चालाकी से इन महत्वहीन छोटी वातों में हमारा ध्यान लगा देता है, और उन गंभीर दुर्वलताओं को नज़रअंदाज़ करता है, जो हमें इस संसार में वाँधे रखती हैं। फर कोट को दूर फेंकने के वदले क्रोध, लोभ, काम, मोह, अहंकार, पर-निन्दा की आदतों तथा दैनिक भजन-सुमिरन की तरफ लापरवाही आदि का त्याग करें। परमात्मा की प्राप्ति के हमारे मार्ग में ये दुर्वलताएँ वाधा डालती हैं, और हमारे जीवन को दिन रात कुतरती रहती हैं। हमें सन्तमत की रहनी पर पूरा ध्यान देना चाहिये ताकि वापस निजधाम की हमारी मंज़िल आसानी से जल्दी पूरी हो सके।

(४५४)

मन को वश में तथा दूषित वासनाओं से मुक्त रखने के लिये सुमिरन (पाँच पवित्र नामों का जप) अत्यन्त शक्तिशाली हथियार है। मन को अन्तिम रूप से वश में करने का एक-मात्र उपाय उसे अन्तर में शब्द-धुन के साथ जोड़ देना है, और यह तव ही होगा जब सुमिरन के द्वारा शरीर के निचले भागों से निकल कर चेतना तीसरे तिल तथा उसके पार पहुँच जायेगी। अन्तर में ध्वनि के प्रति आसक्ति के सिवाय

ऐसी और कोई आसक्ति नहीं है जो मन का मुंह विषय-विकारों से मोड़ सके।

सुमिरन पर ज़ोर दें। सुमिरन हमेशा करते रहने की कोशिश करें। जब तक चेतनता शरीर से निकल कर तीसरे तिल पर एकाग्र नहीं होती, तब तक हम अन्तर में सच्चे शब्द को नहीं सुन सकते। महीनों अथवा वर्षों की बात नहीं है। यह पूरे जीवन चलने वाली लड़ाई है, और यदि हम एक जन्म में मन को वश में कर सकें तो यह हमारे लिये सौभाग्य की बात होगी। आखिर मन कोई छोटी ताकत नहीं है। आप की मेहनत और लगन से मालिक की दया प्राप्त होगी। हमारी मेहनत और उसकी दया, दोनों साथ-साथ चलते हैं। इस बात की परवाह किये बिना कि मन कैसा व्यवहार करता है, हमें भजन-सुमिरन को रोज़ नियमित समय देना चाहिये। धीरे-धीरे यह अन्तर में ठहरने लगेगा। इस बलवान शत्रु को वश में करने का और कोई उपाय नहीं है।

(४५५)

कृपया यह समझने की कोशिश करें कि नशीली वस्तुओं को केवल इसलिये नही छोड़ना है कि आप सन्तमत के मार्ग पर चलना चाहते हैं, बल्कि वैसे भी ये भयंकर ज़हर होते हैं। इनसे मनुष्य का सिर्फ पतन ही नहीं होता बल्कि उसके शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य को भी अपार हानि पहुँचती है। आपके देश में बहुत बड़ी संख्या में युवाजन भयानक अपराधी बन गये हैं, या पागलखानों में भरती हैं या आत्म-हत्या तक कर चुके हैं। यह सब केवल नशीली वस्तुओं के कारण ही हुआ है। मनुष्य जब नशीली वस्तुओं का दास बन जाता है, तब उसके लिये उपयोगी जीवन बिता सकना असम्भव हो जाता है। इस आदत को आप जितनी जल्दी छोड़ सकें, छोड़ने की कोशिश करें। आपको साहस तथा दृढ़ संकल्प-शक्ति से काम लेना होगा, और यदि आप ऐसा कर सकेंगे तो सफल होंगे। आपके देश में ऐसी समितियां

अनेक संगठन हैं, जो नशा करने के आदी लोगों की नशा छोड़ने में सहायता करते हैं। उनकी सहायता लें।

मन के इस प्रलोभन को यदि आप वश में नहीं कर सकते तो उन प्रलोभनों से आप कैसे वच सकेंगे जिन्हें मन आपके सामने लाता रहेगा ? इन नशीली चीज़ों के प्रभाव से सदाचार, शील और अच्छे चरित्र की सब सीमायें टूट जाती हैं और निर्मल नैतिक जीवन बिताना लगभग असम्भव हो जाता है। अपनी इच्छा-शक्ति को मजबूत बनायें। यदि नशा छोड़ने की इच्छा सच्ची होगी तो मालिक भी आपकी मदद के लिये आयेगा। प्रलोभन पर यदि एक बार काबू पा लेंगे तो इस दिशा में आपका अगला प्रयास आसान होगा। मालिक से उसकी दया और सहायता के लिये प्रार्थना करें।

जब तक इन नशीली वस्तुओं को आप छोड़ नहीं देते, इस मार्ग को अपनाने का सवाल ही नहीं उठता। अपने को असहाय और हताश महसूस न करें, बल्कि संघर्ष जारी रखें और एक सैनिक के समान बहादुर बनें। मन से कह दें कि अब आप उसके आगे बिलकुल नहीं झुकेंगे, और अब आप एक नया जीवन बिताना चाहते हैं।

(४५६)

सन्तमत में अभ्यास के लिए कोई बँधे हुए नियम नहीं हैं। लेकिन आम तौर पर हम तवज्जह को आँखों के केन्द्र पर जमा कर सुमिरन करते हैं और अगर हो सके तो, साथ ही ध्यान भी करते हैं। ध्यान अनिवार्य या लाज़िमी नहीं है, परन्तु मन को तीसरे तिल पर स्थिर रखने में यह सहायक होता है, क्योंकि अन्दर अन्धकार के सिवाय और कुछ न देखकर वह बाहर भागना चाहता है। ध्यान संभव न होने पर भी एकाग्र होकर सुमिरन करने से मन तीसरे तिल पर ठहरना शुरू कर देगा। ऐसे अनेक सत्संगी हैं जिन्होंने अपने सतगुरु के दर्शन नहीं किये हैं, अतएव उनके लिये ध्यान करना सम्भव नहीं है। ऐसे शिष्यों को चाहिये कि तीसरे तिल में मन को एकाग्र करके सुमिरन करते रहें। इस अभ्यास से उनकी चेतनता तीसरे तिल पर और उसके पार सतगुरु के नूरी स्वरूप तक पहुँच जायेगी।

अभ्यास के तीन-चौथाई समय में सुमिरन करने के वाद हम भजन के आसन में बैठकर धुन को सुनना शुरू करते हैं। इस अवसर पर सुमिरन बंद कर दिया जाता है, और सारी एकाग्रता शब्द-धुन को ध्यान-पूर्वक सुनने में लगाई जाती है। इस समय ध्यान आवश्यक नहीं है।

यदि एक बैठक में ढाई घण्टे नहीं दिये जा सकें तो आप खुशी से अपने अभ्यास को दो या अधिक बैठकों में बांट सकते हैं, और हर बैठक में इसी तरह पहले सुमिरन और बाद में भजन करते रहें। सुमिरन और भजन में लगाया गया आपका प्रत्येक क्षण आपके खाते में जमा होता है। इसका अर्थ यह नहीं है कि यदि कोई ढाई घण्टे या उससे थोड़ा कम समय नहीं दे सकता तो उसे अभ्यास ही छोड़ देना चाहिये। मालिक की याद, ख़याल और भक्ति में लगने वाला हमारा प्रत्येक क्षण हमें रूहानी मार्ग में आगे ले जाता है। अपने अधिकांश समय में सुमिरन करते रहने की कोशिश करें। मन अधिकतर खाली रहता है और ऐसे समय में सुमिरन चालू रखा जा सकता है। यह बहुत सहायक होता है।

यदि ध्यान करने की कोशिश से तीसरे तिल पर एकाग्र होने में बाधा पड़े और मन अपने केन्द्र को छोड़ दे, तो ध्यान को त्याग दें। यदि कोई अन्य प्रश्न हो तो आप मुझे सहर्ष लिख सकते हैं।

(४५७)

आपका यह प्रश्न कि इस संसार में आत्माओं की उत्पत्ति कैसे हुई, केवल एक किताबी या बौद्धिक सवाल है और उस मालिक के सिवाय, जिसने सृष्टि के शुरू में हमें यहां भेजा है, और कोई इसका उत्तर नहीं दे सकता। इसका कारण केवल वही जानता है। क्या हमारे लिये इतना जानना काफी नहीं कि हम एक ऐसे संसार में हैं, जहां जन्म और मरण की यातना है और जहां हमें कहीं शांति नहीं मिलती। हम यह भी जानते हैं कि यह संसार हमारा घर नही है और आत्मा अमर है और ऐसे स्थान की रहने वाली है जो स्थायी है और जहां

अनन्त सुख है। तब क्या यह हमारा पहला और सबसे बड़ा कर्तव्य नहीं है कि काल की इस दुनिया से छुटकारा पायें और मालिक की गोद में शांति प्राप्त करें?

कुछ प्रश्न ऐसे हैं जिन्हें हमारी सीमित बुद्धि पूछ सकती है, लेकिन उनके जवाब कभी नहीं समझ सकती, भले ही उन्हें समझाने की कितनी ही कोशिश की जाये। अन्तर में जब हम ऊँचे चेतन मण्डलों में जाते हैं, तब अनेक बातें या तो स्पष्ट हो जाती हैं या उनको जानने की हमारे अन्दर कोई रुचि या इच्छा नहीं रह जाती। काल की इस दुनिया से हमें जितनी जल्दी हो सके निकलने की पूरी कोशिश करनी चाहिये।

मालिक के पास पहुँचने के अपने प्रयास में हमें मन को शांत, स्थिर और सब तरह के विचारों से खाली करना पड़ता है। तब फिर ऐसे प्रश्न उठाकर, जिनके उत्तर इस स्थूल स्तर पर नहीं दिये जा सकते, मन को और अधिक चंचल और अशान्त क्यों बनाया जाये? मालिक के प्रति अपने कर्तव्य का रोज़ पालन करें, और उसके लिये प्रेम और भक्ति बढ़ाने की कोशिश करें। इनसे मन अन्तर में मालिक की ओर मुड़ेगा।

(४५८)

केलिफोर्निया क्षेत्र में विनाशकारी भूकम्प के सम्बन्ध में सामान्य रूप से प्रचलित अफ़वाहें मैं बहुत दिनों से सुनता आ रहा हूं। ऐसी अफ़वाहों को मैं कोई महत्व नहीं देता। हम चाहे जो करें, अपने प्रारब्ध से बच नहीं सकते।

सन्तमत का उपदेश है कि हमें मालिक में श्रद्धा रखनी चाहिये और उसकी मौज में रहना चाहिये। और जब हम उसकी मौज के अन्दर रहना सीख जाते हैं तो जीवन में हमें किसी बात का भय नहीं रहता। हम यह नहीं जानते कि हमारे भाग्य में क्या बदा है और कहां क्या होने वाला है। संसार में अनेक जगह दुःखद भूकम्प आते रहते हैं, और ऐसे अनेक प्राकृतिक उपद्रव होते हैं, जिनके बारे में हमें

कोई पूर्व चेतावनी नहीं मिलती। प्रत्येक प्राणी की मृत्यु का समय और स्थान निश्चित रहता है और इससे कोई बच नहीं सकता। फिर चिन्ता क्यों ?

(४५९)

'सार वचन' से आपने जो उद्धरण दिया है, वह एक भक्त के सम्बन्ध में है। वह ऐसा भक्त है जिसने आन्तरिक आध्यात्मिक मंज़िलें पार कर ली हैं, अपने समस्त कर्मों का हिसाब साफ कर लिया है और दूसरी मंज़िल के पार पहुँच चुका है। ऐसा भक्त अपने परिवार के उन पूर्व सदस्यों को, जो इस संसार में नहीं रहे, अपने अभ्यास के द्वारा सहायता पहुँचाता है।

आत्महत्या एक घोर पाप है। इसकी वजह से कर्मों का बोझ बहुत भारी हो जाता है। इसका किसी को कभी विचार तक नहीं करना चाहिये। अपने इस जन्म के दुखों से बचने के लिये मनुष्य आत्मघात करता है, लेकिन यह भूल जाता है कि इन यातनाओं के द्वारा जिन कर्मों का वह भुगतान कर रहा है, उनका अगले जन्म में भी भुगतान करना होगा और साथ ही आत्महत्या का बोझ और पाप और बढ़ जायगा। जिसने जो बोया है, उसे काटे बिना वह छुटकारा नहीं पा सकता। यदि इस जन्म में नहीं तो अगले जन्म में कर्मों का हिसाब साफ करना ही पड़ता है। कर्मों को न तो कभी भुलाया जा सकता है और न ही कभी उन्हें अनदेखा या रद्द किया जा सकता है। उनका भुगतान करना ही होगा। पिछले सैंकड़ों जन्मों के कर्मों का भी हिसाब हमें चुकाना पड़ता है जिन्हें किये चाहे हमें बहुत अधिक समय बीत चुका हो। एक जन्म में हम जो कुछ करते हैं, उसका दूसरे जन्म में पूरा भुगतान नहीं हो पाता। बहुत कुछ बाकी रह जाता है, जिसे अगले जन्मों में भुगतने के लिये संचित रखा जाता है।

शरीर के 'सुन्न' या बेहोश होने पर आत्मा शरीर को नहीं छोड़ती, बल्कि सुप्त अथवा निष्क्रिय अवस्था में शरीर में ही रहती

रहती है। शरीर को एक बार छोड़ देने के वाद (मरने पर) आत्मा उसी शरीर में वापस नहीं आती।

जव हमारी सुरत या तवज्जह तीसरे तिल के और आगे पहुंचती है तव हमें पहले तारा-मण्डल दिखाई देता है, उसके वाद सूर्य और चन्द्र के प्रदेश दिखते हैं, और उसके वाद सतगुरु का ज्योतिर्मय शव्द-स्वरूप आता है। ये अन्दर के मण्डलों की मुख्य वातें हैं।

जहाँ तक आपकी पत्नी का सवाल है, सव-कुछ मालिक के हाथ में है। इस मार्ग के प्रति उनकी रुचि पैदा करने की कोशिश मिठास और मृदुता से करें। सन्तमत में उनकी रुचि जाग्रत करने में आपका अपना जीवन सहायक होना चाहिये। अनिच्छुक व्यक्तियों पर सन्त-मत थोपना नहीं चाहिये, क्योंकि उस दशा में मन में तीव्र प्रतिक्रिया हो सकती है या उलटा प्रभाव पड़ सकता है।

रूहानी तरक्की के वारे में कभी परेशान न हों, आप मालिक के हाथ में हैं। उसने अव आपको अपना लिया है, एक दिन वह आपको वापस निजधाम ले जायेगा। प्रेम और भक्ति के साथ अपना भजन-सुमिरन करते रहें।

(४६०)

जव आप विश्रांति या आराम के लिए आंखें वन्द करके शांति-पूर्वक वैठते हैं, तव आपको कोई तनाव महसूस नहीं होता। वल्कि उस समय आपको वहुत आराम मालूम होता है। ठीक उसी तरह, वगैर किसी विशेष विन्दु को देखने की कोशिश किये या बिना किसी प्रकार से अपने नेत्रों पर दवाव डाले, सुमिरन के लिये वैठें।

तीसरे तिल पर एकाग्र होने का अर्थ है अपने विचार को वहाँ रखना और मन को वाहर नहीं जाने देना। वगैर आंखों को पलटे और वगैर उन पर दवाव डाले अंधकार में देखते रहें। अन्तर में प्रकाश आपकी कोशिशों से नहीं आयेगा। जव अन्दर अंधकार में प्रकाश प्रकट होगा तो आपका ध्यान अपने आप उसकी ओर खिंच जायेगा। यह ठीक वैसे ही होगा, जैसे एक अत्यन्त अंधेरे कमरे में प्रकाश की

एक किरण के अचानक कहीं से प्रकट हो जाने पर आपका ध्यान अपने आप उसकी ओर चला जाता है।

शरीर के किसी भी भाग पर किसी प्रकार का दबाव डाले बिना, तनाव-रहित होकर, अपना सुमिरन करें। तीसरे तिल पर ध्यान को स्थिर रखने या वहां एकाग्र करने का अर्थ केवल यही है कि अपने विचारों को वहां रखें और मन को बाहरी दुनिया की कोई बात सोचने न दें। दोनों बातों में कोई अन्तर नहीं है।

तीसरे प्रकार के अर्थात संचित कर्मों को शब्द-धुन भस्म कर देती है। शब्द के साथ जुड़ने और उसे रोज-रोज और भी अच्छी तरह सुनने के लिये ही यह रूहानी अभ्यास किया जाता है। यह जन्म-जन्मातरों से जमा हो रहे संचित कर्मों को समाप्त कर देता है। चाहे आप यह कहें कि भजन-सुमिरन कर्मों का नाश करता है या चाहे यह कहें कि शब्द उनका नाश करता है, दोनों का अर्थ एक ही है।

सुन्नता सिमटाव की निशानी है, और शरीर के नीचे के भागों में सुन्नता महसूस हो तो आपको प्रसन्नता होनी चाहिये। शरीर का सुन्न होना प्रगति की पक्की पहचान है। शरीर के विभिन्न भागों को जब आत्मा छोड़ती है और तीसरे तिल पर पहुंचती है तो सुन्न पड़ने का अनुभव होगा ही। चिन्ता न करें। प्रेम और भक्ति सुमिरन-भजन से ही आयेगी।

सतगुरु द्वारा शिष्यों पर कृपा करने के तरीकों में से एक तरीका 'प्रसाद' है। यह श्रद्धा और विश्वास की बात है। सत्संगी में यदि विश्वास है, प्रसाद का मूल्य बहुत है; अगर नहीं है, तो इसका महत्व नहीं रहता।

(४६१)

काम में बहुत अधिक लगे रहने का अर्थ है इस वासना में बिना विवेक के उलझे रहना। इससे व्यक्ति का पतन होता है और मन की वृत्तियां पतित हो जाती हैं। काम की प्रवृत्ति का सीमा के अन्दर

उपयोग अनुचित नहीं। अधिकांश सतगुरु गृहस्थी थे, और उनके परिवार थे। सन्तमत यह नहीं कहता कि संसार छोड़ दो और एकान्तवासी संन्यासी बन जाओ। संसार के पदार्थों तथा व्यक्तियों से दूर भागना असली त्याग नहीं है। महत्व की बात तो मन की वृति है। हमें संसार में रहते हुए भी संसार का नहीं होना है। जीवन के हर क्षेत्र में हमें अपना कर्तव्य करना है और साथ ही यहां के पदार्थों की असलियत को भी याद रखना है। प्रत्येक वस्तु नाशवान और क्षण-भंगुर है। हर संबंधी, हर पदार्थ, मालिक की दी हुई धरोहर है जिसकी हम उसकी ओर से संभाल कर रहे हैं। हमारा अपना कुछ भी नहीं है।

इसमें सन्देह नहीं कि काम का आवेग प्रबल होता है और उसके दमन से कभी-कभी गंभीर उलझनें पैदा हो जाती हैं। उचित सीमाओं के अन्दर विवेकपूर्ण ढंग से इसका प्रयोग करना चाहिये। तब आध्यात्मिक प्रगति में यह बाधक नहीं होता। सब बातें धीरे-धीरे और क्रमिक रूप से होंगी। आप रातों-रात इन पाँच विकारों से मुक्त नहीं हो सकते। समस्त चिन्ताएं छोड़कर प्रेम तथा भक्तिपूर्वक अपना भजन और सुमिरन प्रति-दिन किया करें। मालिक ने अब आपको अपना बना लिया है, और एक दिन अवश्य वापस निजधाम में ले जायेगा।

(४६२)

यह स्पष्ट है कि आपने सन्तमत के उपदेशों को सावधानी-पूर्वक न तो पढ़ा है और न समझा है। दूसरों के मन की बातें जानने, हस्तरेखा पढ़ने तथा भविष्य की बातें बताने में सन्तमत का न तो विश्वास है और न ही वह इन्हें कोई महत्व देता है।

किसी के मन की बात जानने की योग्यता पा लेने से विश्वास का निर्माण नहीं होता। यह एक ऐसा विश्वास है जो अन्दर से आता है, जिसके लिये किसी बाहरी सहायता की आवश्यकता नहीं होती। इस बात का सवाल ही नहीं उठता कि आपको क्या अनुभव

सुमिरन कभी व्यर्थ नहीं जायेगा । अभ्यास में लगाया गया हर क्षण आपके खाते में जमा होगा ।

सन्तमत स्वप्नों को कोई महत्व नहीं देता । वे हमारे वश में नहीं होते और बुद्धि के द्वारा समझे या समझाये नहीं जा सकते । अर्द्ध-चेतन मन में पिछले अगणित जन्मों की छाप पड़ी है, और अलग-अलग अवसरों पर तरह-तरह के रूपों में ये छाप प्रकट होती हैं। सन्तमत में हम केवल उन्हीं अनुभवों को महत्व देते हैं, जो हमें सुमिरन-भजन के समय चेतनावस्था में प्राप्त होते हैं । उनके वास्तविक होने का हमें भरोसा रहता है, क्योंकि पवित्र नामों से हम उनकी परख कर लेते हैं, और ऐसे अनुभवों को हम जब चाहें दोहरा सकते हैं ।

अन्तर में आपको अगर किसी की आवाज़ सुनाई दे अथवा चेहरा दिखाई दे तो उससे गुमराह न हों। ये सब धोखे हैं, और आपको रास्ते से दूर कर देंगे । भजन-सुमिरन के समय यदि पीछे से आपको कोई आवाज़ सुनाई दे, तो बोलने वाले से कहें कि जो कुछ कहना चाहता है सामने आकर कहे । तब आप पहचान सकेंगे कि वह आप का सतगुरु है या काल की कोई शक्ति है । पवित्र नामों की कसौटी आपके पास है और यदि मन में उनका सुमिरन करते रहेंगे तो आप को कोई धोखा नहीं दे सकेगा । किसी बात की चिन्ता न करें, प्रेम तथा भक्तिपूर्वक अपनी पूरी कोशिश करते रहें । हम कैसी प्रगति कर रहे हैं, इसका निर्णय करना हमारा काम नहीं है । उसे सतगुरु पर छोड़ दें । हमारे लिये सबसे अच्छा क्या हैं, इसे वही जानता है ।

(४६४)

जिस तनाव की आप शिकायत करते हैं, उसका आपके भजन-सुमिरन से कोई सम्बन्ध नहीं है । वास्तव में भजन-सुमिरन से तो शान्ति और चैन की भावना आती है । ऐसा प्रतीत होता है कि आप बहुत ज्यादा भावुक हैं, और अपनी भावना में बहुत ज्यादा बह जाते हैं । यही इस तनाव का कारण हो सकता है ।

अभ्यास में बैठते समय संसार को बाकी सब बातें और समस्याएं

भूल जायें और पूरी तरह तनाव-रहित मन के साथ सुमिरन और भजन के लिये बैठें। चिन्ता न करें और आँखों पर कोई दबाव डालने की कोशिश न करें। आँखों को ऊपर या केन्द्र की ओर न खींचें। जब आप नेत्र मूंद लेते हैं और अपने आस-पास के वातावरण को भूल जाते हैं, तो आप अपने आप वहाँ पहुँच जाते हैं जहाँ आपको होना चाहिये। पवित्र नामों का सुमिरन करते रहें। यह सुमिरन आपको शांति और शक्ति देगा।

(४६५)

सन्तमत अभ्यास का मार्ग है, कथनों का नहीं। केवल वही समय आपके खाते में जमा होता है जो आप अपने सुमिरन और भजन में लगाते हैं। उस सम्पूर्ण प्रेम को, जिसे आप शब्दों या लफ़्ज़ों में प्रकट कर रहे हैं, भजन-सुमिरन का रूप लेना चाहिये। केवल तभी वह फलप्रद होगा। तब वह कई गुना बढ़ेगा और मालिक की अपार दया लायेगा।

आप उपवास या प्रतिदिन केवल एक बार भोजन के द्वारा या इसी प्रकार की तपस्याओं के द्वारा इस रूहानी धन को प्राप्त नही कर सकते। न तो यह माँगे मिलती है, न मोल। इसे मेहनत और अभ्यास के द्वारा प्राप्त करना पड़ता है। भजन-सुमिरन के लिये शरीर को तन्दुरुस्त रखना जरूरी है। जरूरत से कम भोजन करके गुज़ारा करना और जरूरत से ज्यादा खाना, दोनों ही ठीक नहीं हैं। केवल सुमिरन ही मन को वश में कर सकेगा, क्योंकि केवल सुमिरन से ही अन्तर में उस शब्द के साथ जुड़ा जा सकता है, जो कि मन को वश में करने का असली उपाय है। इसके सिवाय और कोई उपाय नहीं है। भजन-सुमिरन के समय आनेवाली नींद पर विजय पाना चाहिये। कोई रोचक खेल-तमाशे देखते समय आप नहीं सोते, फिर भजन-सुमिरन के समय नींद क्यों आनी चाहिये? इस दुर्बलता पर विजय प्राप्त करने के लिये आपको दृढ़ इच्छा-शक्ति तथा संकल्प पैदा करना होगा।

(४६६)

ध्यान करने की आपकी इच्छा सराहनीय है, परन्तु किसी जानकार से युक्ति प्राप्त करने से पहले ऐसा करना उचित नहीं है। उचित मार्गदर्शन के बिना तीसरे तिल पर एकाग्र होने की कोशिश में आप अपने नेत्रों को हानि पहुँचा लेंगे। जो दर्द आपको महसूस होता है, उसका कारण यह है कि एकाग्रता के लिये आप जो कोशिश कर रहे हैं, उसका तरीका गलत है। आपके लिये यह समय पुस्तकें पढ़कर तथा सत्संग में जाकर सन्तमत को समझने का है। इस मार्ग में आने के बाद, अभ्यास करने के लिये काफ़ी समय रहेगा।

सन्तमत के सिद्धान्तों के अनुसार दृढ़ता के साथ जीवन बिताने की कोशिश करें। जो बातें इन ऊँचे सिद्धान्तों के विरुद्ध हैं; उन से दूर रहें। यह भविष्य के लिये उत्तम तैयारी होगी।

(४६७)

आपने अपने पुत्र को सहायता पहुँचाने के लिये जो धन उसे उधार दिया है, उसके बारे में परेशान न हों। आवश्यकता पड़ने पर बच्चे अपने माता-पिता से सहायता प्राप्त करने के अधिकारी होते हैं। बचपन में तथा उसके बाद भी माँ-बाप उनके लिये क्या कुछ नहीं करते ? इस बात को इतना अधिक महत्व न दें। खास बात तो यह है कि जब किसी को कुछ दिया जाये, तो बदले में कुछ पाने की आशा नहीं करनी चाहिये। यदि हम किसी के लेनदार या देनदार नहीं हैं तो हमें किसी अदालत में उपस्थित नहीं होना पड़ेगा। दूसरे शब्दों में, हमें हिसाब अदा करने के लिये इस संसार में वापस नहीं आना पड़ेगा। यदि पुत्र को तंगी है, अपने परिवार का निर्वाह करने में उसे कठिनाई हो रही है, तो इस स्थिति में यह उचित ही होगा कि आप इस पैसे को भूल जायें, खास कर उस दशा में जब यह पैसा आपके लिये कोई महत्व नहीं रखता। आवश्यकता के समय बच्चे अपने माता-पिता से सहायता की आशा करते ही हैं।

(४६८)

कृपया मालिल के प्रति अपने कर्तव्य का पालन प्रतिदि
रहें। केवल आपकी प्रीति और भक्ति ही आपके काम आये
का ज़बानी जमां खर्च नहीं। आपके प्रेम की मैं कद्र करता हूँ,
उसे अन्तर्मुख करें, और अन्तर में कुछ प्रगति करने का प्रयत्न
यही असली महत्व की बात है।

(४६९)

आपकी इस इच्छा की मैं सराहना करता हूँ कि अमरीका
कनाडा की मेरी आगामी सत्संग-यात्रा के अवसर पर मैं आपके रा
की यात्रा भी करूँ। लेकिन मेरे पास समय कम रहने के कारण
उन सभी स्थानों की यात्रा न कर सकूगा, जहां जाना मैं बहुत पसं
करूँगा। मेरे यात्रा कार्यक्रम को पहले ही अन्तिम रूप दिया जा चुक
है और अब उसमें कोई परिवर्तन करना सम्भव नहीं है।

इस बार मैं किसी को किसी खास केन्द्र मे आने के लिये ज़ोर
नहीं दूंगा। सत्संगी और जिज्ञासु अपनी सुविधानुसार कहीं भी और
हर जगह सत्संग में आ सकते है।

(४७०)

यदि आपका आचरण इस ढग का है, तो सतगुरु तथा भजन-
सुमिरन के प्रति जिस प्रेम की आप बात करती है, वह प्रेम कहाँ है?
आपने अपने पति को और खुद को धोखा दिया है, और अब मालिक
के प्रति प्रेम का दावा करके उसको भी धोखा देने की कोशिश कर
ही है। आप ऐसा नही कर सकेंगी, क्योंकि मालिक आपके अन्तर
हैं और हर बात को, जो आप करती है या सोचती है, वह देख
ा हैं। यदि आप सन्तमत के उपदेशों के अनुसार जीवन व्यतीत
ीं करती, तो इस मार्ग से लाभ कैसे उठा सकती हैं? और तब यह
कर कि अब तक कुछ नहीं मिला, कोई भी मार्ग को दोप कैसे दे
ा है?

(४७१)

आपके प्रेम तथा भक्ति की मैं क़द्र करता हूँ। कृपया याद रखें कि मालिक के प्रति हमारा दैनिक कर्तव्य, हमारा भजन-सुमिरन ही एकमात्र ऐसा उपाय है जिसके द्वारा हम जन्म-मरण की इस सृष्टि से छुटकारा पा सकते हैं। जो प्रेम और भक्ति आप माँग रहे हैं, वह तो आपके अन्तर से ही आयेगी। जब हम मालिक के प्रति अपने कर्तव्य का पालन सचाई के साथ रोज़ करते हैं, तब वह अपने प्रियजनों पर प्रेम और भक्ति के उपहार की वर्षा करता है।

(४७२)

जिसे आप 'विचार की आवाज़' कहते हैं, उसके धोखे में न आयें। यह आपका मन है जो आपको ठग रहा है। कभी-कभी मन में दबे हुए विचार सतह पर आ कर मन में भ्रम पैदा करते हैं। सतगुरु कभी इस तरह सलाह नहीं देता, जिस तरह आपको यह 'विचार की आवाज़' देती प्रतीत होती है। किसी व्यक्ति से विवाह करना या न करना केवल आपका अपना मामला है और ऐसे मामलों में मैं कभी दख़ल नहीं देता।

मन बहुत शक्तिशाली है और हमें ठगने के लिए हमेशा तैयार रहता है। हमें उससे खबरदार रहना चाहिये। अपने विवेक और बुद्धि का उपयोग करके देखें कि क्या सतगुरु कभी किसी को ऐसी सलाह दे सकता है? सतगुरु का शिष्य के साथ सम्बन्ध एक दूसरे ही स्तर पर होता है। यदि कोई स्वरूप आपसे बात करने के लिये प्रकट हो, तो तुरन्त सुमिरन करके उसकी जाँच कर लें। किसी चीज़ से न डरें। परख करने के लिये आपके पास पवित्र नाम हैं। कोई आप को हानि नहीं पहुँचा सकता।

(४७३)

सन्तमत पर चलने की आपकी इच्छा बहुत सराहनीय है। किन्तु कृपया याद रखें कि सन्तमत में यह ज़रूरी या लाज़िमी है कि केवल विवाहित पति और पत्नी के बीच ही उचित सीमा के अन्दर काम-

सम्बन्ध हों । इस विकार में अधिक लिप्त रहने का औ
'मुक्त-जीवन' का सन्तमत समर्थन नहीं करता ।

कुछ लोगों के लिये विवाह कानूनी औपचारिकता
कागज़ का एक बेकार टुकड़ा हो सकता है, पर सामाजिक त
बंधनों के अपने महत्व और मूल्य होते हैं । इसके सिवाय, स
या यों भी नियमित विवाह के वाहर यौन-सम्बन्धों को उ
ठहराया जा सकता । अब आप खुद यह समझ सकते हैं कि अ
सन्तमत को अपनाना चाहेंगे, तो इसके लिये आपको किस प्रक
जीवन-प्रणाली या रहनी अपनानी होगी ।

सन्तमत को एक अनोखा मार्ग समझकर अथवा केवल इस
कि इसमें आपका कोई परिचित व्यक्ति शामिल है, इसे नहीं अपन
चाहिये । आपको चाहिये कि इस विज्ञान को ख़ुद अच्छी तरह सम
लें, और यह जान लें कि यह है क्या चीज़, तथा वह आपसे क्या चाहत
है और आपको क्या दे सकता है । यह एक गम्भीर विषय है और इ
सरसरी तौर से नहीं लेना चाहिये । सन्तमत का साहित्य पढ़ें, सत्संग
में जायें, सत्संगियों से अपनी समस्याओं के बारे में चर्चा करें और
इन उपदेशों के माफ़िक अपने जीवन को ढालने की कोशिश करें । इस
मार्ग को अपनाने के लिये यह एक बहुत जरूरी तैयारी है ।

(४७४)

कृपया याद रखें कि जिस प्रेम और भक्ति की आप कामना करते
हैं वह भजन-सुमिरन के द्वारा आपके अन्दर से ही आयेगी । जहाँ तक
हो सके, सुमिरन पर खूब जोर दें, और आप देखेंगे कि आपका जीवन
कितना वदल गया है । मालिक आपके अन्दर है, और आप जो कुछ
र रहे हैं, उस सबकुछ देख रहा है । यदि हम उसकी दया के लायक
या पूरी सचाई के साथ उससे दया की भीख मांगते हैं तो वह कभी
नी दया रोक कर नहीं रखता । जब हम मन को वश में कर लेंगे
उसे तीसरे तिल पर स्थिर कर लेंगे, उसके बाद

अन्य दुर्बलतायें दूर होंगी। उसके बाद से सत्संगी पवित्र होने लगता है और उसकी रूहानी तरक्की शुरू हो जाती है।

(४७५)

यदि आप ईमानदारी के साथ यह महसूस करते हैं कि जो कुछ आपने किया है वह गलत है, तो बेहतर होगा कि आप अपने कदम वापस लें और जितनी जल्दी हो सके इस मार्ग पर लौट आयें। 'देर आयद दुरुस्त आयद', सुबह का भटका शाम को भी घर आये तो ठीक है। जिस तरह बाइबिल में पछतावा करने वाले 'उड़ाऊ पुत्र' का उसके पिता ने छाती से लगाकर स्वागत किया था, उसी तरह यदि हमारा पश्चात्ताप सच्चा है और अपने पापों को हम फिर नहीं दोहराते तो हमारा प्रिय कृपालु परमपिता भी हमारे पापों के लिये हमें माफ़ करने को हमेशा तैयार रहता है।

(४७६)

आपको याद रखना चाहिये कि अगर आप अपने कर्तव्य के पालन में लापरवाही करते हैं, तो इसके लिये आप मार्ग को अथवा मालिक को दोष नही दे सकते। मालिक ने आपको मार्ग बता दिया है, अब उस पर चलने के लिये पूरी कोशिश करना आपका काम है।

यह कह कर आपने खुद अपने सवालों का जवाब दे दिया है कि मालिक के प्रति अपने कर्तव्य अर्थात भजन को आपने समय नहीं दिया और नामदान के समय ली गयी सब प्रतिज्ञायें तोड़ दी हैं। ऐसी हालत में आप सन्तमत में किसी प्रगति अथवा सन्तोषप्रद अनुभव की आशा कैसे कर सकते हैं? अन्तर में सतगुरु के दर्शन करने के लिये तथा मृत्यु के समय उनके दर्शन पाने के लिये आपको अपने कर्तव्य को पूरा कर के यह बख्शिश या दात प्राप्त करनी होगी। केवल माँगने से ही यह नहीं मिल जाती। इसकी कीमत चुकानी पड़ती है और वह कीमत है, 'जीवित मृत्यु मरना' अथवा 'जीते-जी मरना।' शरीर को खाली करें तीसरे तिल तक पहुँचें और मृत्यु के द्वार को पार कर जायें। तब आपको सतगुरु के दर्शन अवश्य प्राप्त होंगे।

(४७७)

केवल शब्द ही ऐसी शक्ति है जो मन को वश में कर सकती है। सुमिरन के द्वारा ही शब्द के साथ जुड़ा जा सकता है। मन एक बहुत ज़बरदस्त ताकत है, और इस सृष्टि की कोई भी चीज इसको वश में नहीं रख सकती। असल में मन ही इस संसार का रचयिता है। यह स्वयं काल है। दूसरी आध्यात्मिक मंज़िल इसका मूल स्थान है। जब तक दूसरी मंजिल के पार से कोई चीज़ नहीं आती, मन नहीं झुकेगा। और उस क्षेत्र के पार से जो चीज़ आती है, वह मालिक की वाणी है जो अत्यन्त मधुर, आकर्षक और मोहक है। मन जब एक बार उसे सुन लेता है, तब वह दुनिया की और सब बातें भूल जाता है। फिर यह एक घातक शत्रु न रहकर एक अत्यन्त प्रिय मित्र बन जाता है। इसलिये अन्तर में शब्द को पकड़ने की कोशिश करें।

(४७८)

दूसरे सत्संगी भाई के कार्यों से इतना परेशान होने का कोई कारण मैं नहीं समझ सकता। आप केवल उसके वर्तमान जीवन को देखते हैं, पर यह नहीं जानते कि इस जन्म में नामदान पाने के लिये उसने पिछले जन्मों में क्या-क्या किया है। दूसरों के कर्मों के बारे में हमें जज या न्यायधीश बनने की क्या ज़रूरत है ? यह तो मालिक का काम है। दूसरों के जीवन की ताक-झांक करते रहने के बदले हम अपने आपकी ओर क्यों न देखें, और पाप की इस दुनिया से छुटकारा पाने की पूरी कोशिश क्यों न करे ? इस ताक-झाक से हमारा क्या फायदा होगा ?

हर इन्सान अपने कर्मों के लिये खुद जिम्मेदार है। इस सृष्टि में जब कर्मो का विधान, 'जैसा बोओ वैसा काटो' अथवा कार्य और कारण का कानून, इतनी बेरहमी या कठोरता से काम कर रहा है तब अपने किये कर्मों का फल भुगतने से कौन बच सकता है ? दूसरों की दुर्बलता पर क्रोधित होने के बदले हमें सहनशील होना चाहिये और यदि हो सके तो उनकी उन दुर्बलताओं को दूर करने में उनकी सहायता करनी चाहिये। हम अपने आप के बारे में क्या जानते हैं ? हम नहीं जानते

कि यह घातक शत्रु मन, जो हम सबके अन्दर छिपा हुआ है, कब प्रहार कर देगा और हमारी उन दुर्बलताओं को जो हमारे अर्द्ध-चेतन मन में सोई पड़ी हैं, कब सामने ले आयेगा।

इसके सिवाय, सतगुरु तथा सन्त अच्छे लोगों के लिये उतना नहीं आते, जितना पापियों तथा निर्बलों के लिये आते हैं। यदि सतगुरु उनकी संभाल नहीं करेगा, तो फिर वे और कहां जायेंगे ? व्यभिचार के अपराध में पकड़ी स्त्री की रक्षा के लिए हजरत ईसा ही आगे आये थे, जबकि और सब लोग पत्थर मार कर उसकी हत्या के लिये उतारू थे। कृपया याद रखें कि इन्सान बहुत निर्बल तथा असहाय है, और पूरी तरह काल के पंजे में फँसा हुआ है। वह अपनी इच्छा से कुछ नहीं करता। पिछले जन्मों के कर्मों के आधार पर उसके इस जन्म का प्रारब्ध या भाग्य बना है, जिसे उसे भुगतना ही पड़ता है। अपराधी तथा पापी के प्रति करुणा और सहानुभूति प्रकट करें, घृणा और तिरस्कार नहीं।

हमें दूसरों के बारे में चिन्ता करने और उनके दोष ढूंढने की आवश्यकता नहीं। अपने भार को जो पहले ही काफी भारी है, और अधिक क्यों बढ़ायें ? हमें अपनी चिन्ता करनी चाहिये। यह देखें कि हम क्या हैं, और अपने अन्तिम लक्ष्य पर जितनी जल्दी हो सके पहुँचने की कोशिश करें।

सतगुरु द्वारा दिया गया नामदान कोई ऐसी जादू की लकड़ी नहीं है, जो मनुष्य के जीवन में तुरन्त ही क्रान्ति ला दे। प्रगति और सुधार का काम धीरे-धीरे होता है और इसमें काफी समय लगता है। मन तथा अपनी दुर्बलताओं के साथ जीवन भर लड़ाई करनी पड़ती है। मन हमेशा हमें नीचे गिराने की ताक में रहता है, और पता नहीं कि हम पर उसका प्रहार कब होगा। कुछ अत्यन्त गुणी, भले तथा दयालु लोगों का भी बुरे कर्मों का चक्र आने पर, घोर पतन हो जाता है। इसके विपरीत, अनेक दुष्ट लोग भी रातों-रात सन्त बन गये हैं। यह सब मालिक के हाथ में है। सब कुछ वही करता है और वही

जानता है कि किसके लिये क्या ठीक है। हमें व्यर्थ ही अपने मन की शांति भंग नहीं करनी चाहिये। इससे न तो उस व्यक्ति का हित होगा जिसे आप दोषी समझ रहे हैं, और न ही आपका। जीवन के प्रति अधिक उदार दृष्टिकोण अपनायें और दूसरों के प्रति सहृदय और नम्र रहें।

किसी बात को लेकर आप परेशान न हों। परमात्मा की प्राप्ति के बारे में राय किसी सत्संगी के कर्म या व्यवहार के आधार पर नहीं बल्कि इस मार्ग के अपने गुणों के आधार पर बनानी चाहिये।

(४७९)

सैनिक सेवाओं में आपके अनिवार्य भरती की संभावनाओं के बारे में क्या करना ठीक होगा, इसका निर्णय खुद आपको ही करना है। सन्तमत यह चाहता है कि हम सामान्य जीवन व्यतीत करें और अपने परिवार, देश, समाज आदि के बारे में अपने कर्तव्यों का पालन करें। सेना में सन्तमत के अनेक अनुयायी हैं।

आदेश के विरुद्ध अपील करने या न करने के बारे में भी आप ही को फ़ैसला करना होगा। अपनी परिस्थितियों को देखते हुए आप जैसा भी अच्छा समझें, खुशी से कर सकते हैं। कुछ भी करें, पर एक बात याद रखें कि मालिक के प्रति अपने कर्तव्य के पालन में हमें कभी गिरना नहीं चाहिये।

(४८०)

आपके प्रश्नों के उत्तर इस प्रकार हैं :

(१) सतगुरु द्वारा सत्संगी को उसकी मृत्यु के बारे में सूचना दिये जाना अनेक बातों पर निर्भर करता है—जैसे, सतगुरु की अपनी इच्छा, इस मार्ग में सत्संगी द्वारा की गई प्रगति आदि। इस तरह की सूचना देना कोई लाज़िम या बाध्य नहीं है, बल्कि सतगुरु के अधिकार की बात है। हर सत्संगी की मृत्यु के समय सतगुरु संभाल अवश्य करता है।

(२) आप घर में ऐसे कीटाणुओं तथा कीड़ों को नष्ट

हैं, जो नुकसान पहुँचाते हैं और स्वास्थ्य तथा जीवन के लिये खतरनाक हैं।

(३) कर्म का विधान एक बहुत जटिल मामला है और वर्तमान स्तर पर उसकी कार्य-प्रणाली को पूरी तरह समझना असम्भव है। छोटी-छोटी बातों को हमें इतना महत्व नहीं देना चाहिये, बल्कि प्रेम और विश्वास के साथ नियमित रूप से भजन-सुमिरन करते रहना चाहिये। इस रूहानी अभ्यास का ध्येय कर्मों को काटना ही है। अन्तर में शब्द-धुन को सुनने से हमारे सारे पाप धुलेंगे। इस संसार में हमारा फिर से जन्म होगा या नहीं, इसका निर्णय पूरी तरह सतगुरु के हाथ में है, और उनका निर्णय कई बातों पर निर्भर है।

(४) वासनाओं को सन्तुष्ट करके आप उनसे कभी मुक्त नहीं हो सकते। उन्हें सन्तुष्ट करने का अर्थ है आग में घी डालना। जितना अधिक घी आप डालेंगे, अग्नि उतनी ही भड़केगी। मन को कभी सन्तुष्ट नहीं किया जा सकता, वह कभी तृप्त नहीं होगा। आप उसे जितना अधिक देंगे, उतना ही अधिक वह मांगेगा। हमें प्रलोभनों का मुकाबला करके उन पर जीत हासिल करनी है। भजन-सुमिरन और सतगुरु तथा मालिक के प्रति प्रेम के द्वारा ही उन पर विजय प्राप्त की जा सकती है।

(५) अपनी कमजोरियों को महसूस करना अच्छा है, क्योंकि केवल तभी हम अपने को सुधारने की कोशिश कर सकते हैं।

(४८१)

कानून द्वारा मंजूर गर्भपात के बारे में मेरा कहना यही है कि कानून द्वारा मंजूर कर लिये जाने से ही कोई काम निश्चित रूप से पाप-रहित नहीं हो जाता। सांसारिक कानून मनुष्य द्वारा अपनी सुविधा के अनुसार बनाये जाते हैं, और ये समय तथा देश के अनुसार बदलते रहते हैं। आध्यात्मिक दृष्टिकोण से एक अच्छे नैतिक चरित्र तथा सदाचारपूर्ण जीवन का मापदण्ड शासनों के दीवानी तथा फ़ौजदारी कानूनों के मान-दण्ड से बिल्कुल भिन्न या अलग है। कुछ

ऐसे मूल-भूत सत्य और सदाचार के नियम हैं जिन्हें बदला नहीं जा सकता और जो हर देश और हर समय के लोगों के लिये समान हैं।

(४८२)

आपके इस कथन के सम्बन्ध में कि कुछ सत्संगी इस तरह साथ रहते हैं जो उचित नहीं है। मेरी सलाह है कि आप उन्हें उन्हीं पर छोड़ दें। हरएक व्यक्ति मालिक के अधीन है और अपना प्रारब्ध भोग रहा है। हम किसी को दोषी नहीं ठहरा सकते, और हमें ऐसा करने की कोशिश भी नहीं करनी चाहिये। हर मनुष्य अपने कर्मों के लिये खुद ज़िम्मेदार होता है, सो उनके लिये परेशान क्यों हों ? हमें अपने खुद की कमज़ोरियों तथा दोषों को देखना चाहिये और उनको दूर करने की कोशिश करनी चाहिये।

सन्तमत में दीक्षा कोई चमत्कार नहीं है, और इसका मतलब यह नहीं है कि सत्संगी के जीवन में रातों-रात कोई चमत्कारिक परिवर्तन हो जाये। परिवर्तन की पूरी क्रिया धीमी गति से तथा क्रमिक रूप में होती है। आदतों को मज़बूत और पक्का होने में काफ़ी समय लगता है, उन्हें बदलने में और भी लम्बे समय की आवश्यकता होती है। हमें अपने विचारों में उदार और व्यवहार में सहनशील होना चाहिये।

(४८३)

सत्संग प्रभु के प्रेमियों का एक ऐसा सम्मेलन है जहां वे उसके सम्बन्ध में चर्चा और विचार करते हैं। इससे उन्हें संसार तथा उसकी समस्याओं को कुछ समय के लिये भूलने में सहायता मिलती है, और मालिक के प्रति प्रेम तथा भक्ति के भाव उत्पन्न होते हैं और उससे वापस जाकर मिलने की इच्छा पैदा होती है।

जहां तक ग्रंन्थों में लिखी गयी वाणियों के अर्थ निकालने का प्रश्न है, इसमें हर मनुष्य के विचारों तथा तर्क में भिन्नता होने के कारण कुछ हद तक अन्तर आ सकता है। परन्तु जहां तक सन्तमत के मूल सिद्धातों का सम्बन्ध है, मतभेद का कोई सवाल ही नहीं

उठता। ऐसी मामूली बातों को लेकर इतनी छान-बीन करने की ज़रूरत नहीं है। हमें तो मतलब गिरी से रखना चाहिये, छिलके से नहीं। ख़ास बात भजन और सुमिरन है, और यदि हमारे सत्संग, ग्रन्थों के पाठ तथा व्याख्यायें हमारे मन को भजन-सुमिरन के लिये प्रेरित नहीं करती, तो उनसे कोई मतलब सिद्ध नहीं होगा। असली ध्येय तो भजन-सुमिरन तथा मालिक के लिये प्रेम और भक्ति है। बाकी बातें तो इस ध्येय की प्राप्ति के लिये साधन मात्र हैं।

हर व्यक्ति में बात को अपने ढंग से समझने और समझाने की आदत होती है। मन बात को जिस ढंग से देखता है, हमेशा उसी ढंग से उन्हें समझाने की कोशिश करता है। मन की ये बातें कभी सही, तो कभी गलत होती हैं। मनुष्य की बुद्धि सीमित है, और कोई व्यक्ति उस असीम का जानकार होने का दावा नहीं कर सकता। मनुष्य से भूल होती है, और हम सब दुर्बलताओं के शिकार हो सकते हैं। हमें उदार बनना चाहिये, इतना कठोर और तंगदिल नहीं।

दूसरों की व्याख्या में गलतियां निकालने के बदले सन्तमत को खुद पढ़ने और समझने की कोशिश करें, और अगर ऐसी शंकाएं हों जिनका समाधान आसानी से न हो सके तो उनके स्पष्टीकरण के लिये यहां लिखें। सन्तमत इतना सरल है कि उसमें बहुत समझाने की कोई बात नहीं है। सन्तमत चाहता है कि सत्संगी आंखों के केन्द्र पर ध्यान जमाकर सुमिरन और भजन करे, और जब भी मन बाहर जाये इसे वापस केन्द्र पर लाये। सत्संगी को चाहिये कि वह भोजन के नियमों पर अडिग रहे और एक नेक, पवित्र नैतिक जीवन बिताये। मालिक के प्रति प्रेम और भक्ति जाग्रत करने के लिये उसे पूरी कोशिश करनी चाहिये। यह प्रेम और भक्ति आखिर भजन-सुमिरन से ही आयेगी।

प्रत्येक व्यक्ति आत्मा, मन और तन, इन चीज़ों का बना होता है। मृत्यु के समय हम स्थूल शरीर को छोड़ देते हैं। भजन-सुमिरन

के द्वारा जब सत्संगी आन्तरिक यात्रा शुरू करता है, तो सन्तों के मार्ग की दूसरी मंजिल में मन छूट जाता है, और ब्रह्माण्डी मन में लीन हो जाता है। आन्तरिक यात्रा के इस चरण में आत्मा मन से मुक्त हो जाती है, और मालिक में लीन होने के लिये ऊंचे लोकों की चढ़ाई करने के योग्य बन जाती है। सन्तमत के साहित्य में ये सारी बातें अच्छी तरह समझायी गयी हैं। आपको मेरी सलाह है कि पुस्तकों को स्वयं पढ़ें और अपने मन की तमाम शंकाओं तथा सन्देहों का समाधान कर लें।

(४८४)

जो कुछ पहले किया जा चुका है, उसके लिये अब परेशान होने का कोई फ़ायदा नहीं। किसी काम को कर चुकने के बाद जब कि कर्म हो चुका है, उसका बोझ उतारने का एकमात्र उपाय है भजन और सुमिरन। अन्तर में गूंजने वाली मालिक की वाणी हमें पवित्र करती है, और हमने जो कुछ किया है, उसके लिये हमें क्षमा प्रदान करती है। कोई बाहरी कानूनी दस्तावेज़ किये हुए कर्म को नहीं मिटा सकता। यदि ऐसा करना इतना सरल होता तो हरएक व्यक्ति कागज़ के टुकड़े से अपने अन्त:करण को शुद्ध कर लेता तथा दोष से मुक्त हो जाता। बीज जब एक बार बो दिया गया है तो वह अवश्य उगेगा और फसल काटनी ही होगी। केवल रूहानी अभ्यास के द्वारा ही बीज को प्रभावहीन बनाया जा सकता है। और कोई उपाय नहीं है। प्रेम और भक्तिपूर्वक अपना अभ्यास करते रहें।

(४८५)

ईर्ष्या, अभिमान और हौमैं ऐसे विष हैं, जिनको हमें सद्गुणों से दूर रखने के लिये, मन हमारे भीतर डालता रहता है। सुमिरन और भजन के द्वारा हमें इन विषों के प्रभाव को खत्म कर देना चाहिये।

आपके खयाल से जिस व्यक्ति को आपसे क्षमा मांगनी चाहिये, यदि वह ऐसा नहीं करता तो आपको परेशान क्यों होना चाहिये? इसका अर्थ है कि अपने आप को बहुत महत्व देकर आप भी उसके

उठता। ऐसी मामूली बातों को लेकर इतनी छान-बीन करने की ज़रूरत नहीं है। हमें तो मतलब गिरी से रखना चाहिये, छिलके से नहीं। ख़ास बात भजन और सुमिरन है, और यदि हमारे सत्संग, ग्रन्थों के पाठ तथा व्याख्यायें हमारे मन को भजन-सुमिरन के लिये प्रेरित नहीं करती, तो उनसे कोई मतलब सिद्ध नहीं होगा। असली ध्येय तो भजन-सुमिरन तथा मालिक के लिये प्रेम और भक्ति है। बाकी बातें तो इस ध्येय की प्राप्ति के लिये साधन मात्र हैं।

हर व्यक्ति में बात को अपने ढंग से समझने और समझाने की आदत होती है। मन बात को जिस ढंग से देखता है, हमेशा उसी ढंग से उन्हें समझाने की कोशिश करता है। मन की ये बातें कभी सही, तो क़भी गलत् होती हैं। मनुष्य की बुद्धि सीमित है, और कोई व्यक्ति उस असीम का जानकार होने का दावा नहीं कर सकता। मनुष्य से भूल होती है, और हम सब दुर्बलताओं के शिकार हो सकते हैं। हमें उदार बनना चाहिये, इतना कठोर और तंगदिल नहीं।

दूसरों की व्याख्या में गलतियां निकालने के बदले सन्तमत को ख़ुद पढ़ने और समझने की कोशिश करें, और अगर ऐसी शंकाएं हों जिनका समाधान आसानी से न हो सके तो उनके स्पष्टीकरण के लिये यहां लिखें। सन्तमत इतना सरल है कि उसमें बहुत समझाने की कोई बात नहीं है। सन्तमत चाहता है कि सत्संगी आंखों के केन्द्र पर ध्यान जमाकर सुमिरन और भजन करे, और जब भी मन बाहर जाये इसे वापस केन्द्र पर लाये। सत्संगी को चाहिये कि वह भोजन के नियमों पर अडिग रहे और एक नेक, पवित्र नैतिक जीवन बिताये। मालिक के प्रति प्रेम और भक्ति जाग्रत करने के लिये उसे पूरी कोशिश करनी चाहिये। यह प्रेम और भक्ति आखिर भजन-सुमिरन से ही आयेगी।

प्रत्येक व्यक्ति आत्मा, मन और तन, इन चीज़ों का बना होता है। मृत्यु के समय हम स्थूल शरीर को छोड़ देते हैं। भजन-सुमिरन

के द्वारा जब सत्संगी आन्तरिक यात्रा शुरू करता है, तो सन्तों के मार्ग की दूसरी मंज़िल में मन छूट जाता है, और ब्रह्माण्डी मन में लीन हो जाता है। आन्तरिक यात्रा के इस चरण में आत्मा मन से मुक्त हो जाती है, और मालिक में लीन होने के लिये ऊंचे लोकों की चढ़ाई करने के योग्य बन जाती है। सन्तमत के साहित्य में ये सारी बातें अच्छी तरह समझायी गयी हैं। आपको मेरी सलाह है कि पुस्तकों को स्वयं पढ़ें और अपने मन की तमाम शंकाओं तथा सन्देहों का समाधान कर लें।

(४८४)

जो कुछ पहले किया जा चुका है, उसके लिये अब परेशान होने का कोई फ़ायदा नहीं। किसी काम को कर चुकने के बाद जब कि कर्म हो चुका है, उसका बोझ उतारने का एकमात्र उपाय है भजन और सुमिरन। अन्तर में गूंजने वाली मालिक की वाणी हमें पवित्र करती है, और हमने जो कुछ किया है, उसके लिये हमें क्षमा प्रदान करती है। कोई बाहरी कानूनी दस्तावेज़ किये हुए कर्म को नहीं मिटा सकता। यदि ऐसा करना इतना सरल होता तो हरएक व्यक्ति कागज़ के टुकड़े से अपने अन्तःकरण को शुद्ध कर लेता तथा दोष से मुक्त हो जाता। बीज जब एक बार बो दिया गया है तो वह अवश्य उगेगा और फसल काटनी ही होगी। केवल रूहानी अभ्यास के द्वारा ही बीज को प्रभावहीन बनाया जा सकता है। और कोई उपाय नहीं है। प्रेम और भक्तिपूर्वक अपना अभ्यास करते रहें।

(४८५)

ईर्ष्या, अभिमान और हौमैं ऐसे विष हैं, जिनको हमें सदगुणों से दूर रखने के लिये, मन हमारे भीतर डालता रहता है। सुमिरन और भजन के द्वारा हमें इन विषों के प्रभाव को खत्म कर देना चाहिये।

आपके खयाल से जिस व्यक्ति को आपसे क्षमा मांगनी चाहिये, यदि वह ऐसा नहीं करता तो आपको परेशान क्यों होना चाहिये? इसका अर्थ है कि अपने आप को बहुत महत्व देकर आप भी उसके

बराबर ही गलती पर हैं। यह एक प्रकार का अहंकार तथा अपने आप को बड़ा समझने का तरीका है। जिस व्यक्ति को क्षमा मांगनी चाहिये, यदि वह वैसा नहीं करता तो अपने कर्मों के लिये वही जवाबदार है। उसके व्यवहार से नाराज होकर आप अभिमान उत्पन्न कर रहे हैं, जब कि आपको अपने अन्दर दीनता तथा नम्रता पैदा करनी चाहिये, जो सन्तमत के अनुसार सतगुणों के रत्न माने जाते हैं। यह आपका काम है कि उसे क्षमा करके भूल जायें। क्षमा मांगने की आशा करके आप कर्म के बन्धन को बनाये रख रहे हैं। ऐसे मामले में साहूकार तथा कर्जदार दोनों को न्यायालय में हाज़िर होना पड़ता है। दूसरे शब्दों में, हिसाब चुकाने के लिये दोनों को इस संसार में वापस आना पड़ेगा। ऐसे विचारों में अपना बहुमूल्य समय व्यर्थ न गवायें, और व्यर्थ ही मन को चंचल न करें। उसे स्थिर और अडिग बनायें और अन्तर में शब्द के साथ जोड़ दें।

(४८६)

अमरीका में एक डेरा बनाना संभव नहीं है। ऐसी काल्पनिक योजना बनाने से कोई लाभ नहीं। ऐसी व्यर्थ योजनाओं में अपने आपको क्यों उलझाते हैं? इस तरह और बंधन व मोह क्यों पैदा किये जायें? पहले से ही हम काफ़ी बंधनों में जकड़े हुए हैं। उन वन्धनों को तोड़ने की कोशिश करें जो आपको इस संसार में बांधे रखते हैं। सुमिरन और भजन की बात सोचें और बाकी सब फ़िज़ूल के विचारों और योजनाओं को त्याग दें। हमारी समस्त बीमारियों की औषधि ज़्यादा तथा और ज़्यादा भजन-सुमिरन ही है। यही हमारी सच्ची सम्पत्ति है।

(४८७)

मेरी आपको सलाह है कि यदि यह सुविधाजनक और सम्भव हो, तो शवगृह में शवों को सड़ने से बचाने के लिये उन पर मसाले का लेप करने का जो काम आप कर रहे हैं, उसके वदले कोई दूसरा काम करें, क्योंकि स्वास्थ्य के लिये यह काम हितकर नहीं है। शवगृह का

वातावरण दूषित या अस्वस्थ तथा उदासी से भरा होता है, और भजन-सुमिरन के लिये ठीक वातावरण का निर्माण नहीं करता।

(४८८)

मैं नहीं समझता कि आपने जीवन के प्रति सही रुख अपनाया है। भजन-सुमिरन कोई पूरे चौबीसों घण्टे नहीं कर सकता और न ही भजन-सुमिरन से हमें रोटी और कपड़े मिल सकते हैं। हमें इस संसार में रहना है, अपनी मेहनत से ईमानदारी के साथ अपनी रोज़ी कमानी है, और किसी पर भार नहीं बनना है। सन्तमत कायरों का मार्ग नहीं, बल्कि उन पराक्रमी सैनिकों का मार्ग है जो इस संसार में रहते हैं तथा परिवार, देश, समाज आदि के लिये अपने कर्त्तव्यों का पालन करते हुए भजन-सुमिरन को समय देते हैं।

भजन-सुमिरन करने की आड़ लेकर आप जीवन की सच्चाई या असलियत से भाग नहीं सकते। भजन-सुमिरन के लिये काफ़ी समय बचता है। अभ्यास के समय यदि हम अपने मन पर लगभग ढाई घंटे तक नियन्त्रण रख सकें, और आँखों के केन्द्र पर उसे स्थिर रख सकें, तो सन्तमत में यह कोई बुरी शुरुआत नहीं होगी। शुरू में तो इतना करना भी कठिन प्रतीत होता है,क्योंकि ससार तथा इसकी वस्तुओं की ओर भागने की मन की सदियों पुरानी आदत है। जीवन में अपनी ज़िम्मेदारियों को टालने की कोशिश करके मन की चालबाजियों के शिकार न बनें।

(४८९)

सन्तमत में सत्संगों का ध्येय मालिक, शब्द तथा सतगुरु के लिये प्रेम और भक्ति का विकास करना है। सत्सगों से अभ्यास करने की अधिक प्रेरणा मिलने की आशा की जाती है। यदि कोई विशेष दल या व्यक्ति इसमें बाधक हो, तो उससे दूर रहना अधिक अच्छा होगा। भजन-सुमिरन शांतिपूर्वक अपने स्थान में ही किया जा सकता है। वास्तव में, सामूहिक अभ्यास की सन्तमत में कभी

जाती।

(४९०)

सत्संगों में आपने मेरे चेहरे में जो कुछ देखा, उसे अधिक महत्व न दें। मेरा रूप नहीं बदल रहा था, बल्कि आपके चेतन या अचेतन मन के विचार ही प्रतिविम्बित हो रहे थे। सतगुरु एक दर्पण के समान होता है। जिस ढंग से और जिस भावना या विचार को लेकर हम उन्हें देखते हैं, वे विचार वापस प्रतिविम्वित होते हैं।

अपने सतगुरु को अन्तर में प्रकट करने की कोशिश करें। फिर तो सदा वे आपके साथ ही रहेंगे, और आप जब भी चाहेंगे उन्हें देख सकेंगे और उनसे वात कर सकेंगे।

(४९१)

अपनी प्रगति की गति को तेज़ करने की आपकी उत्सुकता की मैं कद्र करता हूँ; लेकिन ऐसा करना न तो उचित है, और न ही संभव है। भजन-सुमिरन तथा उसमें सफलता अनेक बातों पर निर्भर करती है। आपको प्रेम और भक्ति का विकास करना चाहिये, और रोज अभ्यास करते रहना चाहिये। समय का महत्व नहीं है। असल महत्व की वात एकाग्रता है। भजन-सुमिरन के समय मन का पूरा ध्यान केन्द्र पर जमा रहना चाहिये। यदि हम बहुत देर तक बैठे रहें और मन वाहर भागता रहे, तो कोई खास प्रगति की आशा नहीं की जा सकती। अपने ध्यान को तीसरे तिल पर स्थिर रखने की कोशिश करें और जिस आसन में भी आप वैठें, उसमें अपने शरीर को हिलने न दें। अभ्यास में ये दो वातें बहुत ज़रूरी हैं।

बगीचे में आपकी फसल को नुकसान पहुँचाने वाले कीड़ों को आप नष्ट कर सकते हैं। मच्छर, मक्खी, तिलचट्टे आदि के लिये हम घरों में छिड़काव करते हैं। यह खुशी या भोजन के लिये मारना नहीं है। हवा में अत्यन्त सूक्ष्म जीवाणुओं की भरमार रहती है, सो साँस लेते समय भी तो हम प्रति क्षण असंख्य जीवों का नाश करते हैं। हमारे चलने-फिरने में अनेक सूक्ष्म जीव मर जाते हैं, और साग, सब्ज़ी, फल या अन्न खाकर भी हम जीव-हत्या करते हैं। प्रत्येक जीवित वस्तु में

आत्मा है। हम बात-बात में बाल की खाल नहीं निकाल सकते। हमें इस संसार में जीना है और सन्तों की शिक्षा है कि हम कर्मों का वजन कम से कम बढ़ाते हुए जीयें। सन्तमत का साहित्य पढ़कर आप इस बात को अधिक अच्छी तरह समझ सकेंगे। सन्तमत की पुस्तकों के अध्ययन से आपको मांस आदि के त्याग की और शाकाहारी भोजन को अपनाने की जरूरत के कारण भी समझ में आ जायेंगे।

(४९२)

वैवाहिक जीवन में काम-सम्बन्ध स्वाभाविक रूप से शामिल है और उससे आप बच नहीं सकते। विवाह इस बात को मान कर किया जाता है। खराबी तो तब होती है जब हम इस वासना के वश में होकर अति करते हैं, और केवल अपनी पशुवत इच्छाओं की पूर्ति के लिये इसमें प्रवृत्त होते हैं। हरएक चीज़ की अति बुरी होती है।

काम-वासना एक प्राकृतिक प्रवृत्ति है और शक्तिशाली भी है। इसलिये सन्त गृहस्थ-जीवन को पसन्द करते हैं, जिसमें नैतिकता या सदाचार के मार्ग से भटकाने के अवसर कम होते हैं। नैतिकता के मार्ग से भटकने का परिणाम कर्मों का बहुत भारी बोझ होता है, इस लिये नियन्त्रित गृहस्थ-जीवन सदा पसन्द किया जाता है। जिस ध्येय की पूर्ति के लिये परमात्मा ने हमें यह प्रवृत्ति दी है, उसको ध्यान में रखते हुए पति और पत्नी को चाहिये कि आपसी सहमति से इन्हें नियन्त्रण और सीमा में रखें।

मनुष्य-जन्म के प्रमुख उद्देश्य की तथा हमने अपने सामने जो लक्ष्य निश्चित किया है, उसके प्रति कभी लापरवाही नहीं करनी चाहिये। इसके लिये नित्य भजन-सुमिरन की ओर ध्यान देने तथा प्रेम, भक्ति और विश्वास विकसित करने की आवश्यकता है।

(४९३)

आपने पूछा है कि यदि प्रसाद को भोजन की दूसरी सामग्री में मिला लिया जाये तो क्या वह सारी सामग्री प्रसाद हो जायेगी। प्रसाद हमेशा वही होता है जो सतगुरु द्वारा प्रदान किया जाता है।

परिवार-नियोजन के साधनों का उपयोग आप कर सकते हैं। यदि आप इनका उपयोग करेंगे तो यह भी आपके कर्मों के अनुसार ही होगा। ऐसा कुछ नहीं हो सकता, जो प्रारब्ध में न हो।

सांसारिक बातें सदा आपके प्रारब्ध के अनुसार ही घटेंगी, और उनमें कोई परिवर्तन नहीं हो सकता। इस दुनिया में जन्म लेते समय आप अपना प्रारब्ध अपने साथ लाये थे। तो फिर इन्हें इतना महत्व क्यों दिया जाये ? इसके बदले मन को भजन और सुमिरन में क्यों न लगायें ? विश्वास रखें, यह मन समस्याएँ उठाने और प्रश्न पूछने का काम कभी बन्द नहीं करेगा। पहले समस्या उत्पन्न करके, बाद में उसका हल निकालने की कोशिश करने की इसकी आदत है। और जब हल नहीं मिलता तो परेशान होना शुरू कर देता है। यह कभी खत्म न होने वाला सिलसिला है। मन को भजन और सुमिरन के साथ लगाकर इस सिलसिले को तोड़ने की कोशिश करें।

(४९४)

आप निश्चित होकर प्रयोगशाला में अपने अनुसंधान का कार्य जारी रख सकते हैं। पशुओं का माँस खाने से और केवल शिकार के लिये हत्या करने से कर्मों का बहुत भारी बोझ बढ़ता है। जो आप कर रहे हैं वह तो इन्सान की भलाई के लिये ही कर रहे हैं।

(४९५)

आप अपने मन की शांति को क्यों भंग करते हैं और इस तरह अपने भजन-सुमिरन को क्यों बिगाड़ रहे हैं ? आप अपने पुत्र के बर्ताव से परेशान न हों। हर व्यक्ति का अपना अलग स्वभाव होता है। ये सारे सम्बन्ध, असल में, कर्मों के लेनदेन के सिवाय और कुछ नहीं हैं। पुत्र, पिता, माता, पत्नी आदि कुछ नहीं है। हमारे कर्म हमें एक साथ लाते हैं, और जब कर्मों का हिसाब पूरा हो जाता है तब हरएक अपनी-अपनी राह चला जाता है। आपने अपने पुत्र के प्रति अपना कर्तव्य कर दिया, अब यदि वह दुर्व्यवहार करता है या क्रोधित है तो अपने कर्मों के लिये वह जवाबदार है। आप क्यों चिन्तित हो रहे हैं ?

हर व्यक्ति अपने खुद के कर्मों के लिये जवाबदार है। अपने पुत्र
बदले में कुछ पाने की इच्छा रख कर आप कर्मों का हिसाब बढ़ा
हे हैं, जो उचित नहीं है। अपना कर्तव्य करके भूल जायें। बदले में
छ पाने की उम्मीद न रखें।

अपने भजन-सुमिरन में किसी भी वजह से बाधा न आने दें।
जन-सुमिरन को सबसे ज़्यादा महत्व दें।

(४९६)

आपने जिस अनुभव का वर्णन किया है, उससे प्रतीत होता है कि
ाप दूरदर्शन देखने के बहुत शौकीन हैं, और भजन-सुमिरन के समय
ी उसके दृश्य आपकी आंखों के सामने आते रहते हैं। मन में हमारे
निक जीवन के प्रभावों को ग्रहण करके उन्हें अन्तर में जमा करते
हने की शक्ति है। जब ये प्रभाव मन में बहुत गहरे हो जाते हैं; तब
स्वप्न में और यहां तक कि भजन-सुमिरन में भी प्रकट होने लगते
। अपने विचारों को तीसरे तिल पर रखने की कोशिश करें और
ाकी सब-कुछ भूल जायें। खास महत्व की बात तो तीसरे तिल पर
काग्र होना है।

(४९७)

यदि आप तीसरे तिल पर (जिसे आप 'सुई की नोक' कहते हैं)
िसी विंदु की खोज करना शुरू कर देंगे तो आप एकाग्र होकर
ुमिरन नहीं कर सकेंगे; क्योंकि तब आपका मन सुमिरन में एकाग्र
ोने की बजाय भौंहों के बीच में किसी बिन्दु की खोज में लग जायेगा
न एक बार में एक ही काम कर सकता है, या तो तीसरे तिल पर
एकाग्र होकर सुमिरन में लगा रहे, या आंखों के बीच में किसी बिन्दु
ी खोज में। किसी बिन्दु के बारे में परेशान न हों। आप उसको
हीं खोज पायेंगे। जब मन एकाग्र हो जायेगा तभी वह मिल सकेगा।

मन को स्थिर तथा विचार-शून्य बनाने की कोशिश करें। केवल
तभी अन्दर की आंख खुलेगी। मन यदि दूसरी बातों में उलझा रहेगा
और उसकी वजह से चेतनता निचले अंगों से तीसरे तिल तक नहीं

चढ़ेगी, तो आपको इस खोज से कुछ मिलने वाला नहीं है। स्थूल शरीर को छोड़कर चेतनता के तीसरे तिल पर पहुँचने पर, या उसके निकट तक पहुँच जाने पर, अथवा दूसरे शब्दों में कहा जाये तो हमारे 'जीते-जी मरने' पर वह आँख खुलती है, इससे पहले नहीं।

(४१८)

इसमें सन्देह नहीं कि एक तरह से जो कुछ होता है, उसकी मौज से होता है; लेकिन कोई काम अथवा कर्म करते समय क्या हम उस की मौज में रहते हैं? क्या हम वही करते हैं जो वह हमसे कराना चाहता है, और जिस काम को वह नहीं चाहता, क्या उस काम से हम दूर रहते हैं? कर्मों को करते समय हम उसे भूले रहते हैं, और उसकी याद तब करते हैं, जब हिसाब चुकाने का समय आता है।

जो कुछ भी हम भोग रहे हैं, वह हमारे अपने कर्मों का फल है। जो हमने बोया था, उसी को काट रहे हैं। परमात्मा हम पर कोई अन्याय नहीं कर रहा है। उसकी दया सदा रहती है, पर हमने अपने आप को उसके लिये अयोग्य या नाकाबिल बना लिया है। पिता का प्रेम अपने सब बच्चों के प्रति रहता है, लेकिन जो बच्चा पिता की आज्ञा नहीं मानता, उससे दूर भागता है और बुरी संगति में जाता है, उसे पिता से कुछ भी पाने का कोई अधिकार नहीं रहता, और किसी कष्ट के लिये उसे पिता को दोषी ठहराने का हक भी नहीं रहता।

धीरे-धीरे यह गायब हो जायेगा और बिना किसी कष्ट के शरीर स्थिर हो जायेगा।

(५००)

सुमिरन पर अधिक जोर दें। सुमिरन ही अन्त में आपको अन्तर में सतगुरु के ज्योतिर्मय शब्द-स्वरूप तक ले जायेगा, जहाँ आप असली शब्द-धुन के साथ जुड़ जायेंगे। सुमिरन को इतना पक्का करने की कोशिश करें कि पवित्र नामों का जाप सदैव होता रहे, यहाँ तक कि उस समय भी जब आप उनके बारे में सोच भी न रहे हों। सुमिरन को साँस की तरह ही जीवन का एक अंग बना लेना चाहिये। सुमिरन ...। होने पर प्रकाश प्रकट होगा और धुन अधिक स्पष्ट हो जायेगी। ...ी बात के लिये चिन्तित न हों।

(५०१)

आपका पत्र पाकर तथा सन्तमत को समझने की आपकी लगन ...र मुझे प्रसन्नता हुई।

मुख्य आपत्ति जो आपने उठाई है, वह यह है कि हज़रत ईसा ने ... मानव समाज की मुक्ति के लिये अपने प्राण दिये। मुझे ...म है कि सब ईसाइयों का सामान्य विश्वास यही है। बाइबिल जो कुछ थोड़ा-बहुत मैंने पढ़ा है, उसमें मैं हज़रत ईसा को इस ... का दावा करते कहीं नहीं पाया। बाइबिल के ही कुछ उद्धरणों ... यह दर्शाने की कोशिश करूँगा कि हज़रत ईसा ने केवल उन ...ं का गुरु होने का दावा किया था जो उनके समकालीन थे, जो ... सम्पर्क में आये थे और जिन्होंने उनके उपदेशों का पालन ... था। मैं 'सेंट जान की गाथा' की ओर आपका ध्यान आकर्षित ... चाहूँगा। ईसा परमात्मा के एकमात्र पुत्र नहीं थे, बल्कि जितने ...ों ने उन्हें स्वीकार किया, (जान,- दि बैपटिस्ट) उतनों को ... के पुत्र बनने की उन्होंने शक्ति प्रदान की (१:१२)। वे ... जो एक पूरे गुरु के सम्पर्क में आते हैं, 'परमात्मा के पुत्र' ... जाते हैं। हजरत ईसा से पहले 'जान दि बैपटिस्ट' पूरे गुरु

थे । उन्होंने ईसा को दीक्षा दी और उनके बारे में ख़ुद ईसा का कथन है, कि 'वह एक जलता और चमकता हुआ प्रकाश था ।' जान दि बैपटिस्ट के बाद ईसा आये और उन्होंने पीटर को अपना उत्तराधिकारी नियुक्त किया, जिसे उन्होंने अपने बाद लोगों को मार्ग पर लाने का अधिकार दिया । हज़रत ईसा की मृत्यु यदि समूची मानवता के लिये हुई होती तो उनके बाद पीटर को आगे काम करने की आवश्यकता नहीं थी ।

सेंट जान ५:२४—'जो मेरे शब्द सुनता है और मुझे भेजने वाले पर विश्वास करता है, उसका जीवन अमर है ।' हज़रत ईसा के शब्द हम आज पढ़ तो सकते हैं परन्तु सुन नहीं सकते ।

सेंट जान ६:४०—'और मुझे भेजने वाले की यह इच्छा है कि हर शख़्स, जो पुत्र को देखता है और उस पर विश्वास करता है, उस का जीवन अमर हो जाये । 'देखता है' शब्द पर गौर करें । हज़रत ईसा को देखने वाले केवल वे ही थे जो उनके समय में जीवित थे ।

७:३३:३४........'मैं तुम्हारे साथ थोड़ी देर और रहूँगा, और बाद मैं उसके पास चला जाऊँगा, जिसने मुझे भेजा है । तुम ढूंढोगे और मुझे नहीं पाओगे : और जहाँ मैं रहूँगा, वहाँ तुम नहीं सकते ।' इससे अधिक स्पष्ट और कुछ नहीं हो सकता कि ईसा उन लोगों के लिये जिये और मरे जिन्होंने उनका अनुगमन किया, और जिन्होंने उनके जीवनकाल में गुरु के रूप में उन्हें स्वीकार किया ।

८:२१.....'मैं अपनी राह जाता हूँ और तुम मुझे खोजोगे, और अपने पापों में मरोगे : जहाँ मैं जाता हूँ, तुम आ नहीं सकते ।'

९:४:५........'जब तक दिन है, मुझे जिसने भेजा मुझे उसका काम अवश्य करना चाहिये : रात आती है, तब कोई आदमी काम नहीं कर सकता । जब तक मैं संसार में हूँ, मैं संसार का प्रकाश हूँ । इस सम्बन्ध में ईसा मसीह द्वारा और अधिक स्पष्ट वक्तव्य नहीं दिया जा सकता था ।

१२:३५:३६..........'और थोड़ी देर तक तुम्हारे साथ प्रकाश है ।

तक तुम्हारे पास प्रकाश है, चल लो अन्यथा अंधकार तुम पर
जायेगा।.........जब तक तुम्हारे पास प्रकाश है, प्रकाश में विश्वास
ताकि तुम प्रकाश के बच्चे बन सको।' प्रकाश से उनका अर्थ
जब तक वे जीवित हैं; और अंधकार से वे अपनी आने वाली मृत्यु
ओर संकेत कर रहे हैं, संसार से अपने चले जाने की बात कर
हैं।

१३:३३.........'और थोड़ी देर मैं तुम्हारे साथ हूं। तुम मुझे
ोगे : और जैसा कि मैंने यहूदियों से कहा था, मैं वहाँ जाता हूँ,
ं तुम नहीं आ सकते।' हज़रत ईसा ने बहुत स्पष्ट कर दिया है
जब वे संसार में नहीं रहेंगे, तब हम उनकी सहायता नहीं पा
गे। तब अन्त में प्रभु से हज़रत ईसा यह कहकर प्रार्थना करते हैं :
सेंट जान १७:६ ...... 'संसार में से जिन लोगों को तुमने मुझे
ा है, मैंने उनके अन्दर तुम्हारा नाम प्रकट कर दिया है ... ।'

१७:९ ...... 'मैं उनके लिये प्रार्थना करता हूँ : मैं संसार के
ये प्रार्थना नहीं करता, बल्कि केवल उनके लिये प्रार्थना करता हूँ,
न्हें तूने मेरे सुपुर्द किया है।' ईसा मसीह उन 'अंकित आत्माओं'
बात कर रहे हैं जो उनके जीवन-काल में मालिक द्वारा उन्हें सौंपी
ी थीं, और केवल उनके लिये ही वे प्रार्थना कर रहे हैं, पूरे संसार
लिये नहीं।

बाइबिल के इन थोड़े से उद्धरणों से यह पूरी तरह सिद्ध
ता है कि हज़रत ईसा ने समूचे संसार की रक्षा करने का दावा
भी नहीं किया। जब उसने अपने जीवन-काल के पूरे संसार की रक्षा
ा भी दावा नहीं किया, तो बाद में आने वाली पीढ़ियों की बात ही
या है ? परमात्मा के पास वापस पहुँचने के लिये देह-स्वरूप में ईसा
 साथ मिलाप ज़रूरी था। अपने चुने हुए जीवों को वापस बुलाने
 लिये मालिक अपने प्रिय पुत्रों को इस संसार मे सदा भेजता रहता
। शब्द सदा शरीर धारण करके आता है। ईसा को इस पृथ्वी पर
ाये अभी दो हज़ार वर्ष भी नहीं हुए हैं। सृष्टि की रचना कब हुई,

यह कोई नहीं बता सकता। फिर हज़रत ईसा के आने से पहले आत्माओं की रक्षा के लिये कौन था ? ऐसा विश्वास करना कि ईसा से पहले संसार में कोई मुक्तिदाता नहीं था, मालिक को बहुत अन्यायी अनुचित और निर्दयी समझना है। आज हज़रत ईसा भी उतने ही अदृश्य और अगम हैं जितना कि परमात्मा है। यदि इस अवस्था में आज ईसा हमारी सहायता कर सकते हैं, तो ख़ुद परमात्मा ही ऐसा क्यों नहीं कर सकता ? और फिर उसको हज़रत ईसा तथा अन्य अनेक सन्तों और सतगुरुओं को हमारे छुटकारे के लिये भेजने की क्या ज़रूरत थी ? लेकिन यह प्रभु की इच्छा नहीं है। 'शब्द' को आना ही है और यह सदा देह धारण करके ही आता है। जीवित सतगुरु के बिना प्रभु की प्राप्ति नहीं की जा सकती, यही ईश्वरीय कानून है"।

जहाँ तक माँस, अण्डे आदि खाने और मदिरा पीने का सवाल है, आध्यात्मिक प्रगति के मार्ग में इनका त्याग करने के लिये अनेक कारण हैं। सन्तमत में इनके उपयोग की अनुमति किसी भी शर्त और हालत तथा किसी भी परिमाण में नहीं दी जा सकती।

सारी सृष्टि पाँच तत्वों से बनी है। ये वैज्ञानिकों के रासायनिक तत्व नहीं हैं। इनका सम्बन्ध भौतिक द्रव्यों से है। यह पाँच तत्व हैं, पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश। इन पाँच तत्वों के अनुसार सारी सृष्टि को पाँच वर्गों में बाँटा जा सकता है :

(१) वनस्पति जगत, जिसमें साग-सब्ज़ी, फल, अनाज आदि आते हैं। सब में जीवन है, लेकिन इनमें जल-तत्व प्रधान है, बाकी तत्व बहुत कम हैं और सोयी हुई अवस्था में हैं।

(२) कीट-जगत : इनमें दो तत्व अग्नि और वायु सक्रिय हैं।

(३) पंछी : इनमें तीन तत्व मुख्य हैं : जल, अग्नि और वायु।

(४) पशुओं या जानवरों में चार तत्व होते हैं। उनमें आकाश तत्व नहीं होता। इसलिये इनमें विवेक नहीं होता।

(५) मनुष्य में पाँच तत्व अपने सही परिमाण में हैं। इसलिये मनुष्य को सृष्टि का सिरताज और जीवित प्रभु का मन्दिर कहा जाता

। मालिक ने उसमें अपने आप को सम्पूर्ण त्रिलोक के साथ रखा है।

इसमें सन्देह नहीं कि संसार में जब तक हम जीवित रहते हैं, पूरे समय जीव-हत्या करते रहते हैं। खाते, पीते, चलते, बोलते और यहाँ तक कि सोते समय भी हम हत्या करते हैं। सारा वातावरण जीवों, जिरासीम, सूक्ष्म जीवों आदि से भरा हुआ है और इन सब में आत्माएँ हैं। जीव जीव का आहार करके जीता है। ऐसे बुरे चक्र में हम फँसे हैं। सन्त हमें बताते हैं कि इस दुनिया में हमें पापों का कम से कम बोझ उठाना चाहिये, जिसका हम दैनिक भजन-सुमिरन के द्वारा हिसाब चुका सकें। यदि आप किसी व्यक्ति पर दो सौ किलो का वज़न लाद देंगे तो वह उसके नीचे कुचला जायेगा, परन्तु उसके बदन पर यदि एक कमीज ही है, तो वह दौड़ सकेगा। वनस्पति वर्ग में केवल जल का ही तत्व है, इसलिये इनका उपयोग करने से हत्या का दोष सब से कम लगेगा। समस्त पशु, कीड़े तथा पक्षी मारने पर चिल्लाते हैं और कष्ट पाते है। कोई मरना नहीं चाहता। लेकिन यह चिल्लाना और दर्द महसूस करना वनस्पति वर्ग में नहीं होता। यदि हमारा तर्क यह है कि समस्त सृष्टि का राजा मनुष्य है, और उसका निचली सब श्रेणियों पर अधिकार है, तब हम यह कहकर कि शक्तिशाली दुर्बलों की हत्या कर सकते हैं, मनुष्यों की हत्या को और नरभक्षकों के कृत्यों को भी न्यायोचित ठहरा सकते हैं। नही, जीव-हत्या हमेशा कर्मों का बहुत भारी बोझ बनता है, और यह पाप है।

यहाँ तक कि कानूनों में भी उपरोक्त पाँच वर्गों के जीवन का नाश करने पर मिलने वाली सजा तत्वों के अनुसार है। किसी की सब्ज़ी या फल या फूल ले जाने की सजा वैसी नहीं है, जैसी किसी के पालतू चौपाये, बोलते पंछी या घोड़े को मारने की सजा है। जैसे-जैसे प्राणों का स्तर बढ़ता है, वैसे-वैसे सजा भी बढ़ती है। इसलिये सन्तों की सलाह है कि हम सब्ज़ी, फल, अनाज, दूध के उत्पादन,

शहद तथा सूखे फल आदि खाकर रहें। इसमें पाप का बोझ कम से कम होगा।

इसके अतिरिक्त, माँस और अण्डे उत्तेजिक या तामसिक वृत्तियों को भड़काने वाला आहार है, जब कि अपनी आध्यात्मिक प्रगति के लिये हमें अनुत्तेजिक आहार चाहिये जो शान्ति और समता पैदा करे। जो हम खाते हैं उसका हम पर बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है और जैसा आहार करते हैं, वैसा ही मन बनता है—'जैसा खावे अन्न वैसा होवे मन्न।' माँस और मदिरा ध्यान को फैलाते और एकाग्रता में बाधा डालते हैं। ये सारी वस्तुएँ, जिनमें 'सजीव' या उपजाऊ और 'निर्जीव' या अनउपजाऊ अण्डे भी शामिल हैं, कर्मों के हमारे पहले से ही भारी बोझ को और भी बढ़ाती हैं।

इस सृष्टि में कर्मों का कानून, कार्य और कारण का नियम, 'जैसा बोया वैसा काटो' तथा कार्य और उसके फल के नियम निष्ठुरतापूर्वक कार्य कर रहे हैं और इनके असर से कोई बच नहीं सकता। यदि हम मारते हैं, तो बदले में हम भी मारे जायेंगे। 'आँख के बदले आँख तथा दाँत के बदले दाँत' प्रकृति का कानून है। इसे जानते हुए अपने भार को उचित सीमाओं में रखने के लिये हमें कम से कम पाप करने चाहियें।

जानवरों की हत्या करने तथा माँस का आहार करने से मन और आत्मा में कठोरता आ जाती है। उस प्रभु के यहाँ, जो खुद प्रेम, करुणा और दया की मूर्ति है, ऐसे लोगों को कोई स्थान नहीं मिलता।

नशीले पेय, शराब आदि पीकर उसके प्रभाव में लोग अपने आप को कैसा मूर्ख बना डालते हैं, यह हम सबको मालूम है। वे बिलकुल बेसुध होकर ऐसे काम कर बैठते हैं जिन्हें करने में किसी भी शरीफ़ आदमी को शर्म आयेगी। उनके प्रभाव में कितने परिवार उजड़ जाते हैं, और कितने लोगों को घोर यातना सहनी पड़ती है।

मैंने सन्तमत के दृष्टिकोण से खान-पान के मामले को समझाने के लिये इतना विस्तारपूर्वक लिखा है। यदि हम मालिक से वापस मिलना चाहते हैं और जन्म-मरण की इस सृष्टि से, जिसमें कर्मों का कानून कठोरतापूर्वक चल रहा है, मुक्त होना चाहते हैं, तो हमें समस्त माँस, मछली, मुर्गी, उर्वर तथा अनुर्वर अण्डे तथा तमाम नशीली चीजों से दूर रहना होगा।

सन्तों के उपदेशों को समझने की कोशिश करें, और हर प्रकार से अपने को सन्तुष्ट कर लें। सन्तमत वह मार्ग है जिसकी रचना हर एक मनुष्य के अन्दर मालिक ने इसलिये की है कि वह उनके पास वापस जा सके।

सारांश यह है: अपनी सहायता के लिये हमें सदा एक जीवित शिक्षक या मार्गदर्शक की आवश्यकता होती है। ज्ञान, विज्ञान की किसी भी शाखा की शिक्षा प्राप्त करने के लिये जीवित शिक्षक और जीवित प्रोफ़ैसर की जरूरत पड़ती है। चिकित्सा विज्ञान में भी पिछले जमाने के विद्वानों की पुस्तकें पढ़कर ही कोई व्यक्ति डाक्टर नहीं बन सकता। गुज़रे हुए इंजीनियर के द्वारा लिखी किताबें पढ़कर कोई व्यक्ति मकान नहीं बना सकता। किसी गुज़रे हुए रसोइये द्वारा लिखित पाक-शास्त्र की पुस्तक पढ़कर कोई अपनी भूख नही मिटा सकता। हमें जीवित डाक्टर, जीवित इंजीनियर, जीवित रसोइया तथा जीवित शिक्षक चाहिये। जो मर चुके है, वे चाहे कितने ही महान क्यों न रहे हों, अब वे हमारी सहायता नहीं कर सकते। इसी तरह हमें एक जीते-जागते गुरु, एक जीवित सन्त की आवश्यकता है, जो हमें निजधाम का मार्ग बता सके, और यहाँ तथा आन्तरिक मार्ग में हमारा मार्ग-दर्शन कर सके। यह तर्क-संगत बात है। सावधानी पूर्वक इस पर विचार करें, और देखें कि यह ठीक है या नहीं। मैं यह नही चाहता कि हर प्रकार से संतुष्ट हुए बिना आप किसी बात को स्वीकार करें इस पथ पर खान-पान के नियम बहुत कठोर हैं, और इनमें कोई छूट

शहद तथा सूखे फल आदि खाकर रहें। इसमें पाप का बोझ कम से कम होगा।

इसके अतिरिक्त, माँस और अण्डे उत्तेजिक या तामसिक वृत्तियों को भड़काने वाला आहार हैं, जब कि अपनी आध्यात्मिक प्रगति के लिये हमें अनुत्तेजिक आहार चाहिये जो शान्ति और समता पैदा करे। जो हम खाते हैं उसका हम पर बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है और जैसा आहार करते हैं, वैसा ही मन बनता है–'जैसा खावे अन्न वैसा होवे मन्न।' माँस और मदिरा ध्यान को फैलाते और एकाग्रता में बाधा डालते हैं। ये सारी वस्तुएँ, जिनमें 'सजीव' या उपजाऊ और 'निर्जीव' या अनउपजाऊ अण्डे भी शामिल हैं, कर्मों के हमारे पहले से ही भारी बोझ को और भी बढ़ाती हैं।

इस सृष्टि में कर्मों का कानून, कार्य और कारण का नियम, 'जैसा बोया वैसा काटो' तथा कार्य और उसके फल के नियम निष्ठुरतापूर्वक कार्य कर रहे हैं और इनके असर से कोई बच नहीं सकता। यदि हम मारते हैं, तो बदले में हम भी मारे जायेंगे। 'आँख के बदले आँख तथा दाँत के बदले दाँत' प्रकृति का कानून है। इसे जानते हुए अपने भार को उचित सीमाओं में रखने के लिये हमें कम से कम पाप करने चाहियें।

जानवरों की हत्या करने तथा माँस का आहार करने से मन और आत्मा में कठोरता आ जाती है। उस प्रभु के यहाँ, जो खुद प्रेम, करुणा और दया की मूर्ति है, ऐसे लोगों को कोई स्थान नहीं मिलता।

नशीले पेय, शराब आदि पीकर उसके प्रभाव में लोग अपने आप को कैसा मूर्ख बना डालते हैं, यह हम सबको मालूम है। वे बिलकुल बेसुध होकर ऐसे काम कर बैठते हैं जिन्हें करने में किसी भी शरीफ़ आदमी को शर्म आयेगी। उनके प्रभाव में कितने परिवार उजड़ जाते हैं, और कितने लोगों को घोर यातना सहनी पड़ती है।

मैंने सन्तमत के दृष्टिकोण से खान-पान के मामले को समझाने के लिये इतना विस्तारपूर्वक लिखा है। यदि हम मालिक से वापस मिलना चाहते हैं और जन्म-मरण की इस सृष्टि से, जिसमें कर्मों का क़ानून कठोरतापूर्वक चल रहा है, मुक्त होना चाहते हैं, तो हमें समस्त मांस, मछली, मुर्गी, उर्वर तथा अनुर्वर अण्डे तथा तमाम नशीली चीज़ों से दूर रहना होगा।

सन्तों के उपदेशों को समझने की कोशिश करें, और हर प्रकार से अपने को सन्तुष्ट कर लें। सन्तमत वह मार्ग है जिसकी रचना हर एक मनुष्य के अन्दर मालिक ने इसलिये की है कि वह उनके पास वापस जा सके।

सारांश यह है : अपनी सहायता के लिये हमें सदा एक जीवित शिक्षक या मार्गदर्शक की आवश्यकता होती है। ज्ञान, विज्ञान की किसी भी शाखा की शिक्षा प्राप्त करने के लिये जीवित शिक्षक और जीवित प्रोफ़ेसर की ज़रूरत पड़ती है। चिकित्सा विज्ञान में भी पिछले ज़माने के विद्वानों की पुस्तकें पढ़कर ही कोई व्यक्ति डाक्टर नहीं बन सकता। गुज़रे हुए इंजीनियर के द्वारा लिखी किताबें पढ़कर कोई व्यक्ति मकान नहीं बना सकता। किसी गुज़रे हुए रसोइये द्वारा लिखित पाक-शास्त्र की पुस्तक पढ़कर कोई अपनी भूख नहीं मिटा सकता। हमें जीवित डाक्टर, जीवित इंजीनियर, जीवित रसोइया तथा जीवित शिक्षक चाहिये। जो मर चुके हैं, वे चाहे कितने ही महान क्यों न रहे हों, अब वे हमारी सहायता नहीं कर सकते। इसी तरह हमें एक जीते-जागते गुरु, एक जीवित सन्त की आवश्यकता है, जो हमें निजधाम का मार्ग बता सके, और यहाँ तथा आन्तरिक मार्ग में हमारा मार्ग-दर्शन कर सके। यह तर्क-संगत बात है। सावधानी पूर्वक इस पर विचार करें, और देखें कि यह ठीक है या नहीं। मैं यह नहीं चाहता कि हर प्रकार से संतुष्ट हुए बिना आप किसी बात को स्वीकार करें। इस पथ पर खान-पान के नियम बहुत कठोर हैं, और इनमें कोई छूट

नहीं दी जा सकती। जिस अनमोल वस्तु को हम पाना चाहते हैं उस के लिये सब्ज़ियों तथा फलों पर निर्भर रहना और शराब आदि को छोड़ना कठिन नहीं है। परमात्मा की प्राप्ति के लिये यह कोई बहुत बड़ा त्याग नहीं है। सांसारिक पदार्थों और सफलताओं को पाने के लिये तो हम कई कीमती चीज़ों को त्यागने के लिये तैयार हो जाते हैं। अपनी आत्मा की भलाई के लिये भी कुछ बलिदान क्यों न करें ?

मेरा यह पत्र उन सबको पढ़ने के लिये दिया जा सकता है, जिन के मन में जीवित सतगुरु की ज़रूरत तथा मांसाहार और मदिरा-पान के सम्बन्ध में सन्देह हैं।
